गायत्री-रहस्यम्
अर्थात्
गायत्रीपञ्चाङ्गम्

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स • वाराणसी

,शिव'ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक–१६

गायत्री-रहस्यम्

'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्या-सहितम्

(गायत्री-पूजापद्धति-गायत्री-तन्त्र-गायत्री-पञ्चाङ्ग-
गायत्री-सिद्धि-गायत्री-उपासनोपेतम्)

•

लेखक तथा सम्पादक
व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-
आचार्य पण्डित श्री शिवदत्तमिश्र शास्त्री
शिव-साहित्य संस्थान, वाराणसी

•

प्रकाशक
ठाकुर प्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर
राजादरवाजा; वाराणसी–२२१००१

पंचम संस्करण] सन् १९८४ ई० [मूल्य २०.००

'Shiva' Gr anthamala : Granthank 16

The
GAYATRI RAHASYAM

OR

Gayatri Puza Paddhati, Gayatritantra, Gayatri

Panchanga, Gayatrisiddhi and

Gayatriupasana

[With the 'SHIVADATTI' Hindi Commentary]

•

By

Acharya Pt. Shri SHIVADUTTA Mishra Shastri
VYAKARNACHARYA, SAHITYAVARIDHI
SHIVA SAHITYA SANSTAN VARANASI-221001

•

Published By

THAKUR PRASAD & SONS BOOK SELLER

Raja Darwaja, Varansi-221001

fiFth Edition] 1984 [Rs. 20/-

dublisheres :

THAKUR PRASAD & SONS BOOK SELLER

Raja Darwaja, Varanasi-221001

Phone. 64650

Fifth Edition 1984

Rs. 20/-

Printer :

Urmila Priting Press

Mirapur Basahi, Varanasi

प्रस्तुत पंचम संस्करण

गायत्री-रहस्य का यह पंचम संस्करण पाठकों के सामने प्रस्तुत करने में हमें हार्दिक प्रसन्नता होती है। प्रस्तुत पुस्तक के द्वारा ही सुप्रसिद्ध कर्मकाण्डियों ने कितने ही गायत्री-पुरश्चरण जपात्मक एवं हवनात्मक वाराणसी, मध्यप्रदेश और मथुरा आदि सुप्रसिद्ध तीर्थ-स्थानों में सम्पन्न किये हैं। इसकी अत्यधिक उपयोगिता ही इतने अल्प समय में पंचम संस्करण करने में प्रवृत्त हुई है। इस संस्करण में आवश्यक संशोधन एवं परिवर्धन भी किया गया है। फिर भी, कहीं कुछ त्रुटि रह गयी हो, तो पाठकगण कृपया सूचित करें, मैं उसका अग्रिम संस्करण में सुधार कर दूँगा।

आशा है, पूर्व संस्करण की भाँति प्रस्तुत संस्करण का भी विद्वत्समाज में समुचित समादर होगा।

–शिवदत्त मिश्र शास्त्री
सी. के. ५/२६ ए.
भिखारीदास लेन, वाराणसी–१

गंगादशहरा
८ जून, १९८४ ई०
वाराणसी–१

प्राक्कथन

गायत्री की महत्ता

'न गायत्र्याः परं मन्त्रम्' तथा 'सर्वेषामेव वेदानां गुह्योपनिषदां तथा। सारभूता तु गायत्री निर्गता ब्रह्मणो मुखात् ॥' [छन्दोगपरिशिष्ट] अथवा 'गायत्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः।' से सिद्ध है कि वैदिक मन्त्रों में गायत्री मन्त्र का सर्वोच्च स्थान है। 'वेदनां माताऽमृतस्य नाभिः' 'गायत्री छन्दसां माता,' 'गायत्री सर्वाणि सवनानि वहति' इत्यादि वेदोक्त वाक्यों से गायत्री को वेदमाता कहा गया है। याज्ञवल्क्यस्मृति में तो यहाँ तक कहा गया है कि 'गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी। गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम् ॥' [२, ८५] इसी तरह भगवद्गीता में भगवान् स्पष्ट ही कहे हैं कि, 'गायत्री छन्दसामहम्' [१०, ३५] अर्थात् वेदों मे मैं गायत्री हूँ।

ब्रह्मयज्ञ में दस बार गायत्री जप लेने से ही वेदाधिकार प्राप्त हो जाता है जिससे उपनयन संस्कार सम्पन्न होता है। ब्रह्महत्या आदि के प्रायश्चित्त में भी गायत्री जप की ही प्रधानता सिद्ध है। अन्य किसी मन्त्रों की इतनी महिमा नहीं। यह कहना भी अत्युक्ति नहीं होगी कि यदि मातृवत् रक्षा करने वाली कोई देवता है तो गायत्री ही।

'वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः' के अनुसार चारों वर्णों में ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसका प्रधान कारण गायत्री की उपासना ही है। ब्राह्मण को प्रतिदिन नियमतः गायत्री का जप अवश्य करना चाहिए। क्योंकि, 'जपेनैव तु संसिद्धयेद् ब्राह्मणो नाऽत्र संशयः। कुर्यादन्यन्न वा कुर्यात् मैत्रो ब्राह्मण उच्यते ॥' कहा गया है।

पूर्वकाल में जितने भी ऋषि-महर्षि हुए हैं वे गायत्री के बल से ही अतुल तेजस्वी एवं प्रबल प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं। महर्षि विश्वामित्र ने महर्षि वशिष्ठ में अलौकिक ब्रह्मबल को देखकर 'धिग्बलं क्षत्रियबलं बलं ब्रह्मबलं स्मृतम्।' मानकर गायत्री की उपासना करके ही ब्रह्मबल को प्राप्त किया था, यह सर्वविदित है। 'हस्तत्राणपदा देवा पततां नरकार्णवे। तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं ब्रह्मणोऽनुदये शुचिः॥' 'गायत्रीनिरतं हव्य-कव्येषु विनियोजयेत्। तस्मिन्न लिप्यते पापमबिन्दुरिव पुष्करे॥' 'वेदाः साङ्गास्तु चत्वारोऽधीताः सर्वेऽथवाङ्मयाः। गायत्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः॥' 'गायत्रीमात्रसन्तुष्टः श्रेयान् विप्रः सुयन्त्रितः। नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी॥' 'सर्वेषामेव वेदानां गुह्योपनिषदां तथा। सारभूता तु गायत्री निर्गता ब्रह्मणो मुखात्॥' आदि वचन कहकर गायत्री को सभी वेदों तथा उपनिषदों का सारभूत माना गया है। क्योंकि ब्रह्मा के मुख से इसका प्रादुर्भाव है।

कूर्मपुराण के अनुसार 'गायत्री चैव वेदांश्च तुलया समतोलयत्। वेदा एकत्र साङ्गास्तु गायत्री चैकतः स्मृता॥' अर्थात् गायत्री और सांगवेद दोनों को तराजू से तौलने पर गायत्री की ही श्रेष्ठता सिद्ध है।

गायत्री जप-महिमा

गायत्री जप-फल के सम्बन्ध में—'गायत्री जपकृद्भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते।' [पाराशर स्मृति], 'सर्वपापानि नश्यन्ति गायत्रीजपतो नृपः।' [भविष्य पुराण], 'ऐहिकाऽऽमुष्मिकं सर्वं गायत्रीजपनो भवेत्।' [अग्निपुराण], 'ब्रह्महत्यादि पापानि गुरूणि च लघूनि च। नाशयत्यचिरेणैव गायत्रीजापको द्विजः॥' [पद्मपुराण] इत्यादि स्मृति एवं पुराण-वचनों के अनुसार गायत्री जप करने वाला द्विज सभी पापों से यहाँ तक कि ब्रह्महत्या आदि जघन्य पापों से भी छूट जाता है। गायत्री-जप से मनुष्य का इहलोक तथा परलोक दोनों लोक सुखमय व्यतीत होता है, यह निर्विवाद सिद्ध है। गायत्री के सम्बन्ध में जितना भी लिखा जाय वह थोड़ा है और इसका विस्तृत वर्णन वेद, पुराण तथा स्मृति ग्रन्थों में विद्यमान है।

गायत्री छन्द होने के कारण इसका नाम 'गायत्री' है। ब्रह्ममुख से निर्गत होने के कारण इसको 'ब्रह्म-गायत्री भी कहते हैं। इसमें चौबीस अक्षर होते हैं। सविता–प्रकाश (सूर्य) तथा जगत्स्रष्टा परब्रह्म परमात्मा से इसका सम्बन्ध होने से 'सविता' नाम से भी विख्यात है।

ऋग्वेद [३, ६२, १०,], सामवेद [१३, ३, ३] तथा यजुर्वेद [३।३५, ३०।२ एवं ३६, ३] इन तीनों वेदों में गायत्री का उल्लेख है, एतदर्थ इसका और भी अधिक महत्त्व है। मन्त्र इस प्रकार है—

गायत्री मन्त्र

ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।

गायत्री मन्त्र का अर्थ

पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्ग पर्यन्त जो सविता (प्रकाशस्वरूप सूर्य) सम्पूर्ण श्रुतियों में प्रसिद्ध है वह प्रकाशमान विश्व-स्रष्टा परमात्मा हमारी बुद्धि को सत्कार्य में प्रेरित करे।

गायत्री-चमत्कार

गायत्री-चमत्कार के सम्बन्ध में एक किंवदन्ती सुनी जाती है, जो इस प्रकार है :

इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख की इच्छा से, बहुत दिनों से एक ब्राह्मण गायत्री की उपासना कर रहा था। उसने शीघ्र फलदायक क्षुद्र योनि (भूत प्रेत की उपासना में रत एक ब्राह्मण को देखकर उसने लक्ष्मी-प्राप्ति स्वरूप सिद्धि को जानकर अपने पूर्वजन्म के पाप के उदय होने से गायत्री का परित्याग कर दीक्षा देने के लिए कहा। उस ब्राह्मण ने उसको भली-भाँति समझाया कि 'गायत्री मन्त्र से बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है। तात्कालिक सिद्धिप्रद इष्ट की उपासना है। अतः तुम इसके चक्कर में न पड़ो,' परन्तु पापग्रह के उदय होने से उसकी अच्छी बात भी उस ब्राह्मण ने नहीं मानी और दीक्षा लेकर इष्ट को सिद्ध कर ही लिया।

तदनन्तर प्रसन्न होकर इष्ट ने ब्राह्मण से वर माँगने को कहा। उसको अपने पीछे स्थित देखकर ब्राह्मण ने अपने सम्मुख आने के लिए विशेष आग्रह किया। परन्तु वह ब्राह्मण के सम्मुख नहीं आया और कहा—'तुम्हारे पूर्व में किये हुए गायत्री जप के कारण उस तेज के सम्मुख मैं आने में बिलकुल असमर्थ हूँ। यदि आऊँगा तो मैं भस्म हो जाऊँगा। तदर्थं तुम अपने पृष्ठ भाग में स्थित मुझसे वर माँगो।' इस पर ब्राह्मण ने विचार किया कि गायत्री के तेज के सामने जब यह मेरा इष्ट उपस्थित नहीं हो सकता, तो इसकी उपासना से क्या लाभ !

इसके पश्चात् तात्कालिक फल देने वाले इष्ट की उपासना का परित्याग कर अलौकिक सुख-शान्ति देनेवाली गायत्री की ही उपासना करने लगा। फल-स्वरूप गायत्री की ही आराधना से वह ब्राह्मण इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों सुखों को प्राप्त कर, गायत्री का साक्षात्कार किया और अन्त में परब्रह्म पद में लीन हुआ।

वस्तुत: गायत्री से बढ़कर कोई देवता नहीं है तथा इसके माहात्म्य से बढ़कर अन्य किसी देवता का प्रबल माहात्म्य भी नहीं है।

ग्रन्थ निर्माण-प्रवृत्ति

गायत्री की कोई ऐसी पुस्तक अब तक प्रकाशित नहीं थी जिसमें गायत्री-सम्बन्धीं सभी विषय हों और वह सर्वथा विशुद्ध एवं हिन्दी टीका के साथ हो। इस कमी को देखकर तथा नित्य आस्तिक जनता की माँग का अनुभव कर संस्कृत-हिन्दी साहित्य के ख्याति-प्राप्त प्रकाशक **बाबू ठाकुर प्रसादजी गुप्त बुक्सेलर** ने मुझसे कई बार साग्रह निवेदन किया कि 'पण्डितजी, गायत्री की ऐसी कोई पुस्तक दीजिए जिसमें नित्य-प्रति उपयोग में आनेवाले गायत्री-सम्बन्धी सभी विषय हों, और साधारण अल्पज्ञ-जनता भी लाभ उठा सके।' वस्तुतः बाबू साहब की सत्प्रेरणा का ही फल है कि प्रस्तुत पुस्तक आपके हाथों में है। इसमें गायत्री-पूजा-पद्धति, गायत्री-पुरश्चरण-विवेचन, गायत्रीकल्प, गायत्री पंचांग, गायत्रीसहस्रनाम, सहस्रनामावली, गायत्र्युपनिषद्, गायत्रीतत्त्व, गायत्रीहृदय, गायत्रीस्तोत्र, गायत्रीस्तवराज, गायत्रीमन्त्र-संग्रह, गायत्रीतन्त्र, गायत्री-नीराजन आदि गायत्री-सम्बन्धी सभी विषय संग्रहीत हैं।

आभार

इसकी सुन्दर छपाई-सफाई आदि कार्य के लिए 'ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर, राजादरवाजा, वाराणसी' के अधिकारी वर्ग विशेष धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन कर असंख्य गायत्री-उपासकों का बहुत बड़ा उपकार किया है। इसके सम्पादन में जिन विद्वानों और सन्तों ने मुझे में सन्मार्ग का पथ-प्रदर्शन किया है उनका मैं विशेष ऋणी हूँ।

क्षमा-याचना

इसका संशोधन-सम्पादन तथा अनुवाद कार्य भी मैंने बड़ी सावधानी के साथ किया है, फिर भी मानव-दोष से सम्भव त्रुटियों के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ और कृपालु पाठकों से नम्र निवेदन है कि इसमें जहाँ-कहीं किसी प्रकार की भी त्रुटि रह गयी हो, तो उसे सूचित करें, जिसे मैं अग्रिम संस्करण में उसका सुधार करा सकूँ।

शिव-साहित्य-संस्थान — शिवदत्त मिश्र शास्त्री
९ जून, १९८४ — सी. के ५/२६ ए.
वाराणसी-१ — भिखारीदास लेन, वाराणसी-१

गायत्रीतत्त्व-विमर्श

अनन्त-श्रीविभूषित ऊर्ध्वाम्नाय, श्रीकाशी-सुमेरु-पीठाधीश्वर

जगद्गुरु शङ्कराचार्य

स्वामी श्री शङ्करानन्द सरस्वती जी महाराज

संस्कृत वाङ्मय में गायत्री मन्त्र की महिमा का वर्णन वेद, पुराण एवं इतिहास आदि ग्रन्थों में सर्वत्र उपलब्ध होता है। **'गायत्री वा इदं सर्वम्'** अर्थात् समस्त विश्व-प्रपंच गायत्री ही है। 'गायत्र्यास्तु परं नास्ति' गायत्री से पर अर्थात् उत्कृष्ट या व्यापक कोई दूसरा तत्त्व नहीं है। अद्वैतवाद की दृष्टि से गायत्री परब्रह्मरूप ही है। गायत्री चतुष्पदा है। **'पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।'** अर्थात् परमात्मा के एक अंश में समस्त विश्व प्रपंच स्थित है। वह स्वयं अपने अमृत प्रकाशस्वरूप में विद्यमान है। इन सब बातों पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श भगवान् भाष्यकार आद्यशंकराचार्य ने **'ज्योतिश्चरणाभिधानात्'** वेदान्तसूत्र के इस अधिकरण में विस्तृत रूप से किया है।

गायत्री मन्त्र के विषय में भगवान् आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र ने गीता के दशम अध्याय के पैंतीसवें श्लोक में स्पष्ट रूप से घोषित किया है कि **'गायत्री छन्दसामहम्'** अर्थात् वैदिक मन्त्रों में गायत्री मैं ही हूँ। सन्ध्या की पुस्तकों में **'तुरीस्य विमलऋषिः, परमात्मा देवता, गायत्रीच्छन्दः गायत्र्युपस्थाने विनियोगः।'** इस विनियोग में भी गायत्री मन्त्र का परमात्मा देवता ही बतलाया गया है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से निःसंकोच हम कह सकते हैं कि गायत्री मन्त्र का प्रतिपाद्य अर्थ सजातीय-विजातीय स्वगत भेदशून्य परब्रह्मतत्त्व ही है। गायत्री मन्त्र के अर्थ पर भी विचार करें, तो उपर्युक्त तथ्य स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाता है। "हम लोगों की बुद्धि को प्रेरित करने वाला, विश्व प्रपंच के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय का कारणीभूत सविता देव के भजनीय तेज का हम ध्यान करते हैं।

अर्थात् अन्तर्यामी परमात्मा, जो प्रकाशस्वरूप है, उसकी उपासना या ध्यान के द्वारा उस स्वयं प्रकाश परमतत्त्व को प्राप्त करना इस मन्त्र का लक्ष्य है। संक्षिप्त में यही गायत्री मन्त्र का अभिप्राय है। इस मन्त्र के साथ सम्बद्ध जो तीन व्याहृतियाँ हैं, **'सैषा चतुष्पदा गायत्री'** इस दृष्टि के आधार पर कल्पित लोकत्रय इस मन्त्र के प्रतिपाद्य परमतत्त्व में अध्यस्त हैं। सवितृस्वरूप के ध्यान के द्वारा आत्मस्वरूप के प्रकाशित होने पर समस्त विश्व प्रपंच बाधित हो जाता है। अतः गायत्री का अवलम्बन कर जिज्ञासु (साधक) भेद निरसनपूर्वक कैवल्य प्राप्त कर सकता है।

पण्डित **श्रीशिवदत्त मिश्र जी** द्वारा रचित प्रस्तुत गायत्री-रहस्य, उनके उन बहुचर्चित एवं बहुप्रशंसित ग्रन्थ-रत्नों में श्लाघ्य परम्परा में है, जिनके अन्तर्गत ग्रहशान्ति-पद्धति, शिव-रहस्य, काली-रहस्य, दुर्गार्चन-पद्धति, हनुमद्-रहस्य, गायत्री-तन्त्र, बगलामुखी-रहस्य, श्रीराम-रहस्य, बृहत्स्तोत्र-रत्नाकर एवं वांछाकल्पता आदि शताधिक ग्रन्थ विद्वत्समुदाय में प्रतिष्ठा एवं सत्प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं।

यह गायत्री-रहस्य अपने में सर्वांग परिपूर्ण है। इसमें गायत्री-पूजा-पद्धति, गायत्री-पुरश्चरण-विवेचन, गायत्रीकल्प, गायत्री-पंचांग, गायत्री सहस्रनाम, गायत्री-सहस्र-नामावली, गायत्र्युपनिषद्, गायत्री-तत्त्व, गायत्री-हृदय, गायत्री-स्तोत्र, गायत्रीस्तवराज, गायत्री मन्त्र-संग्रह, गायत्रीतन्त्र एवं गायत्री नीराजन आदि अनेक विषय बहुत ही प्रामाणिक और महत्त्वपूर्ण हैं। हिन्दी टीका के साथ गायत्री सम्बन्धी इतना बड़ा संग्रह एकत्र अब तक कहीं से प्रकाशित नहीं था। पुस्तक की सर्वाधिक उपयोगिता तो इसी से सिद्ध है कि इतने कम समय में ही इसका पंचम संस्करण प्रकाशित हो रहा है।

श्री मिश्रजी के इस अथक प्रयास के लिए मैं हार्दिक शुभाशीर्वाद देता हूँ। और हम समस्त भारतीय वैदिक सनातन धर्मावलम्बी आस्तिक जनता से अनुरोध करते हैं कि प्रस्तुत 'गायत्री-रहस्य' नामक ग्रन्थ को अपनाकर उसमें वर्णित पद्धति के द्वारा अपना कल्याण करें।

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी
चैत्र कृष्ण १२, २०३८

शङ्करानन्द सरस्वती

(जगद्गुरु शङ्कराचार्य)

भूतपूर्व काशिक-राजकीय-संस्कृत महाविद्यालयाध्यक्ष, पद्मविभूषण,

संस्कृत-विद्यावारिधि, महामहोपाध्याय

डॉ० गोपीनाथ कविराज

एम० ए०, डी लिट्, योगिराज की

शुभ-सम्मति

परम श्रद्धास्पद पण्डित **श्री शिवदत्त मिश्रजी शास्त्री** रचित हिन्दी टीका सहित 'गायत्री-रहस्य' नामक ग्रन्थ मैंने आद्योपान्त देखा। यह रहस्य-ग्रन्थ विभिन्न प्रामाणिक निबन्धों का संकलन है। इसमें क्रमशः प्रारम्भ में गायत्री-पुरश्चरण-विवेचन, गायत्रीकल्प, गायत्री-पंचांग, गायत्रीसहस्रनामावली, गायत्री-उपनिषद् प्रभृति विषयों का संग्रह है। इसके एक प्रकरण में 'गायत्री मन्त्र-संग्रह' भी दिया गया है जिसमें ६१ देवी-देवताओं के गायत्री मन्त्रों का संग्रह है। यह ग्रन्थ भाषा टीका के साथ लिखा गया है, जिससे सर्व-साधारण साधकों को भी विशेष सुविधा प्रदान कर सकेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

"गायत्री ब्रह्मविद्या है, जिसमें समग्र वैदिक-विज्ञान के सार का संग्रह है। गायत्री छन्द से ब्राह्मणों की सृष्टि होती है, यह प्रसिद्धि है परन्तु छन्दस् का स्वरूप क्या है? और छन्दस् से सृष्टि कैसे होती है तथा ब्रह्मविद्या रूपा गायत्री का स्वरूप क्या है? इस तरह की कुछ विज्ञान-विषयक आलोचनाएँ भी इसमें तत्त्व-जिज्ञासुओं के लिए अपेक्षित प्रतीत होती हैं। साथ ही गायत्री के व्याख्या-प्रसंग में उसका तत्त्व-विश्लेषण भी होना चाहिए था।"

मैं सर्वतोभावेन श्लाघनीय इस सम्पादन-कार्य के लिए विद्वान् ग्रन्थकार महोदय को साधुवाद करता हूँ, और आशा करता हूँ कि लेखक महोदय इसके अग्रिम संस्करण में गायत्री के सम्बन्ध में अन्यान्य आवश्यक विषयों का भी सन्निवेश करेंगे। प्रस्तुत स्वरूप में भी ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। इससे गायत्री-स्नेही साधकों को विशेष लाभ होगा, ऐसी आशा है।

२ ए., सिगरा,
वाराणसी

—गोपीनाथ कविराज

वाराणसी के सुप्रसिद्ध विद्वान्, अनेक ग्रन्थों के प्रणेता, भूतपूर्व प्रिन्सिपल,
टाउन डिग्री कालेज, बलिया, 'अखिल भारतीय विक्रम परिषद्,
वाराणसी' के संस्थापक, **आचार्य पण्डित श्री सीतारामजी**
चतुर्वेदी एम० ए० (हिन्दी, संस्कृत, पालि, प्राचीन
भारतीय इतिहास तथा संस्कृति), बी० टी०,
एल्–एल्० बी०, साहित्याचार्य की

शुभ-सम्मति

•

आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्त मिश्र शास्त्री द्वारा रचित 'गायत्री-रहस्य अर्थात् गायत्री-पंचांगम्' की इतनी अधिक प्रसिद्धि हुई कि थोड़े ही समयमें इसके पंचम संस्करण की आवश्यकता हो गयी, यही इस ग्रन्थ की महत्ता और लोकप्रियता का सबसे अधिक प्रमाण है। इसमें विद्वान् लेखक ने अत्यन्त परिश्रम के साथ गायत्री-विषयक प्रत्येक पक्ष का विस्तार पूर्वक विवेचन किया है और हिन्दी टीका देकर सब प्रकार के पाठकों, कर्मकाण्डियों, साधकों तथा गायत्री-तत्त्वान्वेषकों के लिए सभी आवश्यक विषयों का समावेश करके इसे और भी अधिक उपादेय बना दिया है।

इस नवीन संस्करण में और भी अनेक विषय बढ़ा दिये गये हैं जिससे इसकी उपयोगिता में और भी अधिक वृद्धि हो गयी है। ऐसे सुन्दर, समुपादेय संकलन-सम्पादन और विवेचन के लिए मैं लेखक महोदय को हृदय से साधुवाद देता हूँ और मुझे विश्वास है कि भारत की धार्मिक जनता इस ग्रन्थ का समुचित स्वागत और समादर करेगी।

६३/४३, उत्तर बेनियां बाग
वाराणसी

–सीताराम चतुर्वेद

गायत्री-पूजन-सामग्री

केशर, चन्दन
रोरी, सिन्दूर
धूपबत्ती, नारा
मौली, रूई
पान, सोपाड़ी
लवंग, इलायची
चावल, ऋतुफल
लाल पुष्प, माला
तुलसी, दूर्वा
कपूर
रुद्राक्षमाला, जपमाली
आसन
पंचपात्र
आचमनी
तष्टा, अर्घा
नारियल
गिरिगोला
हल्दी की बुकनी
गंगाजल
नवग्रह की लकड़ी
हवन के लिए लकड़ी
तिल, जव
कडुवा तेल
पंचमेवा
गायत्री देवी के लिए वस्त्र

आभूषण
अबीर, बुक्का
पंचामृत
बालू
पेड़ा, बतासा
यज्ञोपवीत, वरण-सामग्री
गायत्री की मूर्ति
गायत्री यन्त्र
सुगन्धित द्रव्य (इत्र वगैरह)
सौभाग्य पिटारी
चौकी १
पीढ़ा २
लाल कपड़ा
सफेद कपड़ा
केले का खम्भा
सुतरी
बन्दनवार
दियासलाई
कलश, पंचरत्न
पंचपल्लव
सप्तमृत्तिका
सर्वौषधि
गोमूत्र
गोबर
यज्ञपात्र

इति गायत्री पूजन-सामग्री ।

अनुक्रमणी

विषयाः पृष्ठाङ्काः

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रि-विरचिता

गायत्री-पूजा-पद्धतिः

साधक को चाहिए कि वह पूर्वाभिमुख कुशासन या ऊर्णासन पर बैठ कर,

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

इस मन्त्र से अपने शरीर पर जल छिड़क कर भगवती श्रीगायत्री की मूर्ति के सामने हाथ में जल, अक्षत और पुष्प लेकर संकल्प करे।

ॐ तत्सदद्य मासानां मासोत्तमे मासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुगोत्रोत्पन्नोऽहं समस्ता-ऽरिष्ट-निरसनपूर्वकमाधि-दैविका-ऽऽधिभौतिका-ऽऽध्यात्मिक–त्रिविध–पापतापोपशमनार्थं सकल-कामनासिद्धयर्थं च श्रीसवितादेवताप्रीतये गायत्रीपूजनं करिष्ये।

इस प्रकार संकल्प पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

पश्चात् रक्तपुष्पं गृहीत्वा, गायत्रीदेव्या ध्यानं कुर्यात्—

ध्यानम्

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदा-ऽभयाङ्कुश-कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथार-बिन्दु-युगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, ध्यानं समर्पयामि।

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में लाल फूल लेकर 'मुक्ताविद्रुम॰' श्लोक पढ़कर भगवती गायत्री देवी का ध्यान करे।

आवाहनम्

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रापात्।
स भूमिं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम् ॥

आयाहि वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि ।
गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते ॥

जगन्मयत्वं च तथा ह्यजत्वं लोके प्रसिद्धं तव देवि जाने ।
तथापि मूर्तौ हृदयारविन्दावावाहनं ते जननि प्रकुर्वे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः,आवाहनं समर्पयामि ।

'ॐ सहस्रशीर्षा-' अथवा 'आयाहि वरदे देवि-' श्लोक पढ़कर भगवती गायत्री देवी का आवाहन करे ।

आसनम्

ॐ पुरुष ऽएवेदठं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥

अस्मिन् वरे स्वासनपीठयुक्ते सौवर्णवर्णे कुशकम्बलाढ्ये ।
त्वं तिष्ठ चाऽस्मत्सुमुखी दयार्द्रे यावत् समर्चां तव देवि कुर्वे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए आसन या अभाव में अक्षत चढ़ावे ।

पाद्यम्

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्याऽमृतं दिवि ॥

श्यामाक-दूर्वा-ऽब्ज-पदार्थमिश्रं पाद्यं मया ते पदयोः प्रयुक्तम् ।
मातस्तथैवाशु ममाऽपि नित्यं ते पादयोरस्त्वनिशं निवासः ॥

यद्भक्ति-लेश-सम्पर्कात् परमानन्दसम्भवे ।
भवत्यानन्दसम्प्राप्तिस्तस्यै पाद्यं प्रकल्पये ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पादयोः पाद्यं समर्पयामि ।

इस मन्त्र से भगवती गायत्री देवी के लिए जल चढ़ावे ।

अर्घ्यम्

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने ऽअभि ॥

दर्भाग्र-दूर्वा-तिल-सर्षपाणि प्रक्षिप्य मातः कृतमर्घपात्रम् ।
तस्माच्च ते मूर्ध्नि मया कराभ्यां संदीयते चाऽर्घजलं गृहाण ॥
तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयायुते शीर्ष्णि तवाऽर्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि ।

इससे भगवती गायत्री देवी के लिए अर्घ्य अर्पण करे ।

आचमनम्

ततो विराडजायत विराजो ऽधि पूरुषः ।
स जातो ऽत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥
श्रीसंज्ञकं काल-लवङ्गमिश्रं सुस्वादु तत्तद् द्रवयुक्तशुद्धम् ।
सम्मन्त्रितं वैदिकमन्त्रकैस्तद् गायत्रि देव्याचमनं गृहाण ॥
वेदानामपि वेद्यायै देवानां देवतात्मने ।
मया ह्याचमनं दत्तं गृहाण जगदीश्वरि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, आचमनीयं समर्पयामि

इससे आचमन के लिए जल दे ।

मधुपर्कः

ॐ यन्मधुनो मधव्यं परमꣳ रूपमन्नाद्यम् ।
तेनाऽहं मधुनो मधव्येन परमेण
रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोसानि ॥
कनक-घटित-पात्रे वेदमन्त्रैस्त्वदर्थं
दधि-मधु-घृतभागान् देवि कृत्वा सुमिश्रान् ।
अमृतमयमिदं त्वद्-दृष्टिपातेन कृत्वा
भगवति मधुपर्कं दीयमानं गृहाण ॥
सर्वकालुष्यहीनायै परिपूर्णसुखात्मने ।
मधुपर्कमिदं तुभ्यं देवि दत्तं प्रसीद च ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, मधुपर्कं समर्पयामि ।

इस मन्त्र से गायत्री देवी के लिए मधुपर्क च ावे ।

मधुपर्कान्ते आचमनीयं समर्पयामि भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः।

मधुपर्क के बाद आचमन करावे।

पञ्चामृतस्नानम्

[पयःस्नानम्]

पयः पृथिव्यां पय ऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥
येन क्रियन्ते सकलाः क्रिया वै यज्ञस्य होमादिविधौ प्रयुक्ताः।
तृप्तानि भूतानि तथा भवन्ति स्नानाय तद्दुग्धमहं ददामि॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पयःस्नानं समर्पयामि। पयःस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

इससे गायत्री देवी के लिए दुग्ध-स्नान करावे।

[दधि-स्नानम्]

ॐ दधि क्राव्णोऽकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूँषि तारिषत्॥
स्वच्छं च शुद्धं शशिना समप्रभं
ह्याम्लं च किञ्चिन्मधुरं मनोहरम्।
स्नानाय तुभ्यं दधि देवि! दत्तं
ह्यङ्गी कुरु त्वं परिवारयुक्ता॥
ॐ भूर्भवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, दधिस्नानं समर्पयामि। दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानम्, शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

इससे गायत्री देवी को दही से स्नान करावे।

[घृतस्नानम्]

ॐ घृतेनाञ्जन्सम्पृथोदेवयानान् प्रजानन्त्वाज्ज्यप्येतृ देवान्।
अनुत्वासप्तेप्रदिशः सचन्ताऽंस्वधामस्मै यजमानाय धेहि॥

हव्यानि यस्मात् प्रभवन्ति लोके
निवर्त्यतेऽग्नौ हवनं च येन।
तृप्ताश्च येन द्विजदेवतात्मा
दास्ये घृतं तत्स्नपनाय देवि ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, घृतस्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानं, पश्चात् आचमनीयं च समर्पयामि।

इससे गायत्री देवी को घृतस्नान करावे।

[मधुस्नानम्]

ॐ स्वाहा मरुद्भिः परि श्रीयस्वदिवःसठ्. स्पृशस्पाहि। मधु मधु मधु ॥

पुष्पेभ्य आदाय रसान् समग्रान्
एकीकृतं यन्मधुमक्षिकाभिः।
तत्स्वादु तुभ्यं मधुरं वरेण्यं
स्नानाय दास्ये मधु देवि मातः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, मधुस्नानं समर्पयामि। मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं, तदन्ते आचमनीयं च समर्पयामि।

इससे गायत्री देवी को मधु से स्नान करावे।

[शर्करास्नानम्]

ॐ अपाठ्. रसमद्वयसठ्. सूर्ये सन्तः समाहितम्। अपाठ्. रसस्य यो रसस्तम्वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

अन्नानि मिष्टानि यया भवन्ति
तृप्ति तथा भूतगणा लभन्ते।
तां शर्करां देवि ! शशिप्रभाभां
स्नानाय दत्तां मधुरां गृहाण ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, शर्करास्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं चसमर्पयामि।

इससे गायत्री देवी को शक्कर से स्नान करावे। पश्चात् शुद्धोदकस्नान तथा आचमन करावे।

गन्धोदकस्नानम्

ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्टयै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः।

सौगन्ध्ययुक्तं द्रवद्रव्यजातं घृष्टं च काश्मीरक-कस्तुरीभिः।
गन्धोदकं तुभ्यमिदं प्रदत्तं स्नानार्थमङ्गीकुरु देवि मातः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं च समर्पयामि।

इससे गायत्री देवी के लिए गन्धोदक से स्नान करावे।

उद्वर्तन[1] [उबटन] स्नानम्

ॐ अꣳ. शुना ते अꣳ. शुः पृच्यतां परुषापरुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो ऽअच्युतः॥
तैलं समाकृष्य कृतं तिलेभ्यः
पुष्पाणि निक्षिप्य सुवासितानि।
स्नेहं गृहाण स्नपनाय देवि
स्नेहेन चास्मानवलोकयाशु॥

ॐ भूर्भवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, तैलोद्वर्तनस्नानं समर्पयामि। उद्वर्तनस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदकस्नानम् आचमनीयं च समर्पयामि।

इस मन्त्र से गायत्री देवी को उद्वर्तन स्नान करावे।

पादुकार्पणम्

उपास्य यस्याश्चरणौ सुरेशः स्वर्गस्य लक्ष्मी बुभुजे सुखेन।
भक्त्यैव जन्तुः प्रभवेद्वराढ्यस्ते पादुके त्वं पदयोर्गृहाण॥

---

१. रजनी सहदेवी च शिरीषो लक्ष्मणाऽपि च।
सदा भद्रा कुशाग्राणि उद्वर्तनमिहोच्यते॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, चरणयोः पादुके समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए पादुका अर्पण करे ।

वस्त्रोपवस्त्रम्

ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्मवरूथमासदत्स्वः ।
वासोऽग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व विभावसो ॥
विचित्रवर्णं ह्यु पवस्त्रयुक्तं कौशेयकं चारुनवं मनोहरम् ।
गायत्रि संवीक्ष्य मदीय-शक्तिं वस्त्रं गृहाणाशु मयार्ऽपितं ते ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, उपवस्त्रसहितं वस्त्रं समर्पयामि । वस्त्रोपवस्त्रान्ते आचमनीयं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए साड़ी तथा ओढ़नी चढ़ावे ।

अलङ्कारान्

[कङ्कणम्]

माणिक्य-मुक्ता-मणिखण्डयुक्ते सुवर्णकारेण च संस्कृते ये ।
ते किङ्किणीभिः स्वरिते सुवर्णे मयाऽर्पिते देवि गृहाण कङ्कणे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, हस्तयोः कङ्कणे समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को कंकण (कंगन या कड़ा) अर्पण करे ।

[कर्णभूषणम्]

ययोः शुभान्याखचितानि मातर्माणिक्यखण्डानि सुशोभनानि ।
ताटङ्कयुग्मे-कनकस्य कृत्वा मयाऽर्पिते देवि गृहाण चैते ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, कर्णयोः कुण्डले समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए कान का बाला चढ़ावे ।

[हारः]

मातस्त्वदर्थं मणिमौक्तिकाभिः कृतं मनोज्ञं कलकण्ठभूषणम् ।
मयैव कण्ठे तव देवि चाऽर्पितं ग्रैवेयकं नाम गृहाण भूषणम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, कण्ठे ग्रैवेयकं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए गले का हार चढ़ावे ।

[अङ्गदम्]

हेम्ना कृतं ह्यङ्गदयुग्मकं च मनोहरं सुन्दरचित्रयुक्तम् ।
बाह्वोर्गृहाणाशु मयार्पितं ते मनोज्ञमाभूषण-भूषणोत्तमम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, बाह्वोः अङ्गदे समर्पयामि ।

इससे बाँह का आभूषण (बाजूबन्द) अर्पण करे ।

[अङ्गुलीयम्]

प्रबाल-गोमेदमयैश्च रत्नैः कृतां तथा हेममयां मनोहराम् ।
तस्यां कुरु त्वं मुखवीक्षणं च गृहाण देव्याङ्गुलिमुद्रिकां च ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, करयोरङ्गुलि-मुद्रिकां समर्पयामि ।

इस श्लोक को पढ़कर गायत्री देवी के लिए अँगूठी चढ़ावे ।

[कटिभूषणम्]

काञ्चीं शुभां हाटकनिर्मितां मया त्रैलोक्यमातः कटिभूषणाय ।
दत्तां यथेमां त्वमजे च धत्से ह्युद्धर्तुमस्मान् वह मातृगर्भात् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, कटिदेशे काञ्चीं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए कमर की करधनी चढ़ावे ।

[नूपुरम्]

सुसुन्दरे हारकनिर्मिते द्वे पादाङ्गदे नूपुरनामधेये ।
गृहाण मातः पदयोः प्रदत्तो सुकिङ्किणीभिश्च विराजिते ते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पादयोः नूपुरे समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए पैर का छागल अर्पण करे ।

मुकुटम्

मातस्तवेमं मुकुटं हरिन्मणि-प्रवाल-मुक्तामणिभिर्विराजितम् ।
गारुत्मतैश्चापि मनोहरं कृतं गृहाण मातः शिरसो विभूषणम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, शिरसि मुकुटं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए शिर का मुकुट चढ़ावे ।

गन्धम्

ॐ त्वां गन्धर्वा ऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।
त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ॥
गन्धं सुगन्धं मृगनाभिवासितं तथैव काश्मीरक-चूर्णमिश्रितान् ।
भाले त्वदीये जगदम्ब चाऽर्पितं तथा त्वमङ्गी कुरु वेदगर्भे ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, भाले गन्धं समर्पयामि ।

इस मन्त्र को पढ़कर गायत्री देवी के लिए चन्दन चढ़ावे ।

कुङ्कुमम्

जातीपुष्पसमं रक्तं मुखकान्तिविवर्धकम् ।
कुङ्कुमं रक्तवर्णं ते देवि भाले ददाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, भाले कुङ्कुमं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को कुंकुम (रोरी) चढ़ावे ।

अक्षतान्

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया ऽअधूषत ।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रानविष्ठया योजान्विन्द्र ते हरी ॥
क्षतैर्विहीनान् सितवर्णयुक्तान् तथा सुहव्ये प्रथितान् श्रुतौ च ।
त्वमक्षतान् तानुररीकुरुष्व भाले त्वदीये शुभदेऽर्पयामि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, अक्षतान् समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को अक्षत चढ़ावे ।

पुष्पम्

ॐ ओषधीः प्रतिमोददध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्वा ऽइव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥
पुष्पाणि रक्तानि सिताब्ज-जाती-जपा-करीरप्रभृतीनि देवि ।
गृहाण मातः कुरु सार्द्रदृष्टिं यथा मयाऽऽप्तानि तथार्ऽपितानि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पुष्पाणि समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को पुष्प चढ़ावे ।

पुष्पमालाम्

शुभ्रैश्च पीतैः कुसुमैरनेकैः रक्तैस्तथाऽनेक-सुवर्णयुक्तैः ।
कृतां त्वदर्थं च मया युगाभ्यां गृहाण कण्ठे विनिवेदितां तव ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पुष्पमालां समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को फूल की माला चढ़ावे ।

सिन्दूरम्

ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्यायाहेतिं परिबाधमानाः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान् पुमाठँ सम्परिपातु विश्वतः॥
श्वेतं तथा रक्तमहं गुलालं सौभाग्यलाभाय तथा हरिद्राम् ।
भाले तवाऽम्ब स्वकरेण देवि सिन्दूरबिन्दुं ह्यपि वै ददामि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, सौभाग्य-परिमलद्रव्याणि समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए सौभाग्य द्रव्य तथा सिन्दूर चढ़ावे ।

कज्जलम्

चाम्पेय-कर्पूरक-चन्दनादिकैर्नानाविधैर्गन्धचयैः सुवासितम् ।
नेत्राञ्जनार्थाय हरिन्मणिप्रभं गायत्रि हे स्वीकुरु कज्जलं शुभम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, अक्षिभ्यां कज्जलं समर्पयामि ।

इससे गायत्रीदेवी के लिए काजल अर्पण करे ।

अत्तरम्

मातस्त्वदर्थं तु सुवासितेभ्यः पुष्पेभ्य आकृष्य कृतं मनोहरम् ।
तैलं तवाङ्गेषु विलेपनार्थं लोके ददाम्यत्तरनामधेयम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, अङ्गेषु विलेपनार्थम् अत्तरं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी को अत्तर चढ़ावे ।

धूपम्

दशाङ्गधूपं तव रञ्जनार्थं नाशाय मे विघ्नविधायकानाम् ।
दत्तं मया सौरभचूर्णयुक्तं गृहाण मातस्तव सन्निधौ च ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, धूपं निवेदयामि ।

इससे धूप दिखावे ।

दीपम्

सुप्रकाशो महातेजाः सर्वत्र तिमिरापहः ।
स बाह्याभ्यन्तरज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, दीपं दर्शयामि ।

इससे गायत्री देवी को दीप दिखलावे ।

नैवेद्यं फलं च

ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ।
प्रप्रदातारं तारिषऽऊर्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ।।
सत्पात्रस्थं सुनैवेद्यं विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेशि सानुगायै गृहाण तत् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, नैवेद्यं फलं च निवेदयामि, तदन्ते आचमनीयं च समर्पयामि ।

इससे नैवेद्य तथा फल निवेदन करे । पश्चात् आचमन कराये ।

ताम्बूलम्

कर्पूर-जातीफल-जायकेन ह्येला-लवङ्गेन समन्वितेन ।
मया प्रदत्तं मुखवासनार्थं ताम्बूलमङ्गी कुरु मातरेतत् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, मुखवासार्थं एलालवङ्गादिभिर्युतं ताम्बूलं समर्पयामि ।

इससे भगवती गायत्री देवी के लिए पान का बीड़ा अर्पण करे ।

पूगीफलम्

ॐ याः फलिनीर्या ऽअफलाऽअपुष्पायाश्च पुष्पिणीः ।
बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्वꣳ हसः ॥
भगवति तव भक्तिर्जायतां मानसे मे
जगति तव कृपाया भाजनं स्यां सदाऽहम् ।
इति मम खलु मातः केवला ह्यन्तिमेच्छा
क्रमुकमिदमपि त्वां ह्यर्पये तत्फलाय ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, पूगीफलं समर्पयामि ।

इससे गायत्री देवी के लिए पूगीफल (सोपाड़ी) चढ़ावे ।

दक्षिणाम्

तव जननि जगत्यां विद्यते कार्यजातं
तव चरणकृपातः प्राप्यते सर्वमेतत् ।
भगवति किमकुर्यां नास्ति किञ्चिन्मदीयं
कथय जगति का ते दक्षिणामर्पयामि ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

इससे देवी के लिए दक्षिणा चढ़ावे ।

राजोपचारान्

[छत्रम्]

कनकमयमिदं ते देवि रम्यं सुछत्रं
खचितमपि सुवर्णैः सर्वतो रत्नखण्डैः ।

जयतु जयतु रावैः शब्दितं किङ्किणीनां
शिरसि जननि दत्तां दण्डयुक्तं गृहाण ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, छत्रं समर्पयामि ।
इससे गायत्री देवी के लिए छत्र देवे ।

[चामरे]
श्वेतैः शिरोजैश्चमरीमृगाणां बालैः सुसूक्ष्मैर्मृदुभिः कृते ये ।
ताभ्यां सुवर्णाकृति-दण्डयुग्भ्यां त्वां चामराभ्यां परिवीजयामि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भयवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, चामरे समर्पयामि ।
इससे गायत्री देवी के लिए चँवर देवे ।

[आदर्शः]
देव्यर्पितस्ते मुकुरः सुचारुः
श्वेतस्तथा हाटकदण्डयुक्तः ।
पूर्णेन्दुवत् पूर्णकला समेत-
स्तस्मिन् समालोकय मातरास्यम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, आदर्शं समर्पयामि ।
इससे गायत्री देवी को दर्पण (शीशा) दिखावे ।

तालवृन्तम्
रौप्येण दण्डेन युतेन शब्दैर्युक्तेन वै रौप्यसुकिङ्किणीनाम् ।
सुतालवृत्तेन तवाङ्गकानि मातः सुमन्दं परिवीजयामि ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, तालवृन्तं समर्पयामि ।
इससे गायत्री देवी के लिए ताड़ का पंखा अर्पण करे ।

आरार्तिक्यम्
इदऺ हविः प्रजननं मे ऽअस्तु दशवीरः सर्वगणऺ स्वस्तये ।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि ॥
अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयोरेतऽअस्मासु धत्त ।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगपत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः,आर्तिक्यं समर्पयामि ।
इससे भगवती श्री गायत्री देवी के लिए आरती दिखावे ।

मन्त्र-पुष्पाञ्जलिः

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय श्रवणाय महाराजाय नमः । ॐ स्वस्ति साम्राज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायि स्यात् सार्वभौमः सार्वायुषां तदा परार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया ऽएराडिति । तद-प्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे ॥ आवी-क्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति । ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत् त्रैर्द्यावा भूमिं जनयन् देव एकः ।

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैः स्त्रीक्षणै-
युक्तामिन्दुनिबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदा-ऽभयाङ्कुश-कशाः शुभ्रं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥
जानामि पूजनमहं न हि शास्त्रसिद्धं
शक्तिस्तु ते परिचिता मम सर्वतश्च ।
पुष्पाञ्जलिर्जननि यश्चरणाब्जयोस्ते
संदीयते परिगृहाण विसृज्य दोषान् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

उपर्युक्त मन्त्र से गायत्री देवी के लिए मन्त्र-पुष्पांजलि अर्पण करे ।

प्रदक्षिणाम्

ॐ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना ऽअबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥

पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादि-फलं ददाति ।
तां सर्वपापक्षय-हेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥
यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्रीगायत्रीदेव्यै नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

इससे श्री गायत्री देवी की प्रदक्षिणा करे ।

गायत्री-मन्त्रजपः

ततो यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रम् अष्टोत्तरशतम् अष्टाविंशतिवारं दशवारं वा जपेत् ।

इसके बाद यथाशक्ति —एक सौ आठ, अठाईस तथा दश बार गायत्री का जप करे ।

तत्पश्चात् सामान्यार्घोदकं गृहीत्वा,

गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ! ॥

अनेन यथाशक्ति भगवत्याः श्रीगायत्रीदेव्याः प्रीतये गायत्रीमूलमन्त्रस्य कृतेन जपकर्मणा भगवती श्रीगायत्रीदेवी प्रीयतां न मम । इति जलं भगवत्याः श्रीगायत्रीदेव्या वामकरे समर्प्य, स्तोत्रपाठादिकं कुर्यात् ।

इसके बाद अर्घ्य-जल लेकर 'गुह्यातिगुह्य०' से लेकर 'प्रीयतां न मम' पर्यन्त कवच पढ़कर भगवती श्रीगायत्री देवी को अर्घ्य समर्पण कर, स्तोत्र और आदि का पाठ करे ।

इति व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रि-विरचिता गायत्री-पूजापद्धतिः समाप्ता ।

गायत्री-पूजन-यन्त्रम्
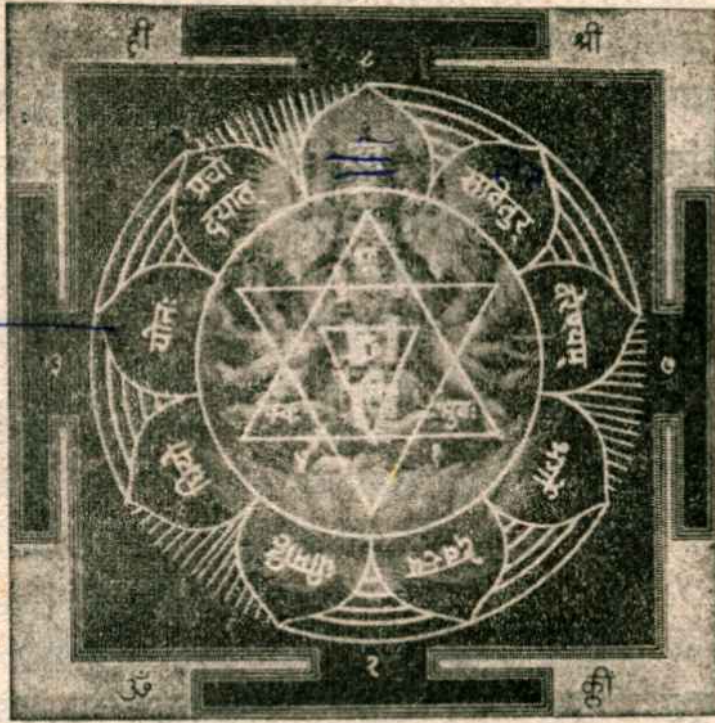
आदौ त्रिकोणं विन्यस्य षट्कोणं तद्बहिर्न्यसेत् ।
वृत्तं चाऽष्टदलं पद्मं तद्बहिश्चतुरस्रकम् ।
चतुर्द्वारं समायुक्तं गायत्रीयन्त्रमीरितम् ।।

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवल-च्छायैर्मुखैस्तीक्षणै-
र्युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थ-वर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदा-ऽभया-ऽङ्कुश-कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथार-बिन्दुयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रि-विरचितं

गायत्री-रहस्यम्

'शिवदत्ती'भाषाटीकोपेतम्

•

गायत्री-पुरश्चरण-विवेचनम्

पितरं सन्तशरणं जयन्तीं मातरं तथा।
मया प्रणम्य गायत्री-रहस्यं प्रविकाश्यते ॥

तत्र पुरश्चरणं नाम मन्त्रफलसिद्ध्यर्थमुपोद्घातत्वेन पूर्वसेवनम् ।

अन्यच्च—

पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च ।
होमं ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते ॥ इति ॥

कुलार्णवे—

पञ्चाङ्गानि महादेव ! जपो होमश्च तर्पणम् ।
अभिषेकश्च विप्राणामाराधनमपीश्वरि ! ॥

मन्त्रफल की सिद्धि के लिए भूमिका-रूप में शास्त्रीय-रूप से कही गयी विधि का अनुष्ठान पुरश्चरण कहा जाता है।

और भी—

नित्य त्रिकाल देवपूजन, जप, तर्पण, होम तथा ब्राह्मण भोजन—इन पाँच विधियों को पुरश्चरण कहते हैं।

कुलार्णव में—

हे महादेवि ! पुरश्चरण के १. जप, २. होम, ३. तर्पण, ४. अभिषेक तथा ५. ब्राह्मण का पूजन—ये पाँच अंग हैं।

पूर्व-पूर्व-दशांशेन पुरश्चरणमुच्यते ॥ इति ॥

पुरश्चरणस्थानानि, विश्वामित्रकल्पे—

पर्वताग्रे नदीतीरे बिल्वमूले जलाशये ।
गोष्ठे देवालयेऽश्वत्थे उद्याने तुलसीवने ॥
पुण्यक्षेत्रे गुरोः पार्श्वे चित्तैकाग्रस्थलेऽपि च ।
पुरश्चरणकृन्मन्त्री सिध्यत्येव न संशयः ॥ इति ॥

पुरश्चरणकर्त्तुः योग्यतासिद्ध्यर्थं देहशुद्धिप्रकारमाह, विश्वामित्रः—

आत्मनः शोधनार्थाय लक्षत्रयं जपेद् बुधः ।
अथवाऽप्यष्टलक्षं तु गायत्रीं श्रुतिचोदिताम् ॥
चतुर्विंशतिलक्षं वा याज्ञवल्क्यमतं यथा ॥ इति ।

जप का दशांश होम, उसका दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश अभिषेक और अभिषेक का दशांश ब्राह्मण भोजन—इनको पुरश्चरण कहते हैं ।

पुरश्चरण के स्थान, विश्वामित्रकल्प में--

पर्वत के ऊपर, नदी का तट, बेल की छाया, तालाब, गोशाला, देवालय (मन्दिर), पीपल का वृक्ष, उद्यान (बगीचा), तुलसीवन, पुण्यक्षेत्र, गुरु के सन्निकट तथा जहाँ स्वभाव से चित्त एकाग्र होता हो--इन उपर्युक्त स्थलों पर मन्त्रफल की सिद्धि के लिए किया गया अनुष्ठान निश्चय ही फलप्रद होता है, इसमें संशय नहीं ।

अब पुरश्चरण-कर्त्ता की योग्यता की सिद्धि के लिए सर्वप्रथम शरीर-शुद्धि आवश्यक है, इस बात को विश्वामित्रकल्प में कहा गया है—

बुद्धिमान् पुरुष अपने शरीर की शुद्धि के लिए वेदोक्त गायत्रीमन्त्र का--कम से कम तीन लाख, या आठ लाख, या चौबीस लाख—जप करे ऐसा याज्ञवल्क्य का मत है ।

अथवा नद्यादितीर्थे सर्वप्रायश्चित्तविधिना षडब्दं त्र्यब्दं सार्धाब्दं वा यथाशक्ति-कृच्छ्रचान्द्रायणादि-सर्वप्रायश्चित्तं कृत्वा पुरश्चरणं कुर्यात् ।

अथाऽन्नशुद्धि-प्रकारः, विश्वामित्रकल्पे--

अयाचितोञ्छ-शुक्लश्च भिक्षावृत्ति-चतुष्टयम् ।
तान्त्रिकैर्वैदिकैश्चैव अन्नशुद्धिः प्रकीर्तिता ॥
अन्नानुसारिकर्माणि बुद्धिः कर्मानुसारतः ।

तत्र तपोयुक्तेन तापसेन क्षत्रिय-वैश्य-शूद्रादीनामन्नं न ग्राह्यम् । 'पललस्पर्शमात्रेण तपो दहति निश्चितम्' इति च धेयम् ।

अथवा नदी आदि के जल में सर्व-प्रायश्चित्त की विधि से छह वर्ष, तीन वर्ष अथवा डेढ़ वर्ष का शक्ति के अनुसार कृच्छ्रचान्द्रायणादि सभी प्रायश्चित्त करके पुरश्चरण आरम्भ करना चाहिए।

अब भोजन-शुद्धि का प्रकार जैसा विश्वामित्रकल्प में कहा है, उसे कहते हैं--

शुद्ध अन्न का भोजन करना चाहिए, वह शुद्ध अन्न चार प्रकार का होता है। १. अयाचित (बिना माँगा हुआ), २. उञ्छ (खेत में गिरे हुए दाने का कण-कण रूप से संग्रह), ३ शुक्ल (अर्थात् अपने परिश्रम की गाढ़ी कमाई से प्राप्त), ४. भिक्षा। इस प्रकार प्राप्त हुए अन्न की शुद्धि तान्त्रिक तथा वैदिक विधियों के अनुसार करनी चाहिए। क्योंकि अन्न के अनुसार ही मनुष्य कर्म करता है, और उस कर्म के द्वारा ही बुद्धि का निर्माण होता है।

उसमें भी विशेषता यह है कि--

तपस्वी ब्राह्मण को चाहिए कि ब्राह्मण के अतिरिक्त क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्रों का अन्न भिक्षा में ग्रहण न करे। विशेष क्या ? 'पुरश्चरण में मांस के स्पर्शमात्र से ही तपस्या नष्ट हो जाती है।'

भिक्षान्नं शुद्धमानीय कृत्वा भागचतुष्टयम् ।
एकभागो द्विजार्थाय गोग्रासाय द्वितीयकः ॥
आतिथ्याय तृतीयश्च तुरीयस्तु स्वकीयकः ॥ इति ।

ग्रासप्रमाणं तत्संख्या च तत्रैव--

कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु ग्रासमानं विधीयते ।
द्व्यष्टौ ग्रासा गृहस्थस्य वानप्रस्थस्तदर्धकम् ॥
ब्रह्मचारी यथेष्टं च गोमूत्रविधिपूर्वकम् ।
प्रोक्षणं नववारं स्यात् षड्वारं च त्रिवारकम् ॥
अच्छिद्रं च करं कृत्वा सावित्रीं च तदित्यृचम् ।
मन्त्रमुच्चार्य मनसा उक्तमार्गेण प्रोक्षयेत् ॥ इति ।

अब उस अन्न के शुद्धि का विशेष प्रकार कहते हैं--

भिक्षा में प्राप्त हुए शुद्ध अन्न का चार भाग करना चाहिए। प्रथम भाग ब्राह्मण का, द्वितीय भाग गोग्रास का और तृतीय भाग अतिथि का। इस प्रकार का भाग-निर्माण कर शेष चौथे का भोजन साधक स्वयं करे।

अब इस प्रकार निर्मित शुद्ध भोजन के ग्रास का प्रमाण तथा उसकी संख्या विश्वामित्रकल्प के अनुसार कहते हैं--

मुरगी के अण्डे के समान भोजन का ग्रास-मान होना चाहिए। पुरश्चरण में स्थित तपस्वी गृहस्थ ब्राह्मण को सोलह ग्रास, वानप्रस्थ को आठ ग्रास और ब्रह्मचारी को यथेष्ट (इच्छानुसार) भोजन का विधान है। परन्तु उस भोजन का गोमूत्र से क्रमशः नव, छह तथा तीन बार प्रोक्षण करना चाहिए। सभी अँगुलियों को सटा कर, 'ॐ तत्सत्' इस मन्त्र का उच्चारण कर, अन्न का प्रोक्षण करना चाहिए।

आहारनियमस्तत्रैव—

अशक्तो वाऽपि शक्तो वा आहारे नियते कृते ।
षण्मासे तस्य सिद्धिः स्याद् गुरुभक्तिरतः सदा ॥
एकाहं पञ्चगव्याशी ह्येकाहं मारुताशनः ।
एकाहं ब्राह्मणान्नाशी गायत्रीजपकर्मणि ॥ इति ।

मतान्तरे—

स्नात्वा तु शतगायत्र्या शतमन्तर्जले जपेत् ।
शतेनापस्ततः पीत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
चान्द्रायणादिकृच्छ्रस्य फलं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ इति ।

गायत्री-पुरश्चरण में आहार-नियम कहते हैं—

गायत्री-पुरश्चरण कर्म में नियुक्त तपस्वी चाहे समर्थ हो अथवा असमर्थ, यदि वह आहार का नियम कर गुरुभक्ति में लगा हो तो छह मास में ही उसको सिद्धि प्राप्त हो सकती है, परन्तु गायत्रीजप-रूप कर्म में एक दिन पंचगव्य पीकर, दूसरे दिन केवल वायु के आहार पर और तीसरे दिन ब्राह्मण का अन्न खाकर उसे गायत्री-पुरश्चरण करना चाहिए ।

गायत्री-पुरश्चरण कर्म में दूसरों का मत कहते हैं—

स्नान करते समय एक-सौ गायत्री का जप करे । इसी प्रकार जल के भीतर आचमन करता हुआ एक सौ गायत्री का जप करे (प्रत्येक गायत्री पढ़कर एक-एक आचमन) । इस प्रकार के जप से चान्द्रायण तथा कृच्छ्र सान्तपन का फल निश्चित प्राप्त होता है ।

यदा लोकैषणा त्यक्तुं न शक्यते तदर्थोऽयं विधिरुच्यते ।

क्षीराहारी फलाशी वा शाकाशी हविष्यभुक् ॥

भिक्षाशी वा जपेद्यत्तत् कृच्छ्रचान्द्रसमं भवेत् ॥ इति ।

वर्ज्याहारस्तत्रैव—

लवणं क्षारमाम्लं च गृञ्जनादि-निषेधितम् ।

ताम्बूलं च द्विभुक्तिं च दुष्टवासं प्रमत्तताम् ॥

श्रुति-स्मृतिविरोधं च जपं रात्रौ विवर्जयेत् ।

श्राद्धादेरनुरोधेन जपं यदि त्यजेन्नरः ॥

स भवेद् देवताद्रोही पितॄन् सप्त नयेदधः ॥ इति ।

ध्यान रहे, जब लौकिक वस्तुओं का त्याग सम्भव न हो, तो ऐसा करने से अवश्य ही लोकैषणा छूट जाती है ।

मनुष्य दूध पीकर, फल, शाक, हविष्यान्न (यव आदि) तथा भिक्षान्न का भोजन कर यदि गायत्री का जप करे, तो वह निश्चित ही कृच्छ्रचान्द्रायणादि व्रत के समान फल प्राप्त करता है ।

गायत्री-पुरश्चरणमें स्थित तपस्वी के लिए निषिद्ध आहार कहते हैं—

नमक, खारा, खट्टा और गाजर आदि निषिद्ध हैं । ताम्बूल, दो बार भोजन, दुष्ट मनुष्य का सहवास, पागलपन, श्रुति तथा स्मृतियों का विरोध और रात्रि में जप का निषेध है । यदि श्राद्धादि के कारण पुरश्चरणकर्ता जप का परित्याग करता है तो वह देवद्रोही होता है, और अपने सात पीढ़ी को नरक में ले जाता है ।

नित्याऽनुष्ठेयधर्मास्तत्रैव—

भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनचर्यास्तथैव च ।
नित्यं त्रिषवणं स्नानं क्षुद्रकर्म विवर्जनम् ॥
नित्यपूजा नित्यदानमानन्द-स्तुति-कीर्तनम् ।
नैमित्तिकार्चनं चैव विश्वासो गुरु-देवयोः ॥
जपनिष्ठा द्वादशैते धर्माः स्युर्मन्त्रसिद्धिदाः ।
नित्यं सूर्यमुपस्थाय तस्य चाऽभिमुखो जपेत् ॥
देवताप्रतिमादौ वा वह्नौ वाऽभ्यर्च्य तन्मुखः ।
स्नान-पूजा-जप-ध्यान-होम-तर्पण-तत्परः ।
निष्कामो देवतायां च सर्वकर्म-निवेदकः ॥
एवमादींश्च नियमान् पुरश्चरणकृच्चरेत् ॥ इति ।

गायत्री-पुरश्चरण में नित्य लगे हुए तपस्वी का धर्मानुष्ठान कहते हैं—

भूशय्या (भूमि पर सोना), ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन, मौन-व्रत और त्रिकाल स्नान, क्षुद्र कर्मों का त्याग, नित्य पूजा, नित्य दान, आनन्दपूर्वक भगवान् की स्तुति-कीर्तन, नैमित्तिक अर्चन, गुरु तथा देवता में विश्वास और जप में श्रद्धा—ये बारह नियम मन्त्र-तथा धर्म की सिद्धि में सहायक होते हैं।

पुरश्चरण करनेवाले मनुष्य के लिए अतिरिक्त नियम कहते हैं—

पुरश्चरणकर्ता नित्य सूर्य की प्रदक्षिणा कर सूर्याभिमुख हो देवता की प्रतिमा अथवा अग्नि में सूर्य का पूजन करे।

स्नान, पूजा, जप, ध्यान, होम तथा तर्पण आदि कृत्यों में निरन्तर लगा रहे, और कामना-विरत हो देवता में अपने सभी कर्म का निवेदन करे—यह उसके नित्य के नियम हैं।

पुरश्चरणारम्भे वर्ज्यमासादिस्तत्रैव—

ज्येष्ठा-ऽऽषाढौ भाद्रपदं पौषं तु मलमासकम् ।
अङ्गार-शनिवारौ तु व्यतिपातं च वैधृतिम् ।।
अष्टमीं नवमीं षष्ठीं चतुर्थीं च त्रयोदशीम् ।
चतुर्दशीममावास्यां प्रदोषं च तथा निशि ।।
यमा-ऽग्नि-रुद्र-सार्पेन्द्र-वसु-श्रवण-जन्मभम् ।
मेष-कर्क-तुला-कुम्भ-मकरा-ऽलिक-लग्नकम् ।।
सर्वाण्येतानि वर्ज्याणि पुरश्चरणकर्मणि ।
सन्ध्या-गर्जित-निर्घोष-भूकम्पोल्का-निपातने ।।
एतानन्यांश्च दिवसान् स्मृत्युक्तांश्च परित्यजेत् ।। इति ।

पुरश्चरण आरम्भ करने के लिए विश्वामित्रकल्प में ही निन्द्य मास कहते हैं--

ज्येष्ठ, आषाढ़, भादों, पौष तथा मलमास--ये महीने वर्ज्य हैं। मंगल तथा शनिवार का दिन, व्यतिपात और वैधृति योग, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या, प्रदोष, रात्रि का काल, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवण तथा जन्मनक्षत्र, मेष, कर्क, तुला, कुम्भ, मकर तथा वृश्चिक लग्न—ये सब पुरश्चरण-कर्म में वर्जित हैं। सायंकाल, असमय में बादल की गर्जना, भूकम्प, उल्कापात तथा स्मृतियों में निषिद्ध मास, तिथि, योग, नक्षत्र आदि पुरश्चरण-कर्म के आरम्भ में वर्जित हैं।

पुरश्चणकाल:, रुद्रयामले—

वैशाखे श्रावणे वाऽपि आश्विने कार्तिके तथा।
फाल्गुने मार्गशीर्षे वा मन्त्री कुर्यात् पुरस्क्रियाम्॥

तिथ्यादिनिर्णय:, चन्द्रिकायाम्—

पूर्णिमा पञ्चमी चैव द्वितीया सप्तमी तथा।
त्रयोदशी च दशमी प्रशस्ता सर्वकर्मसु॥ इति।

रुद्रयामले—

गुरु-शुक्रोदये शुद्धे लग्ने सद्वार-शोभिते।
चन्द्र-तारानुकूल्ये च शुक्लपक्षे विशेषतः॥
पुरश्चरणकं कुर्यान्मन्त्रसिद्धिः प्रजायते॥ इति।

जपस्थानानि, नारदीये—

शिवस्य सन्निधाने च सूर्याग्न्योर्वा गुरोरपि।
दीपस्य ज्वलितस्याऽपि जपकर्म प्रशस्यते॥

रुद्रयामल के अनुसार पुरश्चरण का काल कहते हैं—

वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, फाल्गुन तथा अगहन ये महीने पुरश्चरणकर्ता के लिए अच्छे हैं।

स्मृतिचन्द्रिका के अनुसार प्रशस्त तिथि कहते हैं--

पूर्णिमा, पञ्चमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी तथा दशमी--ये तिथियाँ पुरश्चरण-कार्य के लिए शुभ हैं।

रुद्रयामल में--

गुरु और शुक्र दोनों का उदय हो, शुद्ध लग्न हो एवं उत्तम वार तथा चन्द्रमा और नक्षत्र अनुकूल हों तथा शुक्लपक्ष हो, तो ऐसे समय में पुरश्चरण आरम्भ करने से मन्त्र की सिद्धि अवश्य होती है।

भगवान् शिव के समीप, सूर्य, अग्नि तथा गुरु के समीप अथवा

गृहे जपं समं विद्याद् गोष्ठे शतगुणं भवेत् ।
नद्यां शतसहस्रं स्यादनन्तं शिवसन्निधौ ।।
समुद्रतीरे च ह्रदे गिरौ देवालयेषु च ।
पुण्याश्रमेषु सर्वेषु जपः कोटिगुणो भवेत् ।।

इत्युक्त-स्थानानामन्यतमं स्थानमाश्रित्य दीपस्थानं विचिन्तयेत् । तद्यथा—

कूर्मस्यैव मुखं विद्धि दीपस्थानं सुसिद्धिदम् ।
चतुरस्रं भुवं भित्वा कोष्ठानां नवकं लिखेत् ।।
पूर्वकोष्ठादि विलिखेत् सप्तवर्गान्यनुक्रमात् ।
लक्षावीशे मध्यकोष्ठे स्वरान् युग्मक्रमाल्लिखेत् ।।
दिक्षु पूर्वादितो यत्र नामस्याद्यक्षरं भवेत् ।
मुखं तदाऽस्य जानीयाद्धस्तावुभयतः स्थितौ ।।

जलते हुए दीपक के पास जप करने से फल की सिद्धि होती है। घर में जप करने से समान फल, गोशाला में जप करने से उसका सौगुना, नदी के तट पर लाख गुना, तथा शिव के समक्ष (अर्थात् शिवमन्दिर में) जप करने से अनन्त गुना फल होता है। समुद्र का तट, तालाब, पर्वत, देवालय (देवमन्दिर) तथा सभी पुण्याश्रमों में जप करने से करोड़ गुना फल होता है।

उपर्युक्त कहे हुए स्थानों में किसी एक स्थान पर जपकर्ता समाहित हो प्रथम दीप-स्थान का निर्माण करे। वह इस प्रकार है—

दीप का स्थान कूर्म (कछुआ) का मुख है, जिसमें मन्त्र की सिद्धि होती है। समतल भूमि बनाकर, उसमें नव कोण बनावे। पूर्व कोष्ठ से आरम्भ कर क्रमशः कवर्ग चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग और यवर्ग आदि लिखे। बीच के मध्य कोष्ठ में दो-दो स्वर (अ-आ एक कोष्ठ)

पृष्ठं कुक्षी उभे पादौ द्वौ शीर्षं पुच्छमीरितम् ।
कूर्मचक्रमिदं प्रोक्तं मन्त्राणां सिद्धिसाधनम् ।। इति ।

अस्याऽपवादः—

कुरुक्षेत्रे प्रयागे च गङ्गा-सागर-सङ्गमे ।
महाकाले च काश्यां च कूर्मस्थानं न चिन्तयेत् ।। इति ।

अथाऽऽसनानि, शारदायाम्—

कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धि-र्मोक्षश्री - र्व्याघ्रचर्मणि ।
स्यात् पौष्टिकं च कौशेयं शान्तिकं वेत्रविष्टरम् ।।
वंशासने व्याधिनाशः कम्बले दुःखमोचनम् ।
सर्वाभावे त्वासनार्थं कुशविष्टरमिष्यते ।। इति ।

के क्रम से लिखे, फिर पूर्व के क्रम से जहाँ नाम का आदि अक्षर आता हो वहीं कूर्म का मुख समझना चाहिए। और उसके दोनों बगल में कूर्म का हाथ समझे। इसी प्रकार पीठ, कुक्षि, दो पैर, सिर तथा पुच्छ की कल्पना करनी चाहिए। इसे ही कूर्म-चक्र कहते हैं, जो सम्पूर्ण मन्त्रों की सिद्धि का साधन है।

इसका अपवाद है--

कुरुक्षेत्र, प्रयाग, गंगा-सागर, संगम, उज्जैन तथा काशी में कूर्मस्थान के बिना भी कार्य किया जा सकता है।

शारदा-ग्रन्थ के अनुसार पुरश्चरणकर्ता का आसन कहते हैं—

कृष्णमृगचर्म पर जप करने से ज्ञान, व्याघ्रचर्म पर मोक्ष, कुशासन पर पुष्टि, वेत्रासन (बेंत के आसन) पर शान्ति, वंशासन पर व्याधिनाश तथा कम्बल पर बैठ कर जप करने से दुःख का विनाश होता है। परन्तु उपर्युक्त सभी प्रकार के आसनों के अभाव में कुशासन ही श्रेयस्कर–कल्याणदायक है।

जपमाला, तत्रैव—

रुद्राक्षः श्वेतपद्माक्षमाले तु अखिले जपेत् ।
अतिस्थूलोऽतिसूक्ष्मश्च स्फुटितोभं गुरुर्लघुः ॥
भिन्नः पुरा धृतो जीर्णो रुद्राक्षो वरदः स्मृतः ।
अष्टोत्तरशतैर्माला प्रशस्ता सर्वकर्मसु ॥
गुरुं प्रकाशयेद् धीमान् मन्त्रं नैव प्रकाशयेत् ।
अथ मालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत् ॥ इति ।

मालासंस्कारस्तत्रैव--

क्षालयेत् पञ्चगव्येन सद्योजातेन[1] तज्जलैः ।

जपमाला का विधान शारदाग्रन्थ के अनुसार—

रुद्राक्ष तथा श्वेत कमल की माला से सभी प्रकार का जप किया जा सकता है, चाहे वह अतिस्थूल, अतिसूक्ष्म, फूटा हुआ या छोटा-बड़ा जैसा भी हो। रुद्राक्ष जीर्ण, फूटा हुआ हो तो भी जप-कर्म में प्रशस्त है। इस प्रकार की माला एक सौ आठ दाने से युक्त होनी चाहिए। गुरु को माला की संख्या दिखाई जा सकती है, परन्तु मन्त्र का प्रकाश नहीं करना चाहिए, क्योंकि माला तथा जप की मुद्रा गुप्त रखनी चाहिए, यहाँ तक कि गुरु को भी नहीं दिखानी चाहिए।

शारदा-ग्रन्थ में ही माला का संस्कार कहते हैं--

पहले माला को पंचगव्य से, फिर जल से 'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि—' इस मन्त्र से प्रक्षालन करना चाहिए। पश्चात् चन्दन, अगरु तथा गन्ध का 'ॐ वामदेवाय--' इस मन्त्र से घर्षण करना

---

१. ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥

चन्दना-ऽगुरु-गन्धाद्यैर्वामदेवेन[1] घर्षयेत् ॥
धूपयेत्तामघोरेण[2] लेपयेत् पुरुषेण[3] तु ।
मन्त्रयेत् पञ्चमेनैव[4] प्रत्येकं तु शतं शतम् ॥
मेरुं च पञ्चमेनैव तथा मन्त्रेण मन्त्रयेत् ।
येन प्रतिष्ठिता माला तमेव तु मनुं जपेत् ॥ इति ।

जपप्रकारः, विश्वामित्रकल्पे--

ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च ।
गायत्रीं प्रणवान्तां च मध्ये त्रिप्रणवां तथा ॥

चाहिए । 'ॐ अघोरेभ्योऽथ--' इस मन्त्र से धूप देना चाहिए । फिर 'ॐ तत्पुरुषाय' इससे अनुलेपन तथा 'ॐ 'ईशानः सर्व—' इस मन्त्र से सौ-सौ बार अभिमन्त्रित करना चाहिए । इसी प्रकार 'ॐ ईशानः०' इससे मेरु को अभिमन्त्रित करे । फिर जिस मन्त्र का जप करना हो उस मन्त्र से माला को भी प्रतिष्ठित करना चाहिए । पश्चात् उस मन्त्र का जप करना चाहिए ।

विश्वामित्रकल्पोक्त जप का प्रकार कहते हैं—

प्रथम ॐकार का उच्चारण करे, पश्चात् 'भूर्भुवः स्वः' का उच्चारण करे, फिर ॐकार का उच्चारण कर गायत्री पढ़ना चाहिए—

---

१. ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः । कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥

२. ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर-घोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्रेभ्यः ॥

३. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥

४. ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् । ब्रह्माऽधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम् ॥

एवं नित्यं जपं कुर्याद् ब्राह्मणो विप्रपुङ्गवः ।
भिन्नपादा तु गायत्री ब्रह्महत्याप्रणाशिनी ॥
अभिन्नपादा गायत्री ब्रह्महत्यां प्रयच्छति ।
अच्छिन्नपादगायत्रीजपं कुर्वन्ति ये द्विजाः ॥
अधोमुखाश्च तिष्ठन्ति कल्पकोटिशतानि च ।
धर्मशास्त्र-पुराणेषु इतिहासेषु सुव्रत ! ॥
पञ्चप्रणवसंयुक्तां जपेदित्यनुशासनम् ।
जपसङ्ख्याष्टभागान्ते पादो जप्यस्तुरीयकः ॥
स द्वेवः परमो ज्ञेयः परं सायुज्यमाप्नुयात् ।
अन्यथा प्रजपेद्यस्तु न जपो विफलो भवेत् ॥

(ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं ॐ भर्गो देवस्य धीमहि ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ) इस प्रकार गायत्री के अन्त में प्रणव तथा गायत्री के मध्य में तीन प्रणव का उच्चारण करता हुआ जप करे। इस विधि के अनुसार श्रेष्ठ ब्राह्मण नित्य गायत्री का जप करे। यदि गायत्री का पाद (तीन पाद गायत्री को प्रथम वरेण्यान्त, दूसरा धीमहि, तत्सवितुः प्रचोदयात्) भिन्न कर जप किया जाता है, तो वह ब्रह्महत्या का विनाश करनेवाली होती है। परन्तु गायत्री को पादशः अलग न कर जप करने से ब्रह्महत्या का पाप लगता है। जो ब्राह्मण गायत्री के पाद को अलग न कर, एक पाद में ही पढ़ते हैं वे करोड़ों वर्षों तक अधोमुख (नरक) में निवास करते हैं। धर्मशास्त्र, पुराण तथा इतिहास में कहा गया है कि गायत्री को उपर्युक्त पंचप्रणव से युक्त हो जप करना चाहिए। जब जप पूरा हो जाय तो चौथा पाद 'धियो यो नः प्रचोदयात्' इसका यथाशक्ति जप करना चाहिए। इस प्रकार जप करने वाला ब्राह्मण श्रेष्ठ सायुज्यमुक्ति के फल को प्राप्त करता है। इससे भिन्न जो लोग जप करते हैं उनका

प्रारम्भदिनमारभ्य समाप्तिदिवसावधि ।
न न्यूनं नातिरिक्तं च जपं कुर्याद् दिने दिने ।।
नैरन्तर्येण कुर्वीत स्व-स्ववृत्तिं न लिम्पयेत् ।
प्रातरारभ्य विधिवज्जपेन्मध्यदिनावधि ।।
मनःसंहरणं शौचं यानं मन्त्रार्थचिन्तनम् ।। इति ।

जपसंख्या, तत्रैव —

गायत्रीछन्दोमन्त्रस्य यथासंख्याक्षराणि च ।
तावल्लक्षाणि कर्तव्यं पुरश्चरणकं तथा ।। इति ।

प्रपञ्चसारेऽपि —

एवं कृत्वा तु सिद्ध्यर्थं गायत्रीं दीक्षितो जपेत् ।
तत्लक्षं विधानेन भिक्षाशी विजितेन्द्रियः ।। इति ।

जप निष्फल हो जाता है। पुरश्चरण के दिन से आरम्भ कर अन्तिम दिन तक जप की संख्या में न्यूनाधिक (घटती-बढ़ती) नहीं होनी चाहिए अर्थात् प्रारम्भ-दिन में जितनी संख्या हो उतनी ही संख्या जप के अन्तिम दिन तक होनी चाहिए और नित्य विधि का भी लोप न करे। प्रातःकाल से आरम्भ कर मध्याह्नपर्यन्त गायत्री-जप करने की विधि है। मन को अपने वश में रखना चाहिए। पवित्रतापूर्वक मन्त्र के अर्थ का जपकाल में चिन्तन करना चाहिए।

जपसंख्या विश्वामित्रकल्प के अनुसार कहते हैं—

गायत्रीछन्द-रूप मन्त्र के अक्षरों की जितनी संख्या है—अर्थात् चौबीस अक्षर—उतने ही लाख अर्थात् चौबीस लाख गायत्री जप का एक पुरश्चरण होता है।

प्रपंचसार में भी कहा गया है—

इस प्रकार दीक्षित होकर चौबीस लाख गायत्री का जप विधान-पूर्वक करे। नित्य जितेन्द्रिय (अर्थात् कामवासना आदि से रहित) रहे तथा भिक्षा का अन्न भोजन करे।

होमद्रव्याणि तत्संख्या च शारदायाम्—

> क्षीरोदनं तिला दूर्वाः क्षीरद्रुमसमिद्वरान् ।
> [१]पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥ इति ।

विश्वामित्रेऽपि—

> **तिलैः पत्रैः प्रसूनैश्च यवैश्च मधुनाऽऽप्लुतैः ।**
> **कुर्याद् [२]दशांशतो होम ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ इति ।**

गायत्री में हवनीय पदार्थ तथा उनकी संख्या शारदा-ग्रन्थ में—

गोदुग्ध, पायस, तिल, दूर्वा, दुधार वृक्षों (पीपल, गूलर, पाकड़ और बड़) की समिधा-लकड़ी से प्रत्येक के तीन-तीन हजार अर्थात् आठों को मिलाकर चौबीस हजार होम-मन्त्र सिद्धि के लिए करना चाहिए ।

विश्वामित्रकल्प में भी कहा गया है—

तिल, पत्र, फूल, यव, मधु से युक्त कर जप का दशांश होम करे । इससे मन्त्र की सिद्धि हो जाती है ।

---

१. अष्टभिर्द्रव्यैः पृथक् सहस्रत्रितयमित्यर्थस्तेन चतुर्विंशतिसहस्रहोमः कर्तव्य इति ।

२. निर्वाणतन्त्रे—

> विधिवल्लक्ष जपेन पुरश्चरणमीरितम् ।
> तद्दशांशं हुनेत् पश्चात् पुरश्चरणसिद्धये ॥ १ ॥
> होमस्य तु दशांशेन तर्पणं समुदीरितम् ।
> तर्पणस्य दशांशेन चाऽभिषेकं ततः परम् ॥ २ ॥
> अभिषेकदशांशेन कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम् ।
> ततः सिद्धो भवेद् देवि ! त्रिवर्गफलभाजनम् ॥ ३ ॥

अत्र जपदशांशतो होमस्तद्दशांशतस्तर्पणं तद्दशांशतो मार्जनं तद्दशांशतो ब्राह्मणभोजनम्। होमार्थं मण्डपकुण्डादि-निर्णयस्तद्रचनाप्रकारश्च तत्तद्-ग्रन्थेभ्योऽवगन्तव्यः। विस्तर-भयान्नेह लिखितः।

इति व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-आचार्य-पण्डित-
श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते गायत्री-रहस्ये
गायत्री-पुरश्चरण-विवेचनं समाप्तम्।

यहाँ जप का दशांश होम, उसका दशांश तर्पण तथा तर्पण का दशांश मार्जन, उसका दशांश ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए। हवन के लिए कुण्ड-मण्डप आदि का निर्णय एवं निर्माण की विधि 'कुण्ड-वेदी-मण्डपनिर्माण-विधि' देखनी चाहिए। ग्रन्थ-विस्तार के भय से यहाँ मैं नहीं लिख रहा हूँ।

इस प्रकार व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्त-
मिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' भाषाटीका-सहित गायत्री-रहस्य
में गायत्रीपुरश्चरणविवेचन समाप्त।

गायत्रीकल्पः

प्रथमपरिच्छेदः

स्वगुरुं पूजयेन्नित्यमुपचारैस्तु पञ्चकैः[1] ।
भक्तिश्रद्धानुसारेण विश्वामित्रं प्रकल्पयेत् ॥ १ ॥
अस्य कृत्स्नस्य मन्त्रस्य प्राणायामं निरुन्धयेत् ।
प्राणायामं नियम्याशु गुरुपूजापुरःसरम् ॥ २ ॥
प्रातरुत्थाय यो विप्रः शयने पर्यवस्थितः ।
एकाग्रमानसो भूत्वा ध्यायेन्मूलेऽथ कुण्डलीम् ॥ ३ ॥
नाभिसन्निहिता ज्ञेया द्वात्रिंशद्-वर्णसंख्यया ।
एवं ज्ञात्वा प्रभातायां षडाधारं तथा न्यसेत् ॥ ४ ॥
षडाधारं तथा वक्ष्ये विन्न्यसेच्चतुरक्षरम् ।
आद्यन्त-प्रणवैर्युक्तं षट्कुक्षिस्तु ततो न्यसेत् ॥ ५ ॥

प्रथम परिच्छेद—साधक नित्य नियमानुसार पञ्चोपचार—१. चन्दन, २. फूल, ३. धूप, ४. दीप, ५. नैवेद्य से अपने गुरु का पूजन करे और भक्ति तथा श्रद्धा के अनुसार विश्वामित्र की मूर्ति स्थापित करे ॥ १ ॥

सर्वप्रथम साधक को चाहिए कि मन्त्र की सिद्धि के लिए सोकर उठने के पश्चात् प्रातःकाल गुरु की मानसिक पूजा कर प्राणायाम करे फिर मन को एकाग्र कर नाभि के नीचे मूलाधार में कुण्डलिनी का ध्यान करे। वह कुण्डलिनी नाभि के समीप बत्तीस वर्णों की होती है। इस प्रकार बत्तीस वर्णवाली कुण्डलिनी का चार-चार अक्षर

---

१. पञ्चोपचाराश्च—

गन्धं पुष्पं च धूपं च दीपं नैवेद्यमेव च ।
प्रदद्यात् परमेशानि ! पूजा पञ्चोपचारिका ॥

सहस्रदलमध्यस्थां सबालां सतुरीयके ।
हंस-हंसेति विज्ञानात् सङ्कल्प-ध्यानपूर्वकम् ॥ ६ ॥
अस्याः सङ्कल्पमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
ततः स्थित्वा बहिर्गम्य मलमूत्रविसर्जनम् ॥ ७ ॥
दुर्गन्धत्यागपर्यन्तं कृत्वा शौचं समाहितः ।
ततो नदीं समागम्य गङ्गाध्यानपुरःसरम् ॥ ८ ॥
आचमनत्रयं कृत्वा त्रिवारं स्नानमाचरेत् ।
अग्निमण्डलमालिख्य जलमध्ये स-बिन्दुकम् ॥
मायाबीजेन मध्यस्थमुभयोर्व्याहृतित्रयम् ॥ ९ ॥
ततः शुद्धाम्बुनाऽऽचम्य प्राणायामत्रयं कुरु ।
देशकालाद्यमुच्चार्य गायत्रीध्यानपूर्वकम् ॥१०॥

आदि तथा अन्त प्रणव से युक्त करके क्रम से षडाधार में न्यास करे, पश्चात् षट्कुक्षि में न्यास करे—यह क्रम हम आगे कहेंगे ॥२-५॥

सहस्रदल में अवस्थित परास्वरूपा 'हंस-हंस' इस बाला गायत्री का संकल्प तथा ध्यान करने से ब्राह्मण सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार (साधक) प्रातःकाल शयन से उठकर गायत्री का चिन्तन करता हुआ मूलाधार में कुण्डलिनी का ध्यान करे। पश्चात् शयन से उठकर बाहर जाकर मल-मूत्र का विसर्जन करे ॥६-७॥ इसी प्रकार शरीर के दुर्गन्धों का त्याग कर, पैर आदि धोकर, पवित्र हो गंगा का ध्यान करता हुआ नदी के तट पर जाये ॥८॥ तीन बार आचमन कर, तीन बार स्नान करे, पुनः जल के मध्य में आदि तथा अन्त में प्रणव से युक्त मायाबीज के साथ गायत्री लिखे। प्रणव तथा गायत्री के बीच तीनों व्याहृतियाँ लिखे ॥९॥ तत्पश्चात् शुद्ध जल से आचमन कर, तीन प्राणायाम करे। अनन्तर गायत्री

सूक्ताऽग्निमार्जनं कुर्याद्यथाशाखोक्तमागतः ।
[१]अघमर्षणमन्त्रं च स्नानं पञ्चाङ्गपूर्वकम्[२] ॥११॥
श्रोत्रे नासाक्षि रुद्ध्वा च सहस्रान्तं जले वपुः ।
मग्नं कुर्याज्जपेन्मन्त्रं कुर्याद्वायुनिरोधनम् ॥१२॥
ततः स्नानत्रयं कुर्याच्छिरोव्याहृतिपूर्वकम् ।
त्रिवारं त्रिविधं स्नानं वायुमेढ्ं शिरःस्तनम् ॥१३॥
प्रोक्षयेच्छङ्ख[३]मुद्राभिर्व्याहृत्यादि – शिरोऽन्तकम् ।
ततस्तीरं समागत्य गायत्रीकवचं पठेत ॥१४॥

का ध्यान करके, देश-काल आदि का संकीर्तनपूर्वक संकल्प करे ॥१०॥ फिर अपनी शाखा के अनुसार सूक्तों को पढ़ता हुआ मार्जन करे। अघमर्षण का मन्त्र पढ़े, पुनः पञ्चांगपूर्वक स्नान करे ॥११॥ फिर कान, नाक, आँख को बन्द कर, जल में सहस्रान्त मग्न हो प्राणवायु को रोककर गायत्री का जप करे ॥१२॥ उसके बाद 'ॐ भूर्भुवः स्वः' इन व्याहृतियों को पढ़ता हुआ शिरःस्नान करे। इस प्रकार तीन बार तीन प्रकार से स्नान करे ॥१३॥

---

१. ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः । समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्-विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।

२. पञ्चाङ्गानि महादेवि ! जपो होमश्च तर्पणम् ।
अभिषेकश्च विप्राणामाराधनमपीश्वरि ॥

३. शङ्खमुद्रा—
वामाङ्गुष्ठं तु सङ्गृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत् ॥
वामाङ्गुल्यस्तथा श्लिष्टा संयुक्ताः सुप्रसारिताः ।
दक्षिणाङ्गुष्ठके लग्ना मुद्रा शङ्खस्य भूतिदा ॥

शुचिवस्त्राङ्गमाश्रित्य ललाटे तिलकं तथा ।
ओमापो ज्योतिमन्त्रेण शिखाबन्धनमाचरेत् ।। १५ ।।
त्रिकोणमध्ये ह्रींकारं कोणान्ते प्रपदं तथा ।
दण्डेषु व्याहृतिञ्चैवमुल्लिखेदुदकं तथा ।। १६ ।।
प्रणवेन बहिर्जप्त्वा जलं पीत्वा च मार्जनम् ।
न तत्र विन्यसेत् सन्ध्यामन्यथा शूद्रवत् भवेत् ।। १७ ।।

इति गायत्री-रहस्ये श्रीविश्वामित्रकल्पे आह्निकलक्षणयोगो
नाम प्रथमः परिच्छेदः ।। १ ।।

●

प्रत्येक बार स्नान के समय शंखमुद्रा से लिंग, गुदा तथा शिर एवं स्तनपर्यन्त प्रोक्षण करे, फिर जल से निकल कर तीर पर खड़ा होकर गायत्रीकवच का पाठ करे ।। १४ ।।

कवच-पाठ के अनन्तर शुद्ध वस्त्र पहने तथा ललाट में, चन्दन या भस्म आदि से तिलक लगावे। 'ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतम्०' इस मन्त्र से शिखाबन्धन करे ।।१५।। फिर जल में त्रिकोण बनाकर मध्य में ह्रींकार, कोण में 'प्र' पद और दण्ड पर व्याहृति लिखे ।। १६ ।। प्रणव से जल के बाहर 'ॐ ह्रीं' इसका जप करे, पुनः मार्जन करे, पश्चात् उस स्थान पर सन्ध्या न करे, अन्यथा शूद्र हो जाता है ।।१७।।

इस प्रकार गायत्री-रहस्य में विश्वामित्रकल्पोक्त आह्निकलक्षण योग
नामक पहला परिच्छेद समाप्त ।। १ ।।

●

चतुर्विंशतिनामानि तत्तत्स्थानेषु विन्यसेत् ।
केशवादीनि विन्यस्य पौराणाचमनं चरेत् ॥ १ ॥
चतुर्विंशतिवर्णानां केशवादिरनुक्रमात् ।
देव्याः पादैस्त्रिभिः पीत्वा चाऽङ्गुलैर्नवभिः स्पृशेत् ॥ २ ॥
सप्तव्याहृतिगायत्री शिरस्तुर्यद्वयं न्यसेत् ।
श्रुति-स्मृति-विधानेन द्विविधं परिकल्पयेत् ॥ ३ ॥
तृतीयं मूलमन्त्रेण क्रमाद् वर्णानि विन्यसेत् ।
आचमनविधिः प्रोक्तः पौराणः स्मार्त्त आगमः ॥ ४ ॥
श्रौतं मानसमाचम्य पञ्चभिः श्रुतिचोदितैः ।
सन्ध्या-प्रारम्भकाले त्वाचमनत्रितयं न्यसेत ॥ ५ ॥
कुरुते सर्वसिद्धिः स्यान्नास्ति चेन्निष्फलं भवेत् ।

द्वितीय परिच्छेद—केशवादि चौबीस विष्णु के नामों से उन-उन स्थानों पर न्यास करे, पुनः पुराणोक्त विधि से आचमन करे ॥ १ ॥ केशवादि चौबीस अक्षरों से फिर गायत्री के तीन पाद से क्रमशः तीन बार जल पीकर, नव अँगुलियों से न्यास करे ॥२॥ तत्पश्चात् 'सप्तव्याहृतीनाम्०' इत्यादि गायत्री मन्त्र से शिर का चार अथवा दो बार न्यास करे। पुनः श्रुति तथा स्मृतियों के अनुसार दो प्रकार का आचमन करे ॥ ३ ॥ फिर मूलमन्त्र के द्वारा तत्तद् वर्णों से न्यास करे। पुराण, स्मार्त्त, आगम, श्रौत तथा मानस के भेद से वेदोक्त आचमन पाँच प्रकार के होते हैं, उनसे आचमन करे। सन्ध्या के प्रारम्भकाल में तो तीन बार आचमन करना चाहिये ॥ ४-५ ॥ जो सन्ध्या काल में इस प्रकार आचमन करते हैं उनको सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है, अन्यथा उनकी सन्ध्या निष्फल होती है। कनिष्ठा तथा अँगूठे को अलग कर शेष सभी अँगुलियों को एक में

संहताङ्गुलिना तोयं ब्रह्मतीर्थे पिबेज्जलम् ।
मुक्ताङ्गुष्ठं कनिष्ठायां शेषेणाचमनं भवेत् ॥ ६ ॥
गोकर्णाकृतिहस्तेन माषमात्रं जलं पिबेत् ।
न्यूनातिरिक्तमात्रेण तज्जलं सुरया समम् ॥ ७ ॥
आदौ चान्ते तथा मध्ये न्यसेच्चाचमनं क्रमात् ।
श्रुति-स्मृति-पुराणानि पर्यायेण विलोमतः ॥ ८ ॥
केशवादित्रिभिर्नाम अपः पीत्वा यथाविधि ।
गोविन्दमग्रतो न्यस्य विष्णुं सुषुम्नि विन्यसेत् ॥ ९ ॥
मधुसूदनमादित्यं शुद्धांशुं च त्रिविक्रमम् ।
अग्रतो वामनं चैव हस्तयोः श्रीधरं तथा ॥ १० ॥

मिलाकर (हाथ को गोकर्ण के समान) ब्रह्मतीर्थ से माशा भर जल पीकर आचमन करे। माशा से कम अथवा अधिक जल होने से वह जल सुरा के समान हो जाता है ॥ ६–७ ॥ इस प्रकार सन्ध्या के आदि, मध्य तथा अन्त में क्रमशः आचमन करे। श्रुति, स्मृति तथा पुराणोक्त आचमन परस्पर भिन्न होते हैं ॥ ८ ॥ (श्रुति-आचमन यथा —ॐ माधवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः। स्मृति-आचमन—ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः, ॐ माधवाय नमः। पुराण-आचमन—ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः) केशवादि इन तीनों नामों से शास्त्रीय रीति के अनुसार आचमन कर न्यास करे। 'ॐ गोविन्दाय नमः' इस मन्त्र से आगे, 'ॐ विष्णवे नमः' इस मन्त्र से सुषुम्ना में न्यास करे ॥ ९ ॥ 'ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ शुद्धांशवे नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः।' इन मन्त्रों से आगे 'ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः' इन मन्त्रों से दोनों हाथों में न्यास करे ॥ १० ॥

हृषीकेशं पद्मनाभमुभयोः पादयोर्न्यसेत् ।
दामोदरं ब्रह्मरन्ध्रे नासा सङ्कर्षणस्य च ॥ ११ ॥
नासामध्ये तु विन्यस्य नासान्ते वा विनिर्दिशेत् ।
दक्षनासां तु विन्यस्य वासुदेवं तथैव च ॥ १२ ॥
प्रद्युम्नं च तथा वामे अनिरुद्धं च दक्षिणे ।
पुरुषोत्तमं वामनेत्रे दक्षिणे च अधोक्षजम् ॥ १३ ॥
नारसिंहं वामनेत्रे नाभौ चाऽप्यच्युतं न्यसेत् ।
जनार्दनं हृदि न्यस्य भुजे दक्षिणबाहुके ॥ १४ ॥

इति विश्वामित्रकल्पे आचमनयोगो नाम
द्वितीयः परिच्छेदः ॥ २ ॥

●

'ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ पद्मनाभाय नमः' मन्त्र से दोनों पैरों में, 'ॐ दामोदराय नमः' इस मन्त्र से शिर के मध्य तथा 'ॐ सङ्कर्षणाय नमः' इस मन्त्र से नासिका में न्यास करे ॥ ११ ॥

उपर्युक्त मन्त्र से नासिका के मध्य में अथवा नासिका के अन्त में न्यास करे । 'ॐ वासुदेवाय नमः' इस मन्त्र से दाहिनी नासिका में न्यास करे ॥ १२ ॥ 'ॐ प्रद्युम्नाय नमः' इस मन्त्र से बायीं नासिका में, 'ॐ अनिरुद्धाय नमः' इस मन्त्र से पुनः दाहिनी नासिका में न्यास करे । 'ॐ पुरुषोत्तमाय नमः' से वामनेत्र में, 'ॐ अधोक्षजाय नमः' से दाहिने नेत्र में न्यास करे ॥ १३ ॥ 'ॐ नारसिंहाय नमः' इस मन्त्र से पुनः वामनेत्र में, 'ॐ अच्युताय नमः' इस मन्त्र से नाभि में, 'ॐ जनार्दनाय नमः' से वाम तथा 'ॐ हरये नमः' इस मन्त्र से दाहिनी भुजा में न्यास करे ॥ १४ ॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्रकल्पोक्त आचमनयोग नामक द्वितीय परिच्छेद समाप्त ॥ २ ॥

●

तृतीयपरिच्छेदः

प्राणायामत्रयेणैव प्रातःसन्ध्यां समाचरेत् ।
प्राणायामसमायुक्तं प्राणायममिति स्मृतम् ॥ १ ॥
उत्तमं नवधा चैव मध्यमं ऋतुसंख्यया ।
अधमं त्रयमित्याहुः प्राणायामो विधीयते ॥ २ ॥
सप्तव्याहृतिभिश्चैव प्राणायामं पुटीकृतम् ।
व्याहृत्यादि-शिरोऽन्तं च प्राणायामत्रयत्रिकम् ॥ ३ ॥
स-व्याहृतिं स-प्रणवां गायत्रीं शिरसा सह ।
त्रिः पठेदायतः प्राणान् प्राणायामः स उच्यते ॥ ४ ॥
बिन्दुतः प्राणमार्गं च गायत्रीं बिन्दुसंयुताम् ।
व्याहृत्यादि-शिरोऽन्तं च प्राणायामत्रयत्रिकम् ॥ ५ ॥

तृतीय परिच्छेद—तीन प्राणायाम के अनन्तर प्रातःकाल की सन्ध्या करनी चाहिए। प्राण का आयाम (विस्तार) ही प्राणायाम कहा जाता है ॥ १ ॥ नव बार गायत्री पढ़कर जो प्राणायाम किया जाय वह उत्तम तथा छह बार गायत्री पढ़कर मध्यम एवं तीन बार गायत्री पढ़कर अधम प्राणायाम होता है ॥ २ ॥

'सप्तव्याहृति' से प्राणायाम को सम्पुटीकरण करना चाहिए। व्याहृति से आरम्भ कर शिरोऽन्त (सत्यान्त) स्वरोम् पर्यन्त तीन-तीन मन्त्र प्रत्येक प्राणायाम के साथ जपना चाहिए ॥ ३ ॥

प्रणव (ॐ) तथा सप्तव्याहृति युक्त समस्त गायत्री मन्त्र का तीन बार पूरक, कुम्भक और रेचक-द्वारा पाठ करने को ही प्राणायाम कहते हैं ॥ ४ ॥

'भूः' यहाँ से आरम्भ कर 'स्वः' पर्यन्त तथा समस्त गायत्री का तीन बार उच्चारण कर प्राणायाम करे ॥ ५ ॥

आदौ कुम्भकमाश्रित्य रेचक-पूरक-वर्जितम् ।
व्याहृत्यादि-शिरोऽन्तं च प्राणायामं तु कुम्भकम् ॥ ६ ॥
प्राणायाय-समान-बिन्दुसहितं बिन्दुत्रयं संयुतं
सप्तव्याहृति-बिन्दुसम्पुटपरं वेदादिपादत्रयम् ।
गायत्री शिरसा त्रिनाडिसहिताभिव्यद्वये द्वे परे
शुद्धं केवलकुम्भकं प्रतिदिनं ध्यायामि तत्त्वं पदम् ॥ ७ ॥
अधमे द्वादशी मात्रा मध्यमे द्विगुणा मता ।
उत्तमा त्रिगुणा प्रोक्ता प्राणायामं निरुन्धयेत् ॥ ८ ॥
रेचकं कुम्भकं चैव पूरकं वायुरोधनम् ।
एवं क्रमेण युञ्जीत प्राणायामस्य लक्षणम् ॥ ९ ॥
निषिद्धं रेचकं ज्ञेयं पूरकं च तथैव च ।
अमोघं कुम्भकं प्रोक्तं प्राणायामं प्रकीर्तितम् ॥ १० ॥

साधक सर्वप्रथम कुम्भक (वायुनिरोध) करे, रेचक और पूरक न करे । सप्तव्याहृति से युक्त गायत्री का जप करे और 'आपो हिष्ठा०' इस मन्त्र से मस्तक पर जल से मार्जन करे ॥ ६ ॥ 'भूः भुवः स्वः' से युक्त सदा व्याहृति से सम्पुटित इडा, सुषुम्ना और पिंगला इन तीन नाडियों से युक्त गायत्री मन्त्र ही पूरक तथा रेचक से उत्तम प्राणायाम तन्त्रशास्त्र की रीति से माना गया है ॥७॥ अधम प्राणायाम बारह मात्रा काल पर्यन्त, मध्यम प्राणायाम चौबीस मात्रा काल पर्यन्त और उत्तम प्राणायाम छत्तीसमात्रा काल पर्यन्त तक होता है ॥ ८ ॥ पूरक (वायु को भीतर खींचना), कुम्भक (वायुनिरोध) तदनन्तर रेचक (वायुनिःसारण) इस प्रकार क्रम से प्राणायाम के लक्षण हैं ॥ ९ ॥ रेचक तथा पूरक प्राणायाम फलहीन होनेसे निषिद्ध है । कुम्भक फलप्रद होने से अमोघ (सफल) है ॥ १० ॥

अघोष-निर्घोष-गमाऽऽगमस्थं
नाडीद्वयं रेचक-पूरकं च ।
कुम्भोपमं पूर्णघटप्रकारं
ह्येवंविधं स्याच्छ्वसनस्य साध्यम् ॥ ११ ॥
शब्दपूर्वकमभ्यासं शब्दव्यञ्जनसंयुतम् ।
भिन्नभाण्डोदकं यद्वच्छ्वसनस्य व्यतिक्रमात् ॥ १२ ॥
इडा-पिङ्गला-सुषुम्नाच्छब्दपूर्व-व्यतिक्रमात् ।
तत्सर्वं निष्फलं प्रोक्तमिति शङ्करभाषितम् ॥ १३ ॥
ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा ।
ततो धर्मं समाश्रित्य प्राणायामविदो विदुः ॥ १४ ॥
नासापुटं स्वङ्गुलीभिः पञ्चभिर्वायुरोधनम् ।
शनैः शनैस्तु निःशब्दं प्राणायामं निरोधयेत् ॥ १५ ॥

शब्दरहित तथा निःशब्द श्वास-प्रश्वास में रहने वाला इडा और पिंगला इन दोनों नाड़ियों से युक्त रेचक तथा पूरक प्राणायाम कहा जाता है। श्वांस की सिद्धि तो पूर्ण घट के समान कुम्भक प्राणायाम से ही होती है ॥ ११ ॥

प्राणायाम को शब्दपूर्वक अथवा शब्द-व्यंजन से संयुक्त अभ्यास करना चाहिए, क्योंकि प्राणायाम जल में वायु का व्यतिक्रम होने से, जैसे फूटे बरतन का जल चू जाता है, उसी प्रकार प्राणायाम भी निष्फल हो जाता है ॥ १२ ॥

इडा, पिंगला और सुषुम्ना—इन तीन नाडियों से रहित प्राणायाम निष्फल होता है, ऐसा भगवान् शंकर ने कहा है ॥ १३ ॥

इसलिए प्राणायाम की प्रक्रिया को जानने वाले विद्वानों ने बताया है कि ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ अथवा संन्यासी प्राणायाम के समय

नासिकापुटमङ्गुल्या निधायैकेन मारुतम् ।
आकृष्य धारयेदग्निं प्राणायामं विचिन्तयेत् ॥ १६ ॥
प्राणायामेन ज्ञात्वा च स्नापयेच्चिन्मयं शिवम् ।
तदादौ मानसं कुर्यात्तदा केवलकुम्भकम् ॥ १७ ॥
पञ्चप्रज्वालकं चैव प्राणायामं समाचरेत् ।
पूजामानससंयुक्तं प्राणायामफलं भवेत् ॥ १८ ॥
पञ्चपूजां विना येन प्राणायामं करोति यः ।
तस्य निष्फलितं कर्म विश्वामित्रेण भाषितम् ॥ १९ ॥
लकारं च हकारं च यकारं च रकारयोः ।
चकारमिति विख्यातं पञ्च पूजात्मकं जपेत् ॥ २० ॥

वायु का व्यतिक्रम न होने दें ॥ १४ ॥ पाँचों अँगुलियों से नासापुट (नासिका के अग्रभाग) को बन्द कर वायु को रोकता हुआ किसी भी शब्द को न सुनता हुआ प्राणायाम करे ॥ १५ ॥ नासिकापुट को एक अँगुली से बन्द कर, वायु को खींच कर अग्नितत्त्व का ध्यान करना चाहिए ॥ १६ ॥

प्राणायाम काल में शिव का ध्यान कर ज्ञानरूप शिव का मानस-पूजन करना चाहिए । उस समय केवल कुम्भ ही करना चाहिए ॥१७॥ प्राणायाम-काल में पंच-प्रज्वालकपूर्वक मानसपूजा करने से प्राणायाम का फल प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

जो लोग पंचपूजा के बिना ही प्राणायाम करते हैं, उनका प्राणायाम निष्फल होता है, ऐसा विश्वामित्र का मत है ॥ १९ ॥

लकार, हकार, यकार, रकार तथा चकार रूप वर्णों का ध्यान करना ही पंचपूजा है । इसलिए प्राणायाम काल में इन पाँच वर्णों की मानस-पूजा करनी चाहिए ॥ २० ॥

सिद्धासनसमो नास्ति न कुम्भेनैव तोपमम् ।
मन्ददृष्टिसमो नास्ति प्राणायामं समभ्यसेत् ॥ २१ ॥
अन्तश्चेतो बहिश्चक्षुरधःस्थाप्य सुखासनम् ।
समत्वं च शरीरस्य प्राणायामं समभ्यसेत् ॥ २२ ॥
अस्त्रप्रयोगकाले तु प्राणायामं च कुम्बकः ।
प्राणायामबलोपेत उपसंहारकारकः ॥ २३ ॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्राणायामं समाचरेत् ।
सर्वधर्मपरित्यागी स महापातकी भवेत् ॥ २४ ॥

इति आचार्य-पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-गायत्री-रहस्ये
विश्वामित्रकल्पोक्त-प्राणायामयोगो नाम
तृतीयः परिच्छेदः ॥ ३ ॥

●

प्राणायाम में सिद्धासन, कुम्भक प्राणायाम तथा नेत्र को बन्द करना ये तीनों क्रियाएँ सर्वश्रेष्ठ हैं ॥ २१ ॥ प्राणायाम के समय सुखासन पर विराजमान हो, नेत्र को बन्द कर, शरीर को सीधा कर प्राणायाम आरम्भ करना चाहिए ॥ २२ ॥

प्राणायाम-समाप्ति काल में कुम्भक-द्वारा रोके हुए दीर्घ श्वास को अपनी शक्ति के अनुसार धीरे-धीरे निकालता हुआ प्राणायाम करे ॥ २३ ॥ इसलिए सभी प्रकार के उपायों से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए, परन्तु जो लोग वर्णाश्रम धर्म को छोड़कर इस गायत्री पुरश्चरण का आरम्भ करते हैं वे महापातकी होते हैं ॥ २४ ॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचित 'शिवदत्ती'
भाषाटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्रकल्पोक्त
प्राणायाम योग नामक तृतीय परिच्छेद समाप्त ॥३॥

●

चतुर्थपरिच्छेदः

पादं पादं क्षिपेन्मूर्ध्नि प्रतिप्रणवसम्पुटम् ।
निक्षिपेदष्टपादं तु अधो यस्य क्षयाय च ॥ १ ॥
अष्टाक्षरं नवपदं पदादौ ब्रह्महा भवेत् ।
ऋचादौ मार्जनं कुर्यात् सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥ २ ॥
यस्य क्षयाय पादं तु आपः सिन्धुस्त्वमेव च ।
भूमौ पादौ विनिःक्षिप्य इतरन्मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥ ३ ॥
प्रातः सूर्यश्च मन्त्रेण सायमग्निः पिबेज्जलम् ।
आपः पुनन्तु मध्याह्ने क्रमेणाऽऽचमनं न्यसेत् ॥ ४ ॥

चतुर्थ परिच्छेद—गायत्री के प्रत्येक पाद को प्रणव से युक्त कर तीन बार शिर पर जल से अभिषेक करे । फिर 'आपो हिष्ठा' मन्त्रसे आरम्भ कर 'आपो जनयथा च नः' तक पढ़कर शिर पर जल छोड़े । यहाँ मार्जन के नव मन्त्र हैं, जिनके प्रत्येक मन्त्र में आठ अक्षर हैं । मन्त्र इस प्रकार का है—१. 'आपो हिष्ठा मयो भुवः, २. ता न ऊर्जे दधात नः, ३. महेरणाय चक्षसे, ४ यो वः शिवतमो रसः, ५. तस्य भाजयते ह नः, ६. उशतीरिव मातरः, ७. तस्माऽअरङ्ग मामवः, ८. यस्य क्षयाय जिन्वथ, ९. आपो जनयथा च नः ।' इसमें पद के आदि से मार्जन नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से ब्रह्महत्या का दोष लगता है । इसलिए प्रत्येक मन्त्र के आदि से मार्जन करना चाहिए, ऐसा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल होता है ॥१-२॥

'यस्य क्षयाय जिन्वथ' 'आपो जनयथा च नः' इन दो ऋचाओं से पृथ्वी पर जल छोड़े तथा अन्य मन्त्रों से शरीर का मार्जन करना चाहिए ॥३॥ प्रातःकाल 'सूर्यश्च मा मन्युश्च०' इस मन्त्र से, और सायं काल में 'अग्निश्च मा मन्युश्च०' इस मन्त्र से आचमन करना चाहिए ।

आपो हिष्ठेति मन्त्रेण नवपादं द्विवारकम् ।
हिरण्यवर्णाश्चत्वारो दधिमन्त्र-द्विवारकम् ।। ५ ।।
पदादौ क्लीं पदं मध्ये पदान्ते मार्जनं भवेत् ।
ऋचादौ प्रणवं चोक्त्वा ऋचोऽन्ते मार्जनं भवेत् ।। ६ ।।
सत्त्वं रजस्तमो जातं मनो-वाक्-कायिकादिषु ।
जाग्रत् - स्वप्न - सुषुप्त्यादि-नवैतान्नवभिर्दहेत् ।। ७ ।।
दधि - द्विमार्जनं चैव हिरण्यादि - चतुष्टयम् ।
काम-क्रोधादि-षड्वर्गं मार्जयेत् सर्वमार्जनम् ।। ८ ।।

इति पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-गायत्री-रहस्ये
श्रीविश्वामित्रकल्पोक्तमार्जनयोगो नाम
चतुर्थः परिच्छेदः ।। ४ ।।

तथा मध्याह्न में 'आपः पुनन्तु पृथिवीं' इस मन्त्र को पढ़कर आचमन करे ।।४।। 'आपो हिष्ठा०' नवपाद वाले मन्त्र से दो बार आचमन करे, फिर 'हिरण्यवर्णा०' तथा 'दधि०' इस मन्त्र से दो-दो बार आचमन करना चाहिए ।।५।। प्रत्येक मन्त्र के आदि में 'क्लीं' पद तथा अन्त में प्रणव का पाठ कर मार्जन करे। प्रत्येक ऋचा के आदि में प्रणव तथा ऋचा के अन्त में प्रणव पढ़कर मार्जन करना चाहिए ।।६।। 'आपो हिष्ठा०' से लेकर 'आपो जनयथा च नः' इस नव ऋचा के मन्त्र से कायिक, वाचिक, मानसिक, सात्त्विक, राजस, तामस तथा जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्त्यादि में किये गये नव प्रकार के पापों का नाश हो जाता है ।।७।। 'दधि०' मन्त्र से दो बार तथा 'हिरण्यादि०' मन्त्र से चार बार, कुल छह बार मार्जन करने का यह फल होता है कि मनुष्य के काम, क्रोध आदि षड्वर्गों का नाश हो जाता है ।।८।।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' भाषाटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्र कल्पोक्त मार्जनयोग नामक चौथा परिच्छेद समाप्त ।। ४ ।।

पञ्चमपरिच्छेदः

सन्ध्यावन्दनवेलायामर्घ्यं दद्यात् त्रयं बुधः।
सायं प्रातः समानं स्यान्मध्याह्ने च पृथग्विधिः ॥ १ ॥
एकं मध्याह्नकाले तु सायं प्रातस्त्रयस्त्रयः।
एवं ज्ञात्वा सृजेदर्घ्यं सूर्यनक्षत्रपूर्वकम् ॥ २ ॥
एकं शस्त्रास्त्रनाशाय एकं हननाशने।
असुराणां वधायाऽर्घ्यं प्रायश्चित्तार्थसंयुतम् ॥ ३ ॥
दद्यात् केवलगायत्र्या मूढो ह्यर्घ्यं तु यो द्विजः।
स बिन्दु-ब्राह्मणो नाम सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥ ४ ॥
ब्रह्मास्त्रं नाभिजानाति स विप्रः शूद्र एव हि।
तस्य कर्मादिकं जातं धर्माद्यं निष्फलं भवेत् ॥ ५ ॥

पंचम परिच्छेद— सन्ध्यावन्दन काल में बुद्धिमान् साधक सूर्य के लिए तीन बार अर्घ्यदान करे। अर्घ्यदान में सायं तथा प्रातः समान विधि है, मध्याह्न में अर्घ्यदान की पृथक् विधि है ॥ १ ॥

मध्याह्नकाल में सूर्य साक्षिभूत एक अर्घ्य तथा सायं और प्रातः-काल में नक्षत्र साक्षिभूत तीन-तीन बार अर्घ्य प्रदान करे ॥२॥

एक अर्घ्य सूर्य के शत्रु राहु के शस्त्रास्त्रनाश के लिए, दूसरा उनके विनाश के लिए, तीसरा अर्घ्य असुरों के वध के लिए देना चाहिए। तीसरे अर्घ्य से सूर्य पर राहु-द्वारा आयी हुई विपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं ॥३॥

जो ब्राह्मण केवल गायत्री मन्त्र से अर्घ्य देता है वह 'बिन्दु' नाम का ब्राह्मण है, वह किसी भी धर्म का अधिकारी नहीं है ॥४॥

जो ब्राह्मण ब्रह्मास्त्र नहीं जानता वह शूद्र के समान है। उसका किया हुआ सभी धर्म-कर्म व्यर्थ हो जाता है ॥५॥

बीजन्त्रेण गायत्र्याः प्रणवेत्यभिधीयते ॥ ६ ॥
देहस्तु दण्ड इत्युक्तः संज्ञाकवचमेव च ।
सर्वाङ्गानि पदो मन्त्रं सर्वमन्त्रे त्वयं विधिः ॥ ७ ॥
अस्त्राष्टवारतः प्रोक्ता गायत्री व्याप्य उच्यते ।
एतत् षण्मन्त्रकं ज्ञात्वा अर्घ्यं दद्याद्धि नामतः ॥ ८ ॥
एक मध्याह्नकाले च प्रायश्चित्तं द्वितीयकम् ।
अर्घ्यद्वयं तु मध्याह्ने तथा मुक्तं महामुने ! ॥ ९ ॥
अर्घ्यत्रयं प्रयोगार्थं प्रायश्चित्तं चतुर्थकम् ।
सायं-प्रात-द्विआदीनामेवमेव विधिः क्रमात् ॥ १० ॥

गायत्री का बीज ही प्रणव कहा जाता है। देह दण्ड है, गायत्री कवच उसकी संज्ञा है। पद और मन्त्र सभी अंग हैं। मन्त्र की यह विधि है ॥६-७॥

गायत्री में व्याप्य आठ बार अस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। इन छह मन्त्रों को जानकर 'सूर्याय नमः' इस नाम से अर्घ्यदान करना चाहिए ॥८॥

मध्याह्नकाल में एक अर्घ्य, दूसरा अर्घ्य प्रायश्चित्तसंज्ञक है। इस प्रकार मध्याह्नकाल में दो अर्घ्य-दान करना चाहिए। ऐसा कहा गया है ॥९॥

सायंकाल में तीन अर्घ्य तथा चौथा प्रायश्चित्तसंज्ञक अर्घ्य देना चाहिए। इस प्रकार ब्राह्मणों को प्रातःकाल में तीन, मध्याह्न में दो तथा सायंकाल में चार अर्घ्यदान करना चाहिए ॥१०॥

ब्रह्मास्त्रं ब्रह्मदण्डं च ब्रह्मशीर्षं च संयुतम् ।
अर्घ्यत्रयं प्रयोगार्थमेवमेवमुदाहृतम् ॥ ११ ॥
शस्त्रमादौ ततो दण्डं शिखात्रीणि समुच्चरेत् ।
पर्यायेण त्रिरुच्चार्यमञ्जलिं च त्रिधा हरेत् ॥ १२ ॥
अर्घ्यत्रयं प्रयोक्तव्यमभिमन्त्रितमञ्जलिम् ।
त्रियुक्तं विसृजेदर्घ्यमसुराणां वधाय च ॥ १३ ॥
अस्त्रदण्ड-शिरोयुक्तमर्घ्यमेकं समुच्चरेत् ।
अस्त्रं वाहनरक्षोघ्नमेकाञ्जलिजलं क्षिपेत् ॥ १४ ॥
प्रायश्चित्तं द्वितीयार्घ्यमसुराणां वधाय च ।
प्रदक्षिणं पृथिव्यां च सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १५ ॥

प्रथम अर्घ्य का नाम ब्रह्मास्त्र, दूसरे का ब्रह्मदण्ड तथा तीसरे का नाम ब्रह्मशीर्ष है। ऐसा विद्वानों ने कहा है ॥११॥

प्रथम अर्घ्य में 'इदं ब्रह्मशस्त्रं', दूसरे में 'इदं ब्रह्मदण्डं' तथा तीसरे में 'इदं ब्रह्मशीर्षं' ऐसा कहकर क्रमशः हाथ में जल लेना चाहिए ॥१२॥

इस प्रकार गायत्री से अभिमन्त्रित कर तीन बार असुरों के वध के लिए अर्घ्यदान करना चाहिए ॥१३॥

प्रथम अर्घ्य अस्त्रदण्डरूप सिर से स्पर्श कर एक अंजलि जल छोड़ना चाहिए। उससे सूर्य के वाहन की रक्षा तथा राक्षसों का विनाश होता है ॥१४॥

असुरों के वध के लिए प्रायश्चित्त-स्वरूप द्वितीय अर्घ्य पृथ्वी पर अपनी दाहिनी ओर छोड़ना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य सभी प्रकारके पापों से छुटकारा पा जाता है ॥१५॥

असावादित्यमन्त्रेण ब्रह्मेत्यादि प्रदक्षिणम् ।
आपोभिरयुतं कार्यं सर्वाघौघ-निकृन्तनम् ॥ १६ ॥
'हंस हंसे'ति मन्त्रस्य बृहत्यन्तं समुच्चरन् ।
शिरसा दण्डमस्त्रं च सम्मुखे इव निक्षिपेत् ॥ १७ ॥
उपमन्त्रं समुच्चार्य शिरस्तत्र समुद्धरेत् ।
अर्घ्यमेकं तु मध्याह्ने तथा मुक्तं महामुने ! ॥ १८ ॥
तर्ज्जन्यङ्गुष्ठयोगेन राक्षसी-मुद्रिका भवेत् ।
राक्षसी-मुद्रिकादत्तं तत्तोयं रुधिरं भवेत् ॥ १९ ॥
निक्षिपेद्यदि मूढात्मा रौरवं नरकं व्रजेत् ।
अङ्गुष्ठच्छायापतितं देवता-मुद्रिका भवेत् ॥ २० ॥

गायत्री मन्त्रपूर्वक 'असौ आदित्यो ब्रह्मा' ऐसा पढ़कर जल से दस हजार अर्घ्य-दान पूर्ण हो जाने पर मनुष्य के सभी प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१६॥ 'हंस हंस' इस बृहत्यन्त मन्त्र को उच्चारण कर शिर से स्पर्श कर सम्मुख में ही अर्घ्यदान करना चाहिए । यही अस्त्रदण्ड है ॥१७॥

उपमन्त्र का उच्चारण कर शिर से युक्त कर मध्याह्न-काल में एक अर्घ्यदान करना चाहिए ॥१८॥

तर्जनी तथा अँगूठा को युक्त करने से राक्षसीमुद्रा होती है। राक्षसीमुद्रा से दिया हुआ जल रुधिर के समान हो जाता है ॥१९॥

जो मूर्ख प्राणी राक्षसीमुद्रा से अर्घ्यदान करता है, वह रौवर नरक को जाता है। जिस अर्घ्य में अंगुष्ठ की छाया पड़ती है वह देवता की मुद्रा कही जाती है ॥२०॥

देवता – मुद्रिकादत्ते सर्वैः पापैः प्रमुच्यते ।
एवं विज्ञानमात्रेण सद्यः सिद्धिर्भविष्यति ॥ २१ ॥

इति पण्डित-शिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचित-गायत्री-रहस्ये विश्वामित्र-कल्पेऽर्घ्यदानयोगो नाम पञ्चमः परिच्छेदः ॥५॥

देवता की मुद्रा से दिये गये अर्घ्यदान के द्वारा मनुष्य सभी पापों से छुटकारा पा जाता है। जो ऐसा जान भी ले, उसे शीघ्रता से सिद्धि प्राप्त हो जाती है ॥२१॥

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' भाषाटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्रकल्प में कहा गया अर्घ्यदान योग नामक पंचम परिच्छेद समाप्त ॥५॥

ओमित्येकाक्षरं चोक्तं न्यास-ध्यान-पुरःसरम् ।
यथाशक्ति जपं कुर्यान्नित्यकर्म समाचरेत् ॥ १ ॥
शुचिर्भूमौ लिखेद् यन्त्रं बीजं बिन्दुसमन्वितम् ।
बीजराजं लिखेन्मध्ये वह्निमण्डलमध्यगे ॥ २ ॥
चतुरस्रं ततो हस्तं सुदृढं मृदु निर्मलम् ।
तत्रोपरि समासीनो गायत्रीजपमाचरेत् ॥ ३ ॥
स्वशुद्धिं भूतशुद्धिं च कृत्वा शोषणदाहनम् ।
प्लवने च ततः कुर्यात् प्रणवादित्रयं चरैः ॥ ४ ॥
प्राणायामसमायुक्तमन्तर्बाह्यं समातृकात् ।
देहे न्यासं ततः कुर्यात् कराङ्गन्यासमाचरेत् ॥ ५ ॥
ऋषिं न्यसेत् पूर्वमुखे तथा च्छन्द उदीरितम् ।
देवता हृदि विन्यस्य गुह्यं बीजमिति स्मृतम् ॥ ६ ॥

गायत्री का न्यास तथा ध्यान करके 'ॐ' इस अक्षर का जप करना चाहिए। इसके बाद नित्यकर्म का अनुष्ठान करना चाहिए ॥१॥ पवित्र भूमि पर यन्त्र लिखे, उसके ऊपर बिन्दु सहित बीज मन्त्र लिखे। अग्नि-तत्त्व के भीतर बीज-राज लिखना चाहिए ॥२॥ तत्पश्चात् चार हाथ अत्यन्त ठोस और सुन्दर वेदी का निर्माण करे। उसके ऊपर बैठकर गायत्री का जप करे ॥३॥ सर्वप्रथम आत्मशुद्धि करे, फिर भूतशुद्धि करे, पश्चात् प्रणव से संयुक्त महाव्याहृति पढ़कर प्लवन-क्रिया करे ॥४॥ प्राणायाम करके अन्तर तथा बाह्य-शुद्धि करे, फिर अंगन्यास तथा करन्यास की क्रिया करे ॥ ५ ॥

मुख में छन्द तथा सप्तर्षियों का, हृदय में देवताओं का तथा गुह्य-स्थान में बीज का न्यास करे ॥ ६ ॥

शक्ति विन्यस्य चाधारे पादयोः कीलकं न्यसेत् ।
एवं न्यासविधिं कृत्वा ऋष्यादिन्यासपूर्वकम् ॥ ७ ॥
आवाहनादि-भेदं च दश-मुद्राः प्रदर्शयेत् ।
आयातु वरदा देवी अङ्ग-प्रत्यङ्ग-सङ्गमे ॥ ८ ॥
प्रातर्गायत्री सावित्री मध्याह्ने च सरस्वती ।
एवमावाहनं ज्ञात्वा सन्ध्यायां जपमाचरेत् ॥ ९ ॥
हस्ताभ्यामनुलोमेन आवाहनमनाहुते ।
नामत्रयऋषिश्छन्दः क्रमेणाऽऽवाहनं भवेत् ॥ १० ॥
मूलाधारेण गायत्री सावित्री मणिपूरके ।
द्वादशारे सरस्वती छन्दो नाडीत्रयं तथा ॥ ११ ॥

आधार में शक्ति का तथा पैर में कीलक पढ़कर न्यास करे । इस प्रकार ऋष्यादि का न्यास करके फिर आवाहनादि कर दसों मुद्रा प्रदर्शित करे । ध्यान का मन्त्र—साधक को अंग-प्रत्यंग में प्रातःकाल वरदा गायत्री देवी, मध्याह्न में सावित्री तथा सायंकाल में सस्वती का ध्यान करना चाहिए । इस प्रकार से आवाहन कर गायत्री का जप करे ॥ ७-९ ॥

दोनों हाथों को सीधा कर गायत्री का आवाहन करना चाहिए । आवाहन में क्रमशः ऋषि, देवता तथा छन्द का उच्चारण भी आवश्यक है ॥ १० ॥

मूलाधार में गायत्री, मणिपूरक चक्र में सावित्री तथा द्वादशार चक्र में सरस्वती का निवास रहता है । तीनों नाड़ियाँ इडा, पिंगला तथा

ऋषिर्मूर्ध्नि सुविज्ञेय आवाहनमनुक्रमात् ।
आवाहनं यथोक्तं च यथोक्तं तु विसर्जनम् ॥ १२ ॥
एवं जानीहि विप्रेन्द्र ! जपध्यानं समाचरेत् ।
आवाहनं ततो न्यासं विना जाप्यं तु निष्फलम् ॥ १३ ॥
चतुर्विंशतिगायत्रीं प्रातः स्नात्वा जपेन्मनुम् ।
प्राणायामं ततः कुर्यान्न्यास-ध्यानं समाचरेत् ॥ १४ ॥
करन्यासं ततः कुर्यादङ्गन्यासं तथैव च ।
चतुश्चतुश्चतुष्कं च चतुश्चतुश्चतुश्चतुः ॥ १५ ॥
षडङ्गं विन्यसेद् देवीं गायत्रीं वेदमातरम् ।
व्याहृतित्रयमुच्चार्य अनुलोमं च बिभ्रतः ॥ १६ ॥

सुषुम्ना में छन्दों का निवास है ॥ ११ ॥ ऋषियों का निवास मूर्धा (शिर) में रहता है । इस प्रकार क्रमशः देवता, ऋषि तथा छन्दपूर्वक आवाहन करना चाहिए । एवं आवाहन तथा 'उत्तमे शिखरे भूम्यां तथा पर्वतमूर्द्धनि । गायत्री छन्दसां मातर्गच्छ देवि ! यथासुखम् ॥' इत्यादि उपर्युक्त विधि से विसर्जन करना ॥ १२ ॥ हे विप्रेन्द्र ! ऐसी विधि जानो, ऐसा जानकर ही गायत्री का जप तथा ध्यान करना चाहिए । आवाहन तथा ध्यान के बिना गायत्री का जप निष्फल होता है ॥ १३ ॥ प्रातःकाल स्नान कर प्राणायाम, अंगन्यास तथा ध्यान करना चाहिए । पश्चात् चौबीस अक्षर वाली गायत्री का जप करना चाहिए ॥ १४ ॥

इस प्रकार स्नान कर चार प्राणायाम, चार ध्यान, चार अंगन्यास तथा चार करन्यास करना चाहिए । इसके अनन्तर जप करना चाहिए ॥१५॥ वेदमाता गायत्री को प्रथम तीन व्याहृति का उच्चारण

करांङ्गन्यासमारभ्य गायत्री पूर्ववद् भवेत् ।
अकारं च उकारं च मकारं बिन्दुसंयुतम् ॥ १७ ॥
अनुलोमं न्यसेत्तत्र त्रिरक्षरसमन्वितम् ।
चतुर्विंशतिवर्णानां पल्लवोऽयमुदाहृतः ॥ १८ ॥
चतुरक्षरसंयुक्तं कराङ्गन्यासमाचरेत् ।
तुर्यपादं विना न्यासमाद्यन्तं प्रणवैः सह ॥ १९ ॥
व्याहृतित्रयमुच्चार्य चतुरक्षरसंयुतम् ।
पुनर्व्याहृतिमुच्चार्य कराङ्गन्यासमाचरेत् ॥ २० ॥

पादंपादं द्विपादं च प्रतिप्रणवसम्पुटम् ।
कराङ्गन्यास-संयोगात् षड्भागैस्त्रिपदा भवेत् ॥ २१ ॥
अङ्गुष्ठादि – चतुर्वर्णामनुलोमक्रमेण तु ।
हृदयादि – चतुर्वर्णाः क्रमेणैव विलोमतः ॥ २२ ॥

कर षडंगन्यास करे । पुन: करन्यास करे । गायत्री में अकार, उकार और मकार (ॐ) का संयोग होना चाहिए ।। १६-१७ ।।

अनुलोम गायत्री के तीन-तीन अक्षरों से चौबीस वर्णों का न्यास करना चाहिए । यह पल्लव विधि है ।।१८।। अनुलोम गायत्री के चार-चार अक्षरों से करन्यास करना चाहिए । परन्तु चतुर्थ पाद से न्यास नहीं करना चाहिए । न्यास के आदि तथा अन्त में प्रणव होना आवश्यक है ।। १९ ।। तीनों व्याहृति का उच्चारण कर गायत्री के चार-चार अक्षरों से न्यास करना चाहिए, फिर व्याहृति का उच्चारण करना चाहिए ।।२०।। त्रिपदा गायत्री को चार अक्षरों से छह भाग करे फिर प्रत्येक में पाद-पाद के अनुसार प्रणव लगाकर न्यास करना चाहिए।२१। अंगुष्ठ आदि क्रमों से चार-चार वर्ण वाली गायत्री के छह भाग

चतुर्वर्णान् विना यस्तान् त्रिपर्णे संन्यसेद् द्विजः ।
तस्य वैफल्यमाप्नोति सत्य सत्यं न संशयः ॥ २३ ॥
अङ्गन्यासं करन्यासं देहन्यासं विना जपेत् ।
अन्धत्वं बधिरत्वं च मूकत्वं प्राप्नुयान्मनुः ॥ २४ ॥

इति गायत्री-रहस्ये विश्वामित्रकल्पे आवाहनादियोगो नाम
षष्ठः परिच्छेदः ॥६॥

से करन्यास करे और विलोम-क्रम से हृदयादिन्यास करना चाहिए ॥२२॥ चार-चार वर्णों के बिना जो लोग न्यास करते हैं उनका किया हुआ सभी जप निष्फल है। यह बात सत्य है, यह बात सत्य है, इसमें सन्देह नहीं ॥२३॥ जो लोग अंगन्यास तथा करन्यास के बिना ही जप करते हैं, वे अन्धे, बधिर तथा मूकता को प्राप्त करते हैं ॥२४॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्रकल्पोक्त
आवाहनादियोग नामक छठा परिच्छेद समाप्त ॥६॥

सप्तमः परिच्छेदः

ध्यानं मुद्रां नमस्कारं गुरुमन्त्रं तथैव च।
संयोगमात्मसिद्धिं च पञ्चधैवं विभावयेत् ॥ १ ॥
प्रातः केवलगायत्री मध्याह्ने व्याहृतीयुता।
सायाह्ने तुर्यया युक्ता नित्यजाप्यं समाचरेत् ॥ २ ॥
पादादौ रेफसंयुक्तां गायत्रीं जपलक्षणम् ॥ ३ ॥
पादत्रयं समुच्चार्य प्रतिलोमं ततश्चरेत्।
रेफबिन्दु तदाद्यन्तौ गायत्रीजपमाचरेत् ॥ ४ ॥
गायत्रीं पूर्वमुच्चार्य तुर्यान्त्यादि-विलोमतः।
सायंसन्ध्यां जपेदेवं साधकः सर्वसिद्धये ॥ ५ ॥
तकारादि-यकारान्तमनुलोमं विलोमतः।
तुर्यपादं विना मन्त्रं प्रातः सन्ध्यामथाचरेत् ॥ ६ ॥

ध्यान, मुद्रा, नमस्कार, गुरुमन्त्र तथा अपनी सिद्धि के साथ संयोग, इस प्रकार साधक को उपर्युक्त पाँच बातों का ध्यान रखना चाहिए ॥१॥ प्रातःकाल केवल गायत्री का, मध्याह्न में व्याहृति से युक्त तथा सायंकाल में तुरीय (प्रणव) से युक्त कर, गायत्री का जप करना चाहिए ॥२॥ प्रत्येक पाद के आदि में 'ॐ रम्' इस बीजमन्त्र का उच्चारण कर जप करना चाहिए ॥३॥ गायत्री के तीन पाद का उच्चारण कर, पुनः उसे उलटा उचारण करना चाहिए। आदि तथा अन्त में 'ॐ रम्' का भी उच्चारण होना आवश्यक है ॥४॥ सायंकाल में गायत्री का उच्चारण कर फिर उसे विलोमरूप से उच्चारण करना चाहिए। ऐसा करने से साधक के सभी कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ५ ॥

तत् के 'त' से आरम्भ कर 'यात्' तक गायत्री का उच्चारण अनुलोम उच्चारण है। 'यात्' के आरम्भ से 'तत्' पर्यन्त उच्चारण

भकारादि-हिकारान्तं मध्यपादमिति स्मृतम् ।
तार्तीयं तु प्रयोक्तव्यं तदर्घ्ये प्रथमं भवेत् ॥ ७ ॥

धकारादि-यकारान्तं तृतीयं पादमुच्चरेत् ।
प्रथमं च द्वितीयं च त्रिविधं जपलक्षणम् ॥ ८ ॥

कालत्रयं त्रिधा जाप्यं त्रिकालं त्रिविधं स्मृतम् ।
अनुलोम-विलोमाभ्यां चिरं सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥

चतुर्विंशति-वर्णानामनुलोमं जपेदपि ।
पूर्णजाप्यफलं नास्ति अर्द्धजाप्यफलं लभेत् ॥ १० ॥

विलोम उच्चारण है । चतुर्थ पाद के बिना ही गायत्री मन्त्र का जप प्रातःकाल में करना चाहिए (गायत्री के चौबीस अक्षरों में छह अक्षर के गणना से चार पाद होते हैं, उनमें चतुर्थपाद 'यो नः प्रचोदयात्') ॥६। 'भर्गो' के 'भ' से आरम्भ कर 'धीमहि' के 'हि' पर्यन्त गायत्री का मध्यपाद कहा जाता है । परन्तु अर्घ्यदान काल में तीनों पाद का उच्चारण कर अर्घ्यदान करना चाहिए ॥ ७॥ 'धियो' के 'ध'कार से 'यात्' के 'य' पर्यन्त तृतीय पाद है । इस प्रकार प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय पाद का उच्चारणपूर्वक गायत्री का जप करना चाहिए ॥ ८ ॥

तीनों काल में तीनों पाद गायत्री का जप करना चाहिए । त्रिकाल भी प्रातः, मध्याह्न तथा सायं भेद से तीन प्रकार का है । इस प्रकार उपर्युक्त विधान से अनुलोम तथा प्रतिलोम गायत्री का जप करने से शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ९ ॥ चौबीस वर्ण वाली गायत्री का अनुलोम-जप करने से भी प्रतिलोम-जप न करने से गायत्री-जप का फल पूर्ण नहीं होता है । उससे तो केवल आधे जप का ही फल प्राप्त होता है ॥ १० ॥

चतुष्पादं तु गायत्री अनुलोम-विलोमतः ।
नित्यं-जाप्यं प्रकुर्वीत भुक्ति मुक्ति लभेन्नरः ॥११॥
नित्य-नैमित्त-काम्यादि-व्यस्ता-ऽव्यस्तं जपेन्मनुम् ।
प्रात-र्मध्याह्न-सायाह्नं जपेदेव क्रमेण तु ॥१२॥
जपपारायणं कुर्यात् त्रिपदा सम्पुटं नव ।
एवं ज्ञात्वा जपेन्नित्यमेकः कोटिगुण भवेत् ॥१३॥
कालत्रयं यथोक्तं च जाप्यपारायणं परम् ।
अनन्तफलमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ॥१४॥
अष्टोत्तरसहस्रं वा अष्टोत्तरशतं तु वा ।
अष्टाविंशतिमेवाऽथ गायत्रीदशकं जपेत् ॥१५॥

गायत्री के चार पाद क्रमशः, 'तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो, यो नः प्रचोदयात्' इस प्रकार चार पादों का अनुलोम जप तथा 'यात्' से आरम्भ कर क्रमशः प्रत्येक पाद का प्रतिलोम जप करने से मनुष्य को भोग तथा मुक्ति दोनों प्राप्त होती है ॥ ११ ॥ नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य कर्मों में प्रतिलोम तथा अनुलोम गायत्री का जप प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकाल में क्रमशः करना चाहिए ॥१२॥ त्रिपदा गायत्री को नव बार सम्पुटित कर गायत्री का पारायण करना चाहिए। इस प्रकार किया गया एक भी जप करोड़ों गुना फलवान् होता है ॥ १३ ॥ तीनों काल उक्त रूप से गायत्री-जप का पारायण करने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है यह सत्य है, यह सत्य है, इसमें संशय नहीं ॥ १४ ॥ गायत्री का १००८, अथवा १०८, अथवा २८ बार या १० बार जप करना चाहिए ॥ १५ ॥

ओङ्कारः पुरुषश्चैव गायत्री सुन्दरी तथा।
तयोः संयोगकाले तु वस्त्रमाच्छाद्य गण्यते ॥ १६ ॥
वरेण्यं विरलं चोक्त्वा जपकाले विशेषतः।
पारायणेषु युक्तं स्यादन्यथा विफलं भवेत् ॥ १७ ॥

इति विश्वामित्रकल्पे त्रिकालजपयोगो नाम
सप्तमः परिच्छेदः ॥ ७ ॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचित-गायत्री-रहस्ये
विश्वामित्रकृत-गायत्रीकल्पः समाप्तः।

●

ओंकार पुरुष है, गायत्री उसकी सुन्दरी है। अस्तु, उन दोनों के संयोग काल में अर्थात् प्रणवपूर्वक गायत्री-जप करते समय जप को वस्त्र से ढँककर गणनी करनी चाहिए ॥ १६ ॥ जप काल में 'वरेण्यं विरलं' ऐसा कहकर जप का पारायण करना चाहिए, अन्यथा गायत्री जप का फल नहीं होता है ॥ १७ ॥

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' भाषाटीका-सहित 'गायत्री-रहस्य' में विश्वामित्रकल्पोक्त त्रिकालजपयोग नामक सप्तम परिच्छेद समाप्त।

●

गायत्री-पद्धतिः

[गायत्री-पञ्चाङ्गम्[1]]

ब्रह्म-विष्णु-शिवाराध्यां गायत्रीं लोकपावनीम् ।
नमस्कृत्यानुरोधेन लिखेयं पद्धतिं क्रमात् ॥ १ ॥

साधकः ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय यथोक्तं शौचं कृत्वा, नद्यादौ स्नानं कृत्वा, प्राणायामत्रयं च कृत्वा अर्घ्यान्तां सन्ध्यां कुर्यात् ।

प्राणायामो यथा—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ।

ब्रह्मा, विष्णु और शिव से पूजित तथा लोक को पवित्र करनेवाली गायत्री को नमस्कार कर गायत्री-पद्धति क्रमशः लिख रहा हूँ ॥१॥

साधक ब्राह्म मुहूर्त में उठकर शास्त्रीय रीति के अनुसार शौच आदि क्रिया करके नद्यादि में स्नान करे, तत्पश्चात् तीन बार प्राणायाम कर सूर्यार्घ्य-पर्यन्त सन्ध्योपासन करे ।

प्राणायाम के समय 'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः' से आरम्भ कर 'ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्' तक मन्त्र का उच्चारण करे । इसके बाद विनियोग करे ।

---

१. पटलं पद्धती वर्म तथा नाम-सहस्रकम् ।
स्तोत्राणि चेति पञ्चाङ्गं देवतोपासने स्मृतम् ॥
कवचं देवतागात्रं पटलं देवताशिरः ।
पद्धतिर्देवहस्तौ तु मुखं साहस्रकं स्मृतम् ॥
स्तोत्राणि देवतापादौ पञ्चाङ्गं पञ्चभिः स्मृतम् ।

प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, परमात्मादेवता शरीरशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ब्रह्मणे नमः, शिरसि। गायत्रीच्छन्दसे नमः, मुखे। परमात्मदेवतायै नमः हृदये। करसम्पुटं कृत्वा, समस्त-दुरितक्षयार्थं न्यासं करिष्ये।

व्याहृतीनां जमदग्नि-भरद्वाजाऽत्रि-गौतम-काश्यप-विश्वा-मित्र-वसिष्ठादि-ऋषिभ्यो नमः, शिरसि। सप्तार्चिरनिल-सवितृ-प्रजापति-वरुणेन्द्र-विश्वेदेवताभ्यो नमः, मुखे। गायत्र्युष्णि-गनुष्टुब्-बृहती-पंक्ति-त्रिष्टुब्-जगतीच्छन्दोभ्यो नमः, हृदि। एवं करसम्पुट कृत्वा, समस्तदुरितक्षयार्थे गायत्रीन्यासः।

विनियोग—दाहिने हाथ में जल लेकर 'प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः' से आरम्भ कर 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़ कर जल को पृथ्वी पर गिरा देवे।

'ब्रह्मणे नमः, शिरसि' इस मन्त्र से शिर का स्पर्श करे। 'गायत्री-च्छन्दसे नमः, मुखे' से मुख का, 'परमात्मदेवतायै नमः, हृदये' से हृदय का स्पर्श करे। फिर हाथ जोड़कर 'समस्त-दुरित-क्षयार्थं न्यासं करिष्ये' तक पढ़कर संकल्प करे।

'व्याहृतीनां जमदग्नि०' से प्रारम्भकर 'ऋषिभ्यो नमः, शिरसि' तक पढ़कर शिर का स्पर्श, 'सप्तार्चिरनिल०' से आरम्भ कर 'देवताभ्यो नमः, मुखे' तक मन्त्र पढ़कर मुख का, 'गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्०' से लेकर 'छन्दोभ्यो नमः, हृदि' तक पढ़कर हृदय का स्पर्श करे। फिर हाथ जोड़-कर 'समस्तदुरितक्षयार्थे गायत्रीन्यासः' ऐसा वाक्य पढ़कर संकल्प करे

गायत्र्याः विश्वामित्रऋषये नमः, शिरसि । गायत्रीच्छन्दसे नमः, मुखे । परमात्मदेवतायै नमः, हृदये ।

ॐ भूः नमः, हृदये । ॐ भुवः नमः, मुखे । ॐ स्वः नमः, दक्षांसे । ॐ महः नमः, वामांसे । ॐ जनः नमः, दक्षिणोरौ । ॐ तपः नमः, वामोरौ । ॐ सत्यं नमः, जठरे । इति व्याहृतिन्यासः ।

अक्षरन्यासः

ॐ तत् नमः, गुल्फयोः । ॐ सं नमः, पादपार्श्वयोः । ॐ विं नमः, जान्वोः । ॐ तुं नमः, पादमुखयोः । ॐ वं नमः, जङ्घयोः । ॐ रें नमः, नाभौ । ॐ णिं नमः, हृदये । ॐ यं

गायत्री न्यास—'गायत्र्या विश्वामित्रऋषये नमः, शिरसि' मन्त्र पढ़कर शिर का स्पर्श, 'गायत्रीच्छन्दसे नमः, मुखे' मन्त्र पढ़कर मुख का, 'परमात्मदेवतायै नमः, हृदये' मन्त्र पढ़कर हृदय का स्पर्श करे।

व्याहृतिन्यास—'ॐ भूः नमः, हृदये' से हृदय का, 'ॐ भुवः नमः, मुखे' से मुख का, 'ॐ स्वः नमः, दक्षांसे' से दाहिने कन्धे का, 'ॐ महः नमः, वामांसे' से बायें कन्धे का, 'ॐ जनः नमः, दक्षिणोरौ' से दाहिने कटि (कमर) के नीचे का स्पर्श, 'ॐ तपः नमः, वामोरौ' से वाम भाग के कटि के निचले भाग का स्पर्श, 'ॐ सत्यं नमः, जठरे' से जठर (पेट) का स्पर्श करे।

अक्षरन्यास—'ॐ तत् नमः, गुल्फयोः' से दोनों गुल्फों (पैर के ठेहुने के नीचे) को छुए, 'ॐ सं नमः, पादपार्श्वयोः' से पैरों के दोनों भागों का, 'ॐ विं नमः, जान्वोः' से दोनों जानु का, 'ॐ तुं नमः, पादमुखयोः' से दोनों पैरों के अग्रभाग का, 'ॐ वं नमः, जङ्घयोः' से दोनों

नमः कण्ठे । ॐ भं नमः हस्तयोः । ॐ र्गों नमः मणिबन्धयोः । ॐ दें नमः कूर्पयोः । ॐ वं नमः बाहुमूलयोः । ॐ स्यं नमः आस्ये । ॐ धीं नमः नासापुटयोः । ॐ मं नमः कपोलयोः । ॐ हि नमः नेत्रयोः । ॐ धि नमः कर्णयोः । ॐ यों नमः भ्रूमध्ये । ॐ यों नमः मस्तके । ॐ नं नमः पश्चिमवक्त्रे । ॐ प्रं नमः उत्तरवक्त्रे । ॐ चों नमः दक्षिणवक्त्रे । ॐ दं नमः पूर्ववक्त्रे । ॐ यात् नमः ऊर्ध्ववक्त्रे । इत्यक्षरन्यासः ।

जाँघों का, 'ॐ रें नमः नाभौ' से नाभि का, 'ॐ णिं नमः हृदये' से हृदय का, 'ॐ यं नमः कण्ठे' से कण्ठ का, 'ॐ भं नमः हस्तयोः' से दोनों हाथ का, 'ॐ गों नमः मणिबन्धयोः' से दोनों मणिबन्ध (कलाई) का, 'ॐ दें नमः कूर्पयोः' से दोनों हाथों के ठेहुनों का, 'ॐ वं नमः बाहुमूलयोः' से दोनों बाहुमूलों का, 'ॐ स्यं नमः आस्ये' से मुख का, 'ॐ धीं नमः नासापुटयोः' से दोनों नासिकाओं का, 'ॐ मं नम कपोलयोः' से दोनों गालों का, 'ॐ हिं नमः नेत्रयोः' से दोनों नेत्रों का, 'ॐ धिं नमः कर्णयोः' से दोनों कानों का, 'ॐ यों नमः भ्रूमध्ये': से भ्रूमध्य का, 'ॐ यों नमः मस्तके' से मस्तक का, 'ॐ नं नमः पश्चिमवक्त्रे' से मुख के पश्चिम भाग का तथा 'ॐ प्रं नमः उत्तरवक्त्रे' से मुख के उत्तर भाग का, 'ॐ चों नमः दक्षिणवक्त्रे' से मुख के दाहिने भाग का, 'ॐ दं नमः पूर्ववक्त्रे' से मुख के पूर्व भाग का, और 'ॐ यात् नमः ऊर्ध्ववक्त्रे' मन्त्र पढ़कर मुख के ऊपरि भाग का स्पर्श करे।

पदन्यासः

ॐ तत नमः शिरसि । ॐ सवितुर्नमः भ्रुवोर्मध्ये । ॐ वरेण्यं नमः नेत्रयोः । ॐ भर्गः नमः मुखे । ॐ देवस्य नमः जठरे । ॐ धीमहि नमः हृदये । ॐ धियः नमः नाभौ । ॐ यः नमः गुह्ये । ॐ नः नमः जान्वोः । ॐ प्रचोदयात् नमः पादयोः । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोमिति शिरसि ।

इति पदन्यासः ।

पादन्यासः

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः नाभ्यादि-पादपर्यन्तम् । ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नमः हृदयादि-नाभ्यन्तम् । ॐ धियो यो नः प्रोचोदयात् नमः मूर्धादि-हृदयान्तम् । ॐ परोरजसे सावदोम् इति मूर्ध्नि विन्यस्य ।

पदन्यास—'ॐ तत् नमः शिरसि' से शिर का, 'ॐ सवितुर्नमः' से भ्रूमध्य का, 'ॐ वरेण्यं नमः' से दोनों नेत्रों का, 'ॐ भर्गः नमः' से मुखका, 'ॐ देवस्य नमः' से पेट का, 'ॐ धीमहि नमः' से हृदय का, 'ॐ धियः नमः' से नाभि का, 'ॐ यः नमः' से गुह्य का, 'ॐ नः नमः' से दोनों जानुओं का, 'ॐ प्रचोदयात् नमः' से दोनों पैरों का तथा 'ॐ आपो ज्याती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्' मन्त्र पढ़कर पुनः शिर का स्पर्श करे ।

पादन्यास—'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः' से नाभि से लेकर पैर तक का स्पर्श करे, 'ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नमः' पढ़कर हृदय से नाभि-पर्यन्त तथा 'धियो यो नः प्रचोदयात् नमः' से लेकर हृदय पर्यन्त स्पर्श करे । 'ॐ परोरजसे सावदोम्' मन्त्र पढ़कर फिर शिर का स्पर्श करे।

षडङ्गन्यासः

ॐ ब्रह्मणे हृदयाय नमः । ॐ विष्णवे शिरसे स्वाहा । ॐ रुद्राय शिखायै वषट् । ॐ ईश्वराय कवचाय हुम् । ॐ सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ सर्वात्मने अस्त्राय फट् । इति मन्त्रेणोर्ध्वाऽधस्तालत्रयं कृत्वा छोटिकमुद्रया[1] दिग्बन्धनं विधाय मूलेन व्यापकं[2] कुर्यात् । इति षडङ्गम् ।

षडंगन्यास—'ॐ ब्रह्मणे हृदयाय नमः' इस मन्त्र से हथेली से हृदय का, 'ॐ विष्णवे शिरसे स्वाहा' से चारों अँगुलियों के अग्रभाग से मस्तक का, 'ॐ रुद्राय शिखायै वषट्' से शिखा में अँगूठा से स्पर्श करे। 'ॐ ईश्वराय कवचाय हुम्' इस मन्त्र से दाहिनी कनिष्ठा के मूल से बायीं भजा तथा बायीं कनिष्ठा के मूल से दाहिनी भुजा का, 'ॐ सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्' से मध्यमा तथा तर्जनी से तीनों नेत्रों का, 'ॐ सर्वात्मने अस्त्राय फट्' इस मन्त्र से बायें हाथ की हथेली पर दाहिने हाथ की मध्यमा तथा तर्जनी अँगुलियों से तीन बार ताली बजावे। इस प्रकार तीन-तीन बार हृदयादि का स्पर्श करता हुआ अपने चारों चुटकी (छोटिकमुद्रा) से चारों ओर दिग्बन्धन करे तथा व्यापकमुद्रा (दोनों हाथों को उत्तान करने की विधि को व्यापकमुद्रा कहते हैं) प्रदर्शित करे।

मुद्राव्युत्पत्तिमाह तन्त्रे—

१. मोदनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसन्ततेः ।
तस्मान्मुद्रेति विख्याता मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः ॥
अथ मुद्राः प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु कल्पिताः ।
याभिर्विरचिताभिश्च मोदन्ते मन्त्रदेवताः ॥

२ उत्तानौ तादृशावेव व्यापकाञ्जलिकं करौ ।

लयाङ्गन्यासः

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं, चं छं जं झं ञं, टं ठं डं ढं णं, तं थं दं धं नं, पं फं बं भं मं, यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं। ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। क्षं लं हं सं ष शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं त्यादचोप्र नः यो योधि हिमधी स्यवदे र्गोभण्यंरेर्वतुवित्सत स्वःवःर्भुभू ॐ इति हृदयादि-मुखान्तम्। एवमेव हृदयादि-केशान्तम्। तथत्र व्याप्य।

इति लयाङ्गन्यासः।

पीठन्यासः

ॐ मं मण्डूकाय नमः मूलाधारे। ॐ कं कालाग्निरुद्राय नमः स्वाधिष्ठाने ॐ मं मूलप्रकृत्यै नमः नाभौ। ॐ आं आधारशक्तये नमः हृदये। कं कूर्माय नमः। वं वराहाय नमः। धं धारिण्यै नमः। सं सुधासिन्धवे नमः रं रत्नद्वीपाय नमः। मं मणिमण्डपाय नमः। कं कल्पवृक्षाय नमः। स्वं स्वर्णवेदि-

---

लयांगन्यास—'ॐ अं आं इं ईं—' से 'स्वः वःर्भुभू' तक पढ़कर प्रथम बार हृदय से मुख तक, पश्चात् द्वितीय बार पढ़कर हृदय से केश पर्यन्त भाग का स्पर्श करे।

पीठन्यास—इसके बाद 'ॐ मं मण्डूकाय नमः' आदि नीचे लिखे

काय नमः । रं रत्नसिंहासनाय नमः दक्षांसे । धं धर्माय नमः वामांसे । ज्ञां ज्ञानाय नमः वामोरौ । वं वैराग्याय नमः दक्षोरौ । ऐं ऐश्वर्याय नमः मुखे । अं अधर्माय नमः वामपार्श्वे । अं अज्ञानाय नमः दक्षपार्श्वे । अं अवैराग्याय नमः नाभौ । अं अनैश्वर्याय नमः हृदये । अं अनन्ताय नमः उपर्युपरि । इति विन्यसेत् ।

अं अम्बुजाय नमः । सं संविन्नालाय नमः । सं सर्वतत्त्वात्मकाय पद्माय नमः । प्रं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः । विं विकारमयकेशरेभ्यो नमः । पं पञ्चाशद्वर्णकर्णिकायै नमः । वं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः । वं षोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय नमः । सं सत्त्वात्मने नमः । रं रजसे नमः तं तमसे नमः । आं आत्मने नमः । अं अन्तरात्मने नमः । पं परमात्मने नमः । ह्रां दीप्तायै नमः । ह्रीं सूक्ष्मायै नमः । ह्रां विद्युतायै नमः । पीठमध्ये सर्वतोमुख्यै नमः । तदुपरि नित्यपूजाचक्रं विधाय । ॐ ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा-ऽम्बिकात्मकाय सौरपीठात्मने नमः । इति पीठन्यासः ।

मूलेन प्राणायामत्रयं व्यापकं च कृत्वा ध्यायेत् ।

प्रत्येक मन्त्रों से गायत्री के आसन पर अक्षत छोड़े । फिर उसके ऊपर पूजाचक्र बनाकर 'ॐ ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा-ऽम्बिकात्मकाय०' से आरम्भ कर 'पीठात्मने नमः' तक पढ़कर पूजाचक्र पर अक्षत छोड़े ।

पश्चात् मूलमन्त्र से तीन प्राणायाम तथा व्यापकमुद्रा करके 'मुक्ताविद्रुम०' श्लोक पढ़कर गायत्री का ध्यान करे ।

ध्यानम्

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थ-वर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदा-ऽभया-ऽङ्कुश-कशां शुभ्रं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथार-बिन्दुयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

इति ध्यात्वा, बहिःपूजोक्तरीत्या देवीं सौवर्णीं च सम्पूज्य, गन्ध-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बूलाद्युपचारान् प्रकल्प्य, किञ्चिज्जपित्वा,

स्वागतं देवदेवेशि ! सन्निधौ मे महेश्वरि ! ।
गृहाण मानसीं पूजां यथार्थपरिभाविताम् ॥

ध्यान—स्त्रियों के उचित शोभनीय मुक्ता, विद्रुम, स्वर्ण, नील तथा स्वच्छ छायावाले मुखों से युक्त, चन्द्रमा तथा विविध रत्नों से विभूषित मुकुट को धारण करने वाली, वर, अभय, अंकुश, कशा, शुभ्र कपाल, यज्ञोपवीत, शंख, चक्र तथा दो कमलों को अपने हाथों में धारण करने वाली गायत्री देवी का हम ध्यान करते हैं ।

इस प्रकार से ध्यान करके बाहर पूर्व पूजाचक्र में सोने की मूर्ति वाली गायत्री देवी की गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और ताम्बूल आदि पूजा-सामग्री को एकत्रित कर गायत्री का जप करता हुआ उपर्युक्त पूजन-सामग्री से गायत्री का पूजन करे । बाहरी पूजा के पूर्व गायत्री की मानस पूजन करे ।

दशधा मूलं जपित्वा जपं देव्या वामकरे समर्प्य, मनसा पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, क्षणं तदात्मकं विभाव्य [1]वरदा-[2]ऽभया-ऽङ्कुश-[3]कपा-[4]कपालिका-[5]शङ्ख-चक्राभ-[7]योन्यादिमुद्राः प्रदर्शयेत् ।

इति मानसीपूजा ।

मानसीपूजाविधि—हे देवदेवेशि, मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ, तुम मेरे सन्निकट स्थित होकर यथार्थरूप से मानसी-पूजा ग्रहण करो।

---

१. अधःस्थितो दक्षहस्तः प्रसृतो वरमुद्रिका ।
अपि च—
दक्षिणहस्तमुत्तानं विधायाऽधः प्रसारयेत् । इति ।

२. ऊर्ध्वीकृतो वामहस्तः प्रसृतोऽभयमुद्रिका ।

३. ऋज्वीं च मध्यमां कृत्वा तर्जनीं मध्यपर्वणि ।
संयोज्याऽऽकुञ्चयेत् किञ्चिन्मुद्रैषाऽङ्कुशसंज्ञिका ॥

४. पात्रवद्वामहस्तं च कृत्वाऽङ्गे वामके तथा ।
निधायोच्छ्रितवत् कुर्यान्मुद्रा कापालिकी मता ॥

५. वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानां ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत् ॥
वामाङ्गुल्यस्तथाश्लिष्टाः संयुक्ताः स्युः प्रसारिताः ॥
दक्षिणाङ्गुष्ठसंस्पृष्टा मुद्रैषा शङ्खमुद्रिका ॥

६. हस्तौ च सम्मुखौ कृत्वा सुभुग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चक्रसंज्ञिका ॥

७. मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके ।
अनामिकोर्ध्वं-संश्लिष्टे दीर्घमध्यमयोरथ ॥
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यसेद् योनिमुद्रेयमीरिता ॥

—म० महा०, पू० ख०, प्रथ० तर०

अथ बहिःपूजाथमनुज्ञाप्य बहिःपूजां कुर्यात् । स्ववामे अस्त्रक्षालितत्रिपदिकां निधाय, तदुपरि अस्त्रक्षालितं कलशं निधाय शुद्धतोयं मूलेनापूर्य्य मूलेनाऽष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य [१]जातवेदसे इत्यृचा [२]त्र्यम्बकमिति ऋचा गायत्र्या च सकृदभिमन्त्र्य गन्ध-पुष्पाभ्यां पूजयेत् । इति कलशसंस्थापनम् ।

सामान्याऽर्घ्यस्थापनविधिः

तत्राऽस्त्रक्षालितं ताम्रपात्रं निधाय, मूलेनाऽऽपूर्य्य, मूलेना-

---

गायत्री का दश बार जप कर फिर उस जप को मानसिक रूप से भगवती के बायें हाथ में समर्पित करता हुआ मानसिक पुष्पांजलि निवेदन करे। और अपने को गायत्री के स्वरूप में ही समझकर वरद मुद्रा, अभय, अंकुश, कशा, कपाल, गुण, शंख, चक्र और योनि आदि मुद्रा प्रदर्शित करे।

उसके बाद मानसी-पूजा के द्वारा ही बहिःपूजा की आज्ञा लेकर, शस्त्र से ठीक की गयी त्रिपदिका (तिपैया) बना कर, उसके ऊपर कलश रख कर, उसे गायत्रीमन्त्र-द्वारा शुद्ध जल से पूर्ण कर, मूल से आठ बार गायत्री मन्त्र के द्वारा उसे अभिमन्त्रित करे। 'जातवेदसे-' 'त्र्यम्बकं-' और गायत्री मन्त्र के द्वारा एक बार उसे अभिमन्त्रित करे। पश्चात् उस कलश की गन्ध तथा पुष्प से पूजा करे।

गायत्री के अर्घ्य की सामान्य विधि लिखते हैं—

पुनः उस पर अस्त्र से क्षालित ताम्रपात्र को रखकर, गायत्री मन्त्र पढ़कर शुद्धजल से उसे भरकर तथा आठ बार मूलमन्त्र पढ़कर

---

१. ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः ।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥

२. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥
ऊर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥

ऽष्टवारं सम्मन्त्र्य, गन्ध-पुष्पाभ्यां पूजयेत् ।

इति सामान्याऽर्घ्यस्थापनविधिः ।

पीठात्मनोर्मध्ये चन्दनेन कनिष्ठिकया त्रिकोणं षट्कोणं च कृत्वाऽग्नये हृदयाय नमः । ईशानाय शिरसे स्वाहा । निऋतये शिखायै वषट् । वायवे कवचाय हुम् । अग्नयेऽस्त्राय फट् । नेत्रत्रयाय वौषट् । पूर्वेऽस्त्राय फट् । सामान्यार्घ्यजलेन प्रोक्ष्य चन्दनेन पूजयेत् । त्रिकोणे आधारं स्थापयामि । आं आधारशक्तिं स्थापयामि । पृथिवीद्वीपं स्थापयामि ।

तत्र पूजा । अग्निमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः । धुं धूम्रायै नमः । जं ज्वालिन्यै नमः । विं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः । सुं सुरूपायै नमः । कं कपिलायै नमः । हं हव्यवाहनायै नमः । कं कव्यवाहनायै नमः । इति आधारपूजा ।

अभिमन्त्रित करे । पश्चात् गन्ध और पुष्प आदि पूजन-सामग्री से उस अर्घ्यपात्र की पूजा करे।

गायत्री के पीठ पर कनिष्ठा अंगुली से चन्दन से त्रिकोण अथवा षट्कोण बनाकर आग्नेय कोण में—'अग्नये हृदयाय नमः' से हृदय का स्पर्श करे, 'ईशानाय शिरसे स्वाहा' से ईशान कोण में', 'निऋतये शिखायै वषट्' इस मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण में शिखा को, 'वायवे कवचाय हुम्' मन्त्र से वायव्य, फिर 'अग्नये अस्त्राय फट्' तथा 'नेत्रत्रयाय वौषट्' से नेत्रों का स्पर्श करे । पुनः 'पूर्वे अस्त्राय फट्' मन्त्र पढ़े । फिर अर्घा के जल से पोंछ कर, चन्दन से भगवती के पीठ का पूजन करे । 'त्रिकोणे आधारं स्थापयामि' से लेकर 'कं कव्यवाहनायै नमः' तक मन्त्र पढ़ता हुआ चन्दन तथा अक्षत आदि छोड़े ।

आधारोपरि अर्घ्यपात्रं संस्थाप्य पात्रोपरि पूजा। अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। तं तापिन्यै नमः। धुं धूम्रायै नमः। मं मरीच्यै नमः। जं ज्वालिन्यै नमः। रुं रुच्यै नमः। सं सुमुखायै नमः। भों भोगदायै नमः। विं विश्वायै नमः। बों बोधिन्यै नमः। धां धारिण्यै नमः। क्षं क्षमायै नमः। इत्यर्घ्यपात्रपूजा।

विलोममातृकामुच्चरन् शुद्धजलमापूर्य। ॐ क्षं नमः। प्रणवः सर्वत्र। लं नमः। हं नमः। सं नमः षं नमः। शं नमः। वं नमः। लं नमः। रं नमः। यं नमः। मं नमः। भं नमः। बं नमः। फं नमः। पं नमः। नं नमः। धं नमः। दं नमः। थं नमः। तं नमः। णं नमः। ढं नमः। डं नमः। ठं नमः। टं नमः। ञं नमः। झं नमः। जं नमः छं नमः। चं नमः।

उसके बाद आधार के ऊपर अर्घ्यपात्र स्थापित करे। 'अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः' से लेकर 'क्षं क्षमायै नमः' तक मन्त्र पढ़कर अर्घ्यपात्र की पूजा करे।

विलोम गायत्री पढ़कर लयांग में 'त्यादचोप्र नः' से आरम्भ कर 'स्वः वः र्भुभू ॐ' तक अर्घ्यपात्रको शुद्ध जल से पूर्ण करे, फिर 'ॐ क्षं नमः' से लेकर 'पूं पूर्णायै नमः' तक मन्त्र पढ़े, फिर अंकुशमुद्रा से तीर्थों का आवाहन अर्घ्यपात्र में करे।

तत्र पूजा। सं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। अं अमृतायै नमः। मं मानदायै नमः। पुं पूषायै नमः। सं समृद्ध्यै नमः। तुं तुष्ट्यै नमः। पुं पुष्ट्यै नमः। रं रत्यै नमः। ज्यों ज्योत्स्नायै नमः। श्रीं श्रियै नमः। कीं कीर्त्यै नमः। अं अङ्गदायै नमः। पूं पूर्णायै नमः ॥१६॥

अङ्कुशमुद्रया[1] तीर्थान्यावाह्य,

गङ्गे! च यमुने! चैव गोदावरि! सरस्वति।
नर्मदे! सिन्धु! कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधौ भव॥

योनिमुद्रां प्रदर्श्य, धेनुमुद्रया[2]ऽमृतीकृत्य शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य, गन्धादिभिः सम्पूज्य, मूलेनाऽष्टवारमभिमन्त्र्य, मत्स्यमुद्रया[3]ऽऽच्छाद्य, सामान्यार्घ्यजलेन सिञ्चेत्।

मन्त्र—हे गंगे, हे यमुने, हे गोदावरि, हे सरस्वति, हे नर्मदे, हे सिन्धु, हे कावेरि, इस जल में निवास करो।

उपर्युक्त मन्त्र को पढ़कर योनिमुद्रा दिखावे, पश्चात् धेनुमुद्रा से उस जल को अमृत बनाकर शंखमुद्रा करे, फिर उसे गन्धादि से पूजन कर,

---

१. अङ्कुशाख्या भवेन्मुद्रा पृष्ठेऽनामा कनिष्ठया।
अङ्गुष्ठे तर्जनी वक्रा सरला चाऽपि मध्यमा॥
—मे० त०, अ० प्र०, श्लो० ३।

२. अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठाऽनामिका पुनः।
तथा तु तर्जनी मध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता॥
—मेरुतं०, अष्टम प्र०, श्लोक ३५।

३. दक्षपाणि-पृष्ठदेशे वामपाणितलं न्यसेत्।
अङ्गुष्ठौ चालयेत् सम्यङ् मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी॥
—म० म०, पू० ख०, द्वि० त०।

आत्मतत्त्वाय नमः। विद्यातत्त्वाय नमः। शिवतत्त्वाय नमः। परो रजसे सावदोमिति सप्तकृत्वोऽभिमन्त्र्य तज्जलं देवतात्मैक्यं विभाव्य किञ्चित् पात्रान्तरे गृहीत्वा पूजोपकरणसामग्रीमात्मानं च त्रिः प्रोक्षयेत्। इति विशेषार्घ्यस्थापनविधिः।

अर्घ्यस्योत्तरे पात्रचतुष्टयं पाद्या-ऽऽचमनीय-मधुपर्कार्थं संस्थाप्य, सकृदभिमन्त्र्य, तोयेनापूर्य, मूलेन त्रिवारमभिमन्त्र्य न्यासक्रमेण धर्मादीन् प्रोक्षणीरूपेण सम्पूज्य, तस्मिन् पीठोपरि देवतां विभाव्य सर्वाङ्गेषु पञ्चपुष्पाञ्जलिं दत्वा मूलाधारात् कुण्डलिनीमुत्थाप्य द्वारे स्थित्वा तत्र परमात्मना संयोज्य

आठ बार गायत्री मन्त्र पढ़ता हुआ उस जल को अभिमन्त्रित करे और मत्स्यमुद्रा से उस जल को आच्छादित करे, पश्चात् सामान्य अर्घ्यजल से उसे सींचे।

सींचने के समय 'आत्मतत्त्वाय नमः' से आरम्भ कर 'सावदोम्' तक पढ़कर सात बार अभिमन्त्रित करे। तथा उस जल को देवता की पूजा के योग्य समझकर थोड़ा-सा जल दूसरे पात्र में लेकर ऊपर तीन बार छिड़के।

अर्घ्य के उत्तर भाग में चार पात्र पाद्य, आचमनीय तथा मधुपर्क के लिए स्थापित करे। गायत्री मन्त्रसे अभिमन्त्रित कर, उसे जल से पूर्ण करे, कुशा के मूल से तीन बार अभिमन्त्रित कर न्यास के क्रम से धर्मादिकों की प्रोक्षण रूप से पूजा कर, उस आसन पर देवता को समझकर सर्वांग में पाँच बार पुष्पांजलि देकर, मूलाधार (नाभि-स्थान) से कुण्डलिनी को उठाकर द्वारदेश पर स्थिर हो अपने को परमात्मा में

तद्दृष्ट्याऽमृतधारया देवीं प्रीणयित्वा देवीं प्रसन्नां विभाव्य स्वस्मिन् देव्यात्मैक्यं विभाव्या-ऽऽसनादि - दीपान्तानुपचारान् प्रकल्प्य, बाह्यनैवेद्यं न देयमिति सम्प्रदायः, 'शिवो भूत्वा शिवं यजेदि'ति वचनात्

पीठपूजा

मं मण्डूकाय नमः। कं कालाग्निरुद्राय नमः। मुं मूल-प्रकृत्यै नमः। आं आधारशक्त्यै नमः। कूं कूर्मायै नमः। अं अनन्ताय नमः। वं वराहाय नमः। धं धरित्र्यै नमः। सुं सुधासिन्धवे नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः। मं मणिमण्डपाय नमः। कं कल्पतरवे नमः। स्वं स्वर्णवेदिकायै नमः। तदुपरि, रत्नसिंहासनाय नमः। आग्नेयादि - कोणेषु-धं धर्माय नमः। ज्ञं ज्ञानाय नमः। वं वैराग्याय नमः। अं ऐश्वर्याय नमः।

लगा कर, उसी दृष्टि से अमृतधारा द्वारा गायत्री को प्रसन्न कर और उन्हें प्रसन्न तथा अपने को देवी से अभिन्न समझ कर, आसन से लेकर दीप पर्यन्त पूजन करे। बाहर में नैवेद्य नहीं देना चाहिए, ऐसा सम्प्रदाय है, क्योंकि सम्प्रदायानुसार शिव बनकर ही शिव का यजन-पूजन करना चाहिए, इसलिए देवी बनकर देवी का पूजन भी उचित है। अतः नैवेद्य की आवश्यकता नहीं है।

पीठ-पूजा—पीठ पर अक्षत छोड़ता हुआ 'मं मण्डूकाय नमः' से लेकर 'स्वं स्वर्णवेदिकायै नमः' तक मन्त्र पढ़े। पुनः पीठ पर 'रत्नसिंहासनाय नमः' मन्त्र पढ़कर अक्षत छोड़े। फिर अग्निकोण में 'धं धर्माय नमः' पढ़कर अक्षत छोड़े। नैऋर्त्यकोण में 'ज्ञं ज्ञानाय नमः' वायव्य कोण में 'वं' वैराग्याय नमः' और ईशानकोण में 'अं ऐश्वर्याय नमः'

पूर्वादिदिक्षु–अं अधर्माय नमः। अं अज्ञानाय नमः अं अवैराग्याय नमः। अं अनैश्वर्याय नमः। मध्ये–अं अनन्ताय नमः। अं अम्बुजाय नमः आं आनन्दाय नमः। सं संविन्नाय नमः। सं सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः। पं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। वं विकारमयकेशरेभ्यो नमः। पं पञ्चाशद्वर्णकर्णिकायै नमः। अं द्वादशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः। सं सत्त्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। कं कलात्मने नमः। एतान्युपर्युपरि।

पीठस्य पूर्वभागे रां दीप्तायै नमः। रीं सूक्ष्मायै नमः। रूं भद्रायै नमः। रैं विभूत्यै नमः। रः अमोघायै नमः। रां विद्युतायै नमः। पीठमध्ये परदेवतायै नमः। सर्वतोमुख्यै नमः तदुपरि, बिन्दु-त्रिकोणावृत-दलाष्टकं रेखात्मकं चतुरस्रं चतुर्द्वारोपशोभितं यन्त्रं संस्थाप्य, ब्रह्म-विष्णु-रुद्रबिम्बात्मक-सौरपीठाय नमः। इति पीठं पूजयेत्

इति पीठपूजा समाप्ता।

पढ़कर अक्षत छोड़े। फिर पीठ के पूर्व में 'ॐ अं अधर्माय नमः', दक्षिण में 'अं आज्ञानाय नमः', पश्चिम में 'अं वैराग्याय नमः', उत्तर में 'अं अनैश्वर्याय नमः' पढ़कर अक्षत छोड़े। पुनः मध्य में 'अं अनन्ताय नमः' पढ़कर अक्षत छोड़े, फिर पीठ के ऊपर 'अं अम्बुजाय नमः' से लेकर 'कं कलात्मने नमः' तक पढ़कर अक्षत छोड़े।

तत्पश्चात् पीठ के पूर्व भाग में 'रां दीप्तायै नमः' से प्रारम्भ कर 'रां विद्युतायै नमः' तक पढ़कर अक्षत छोड़े। पीठ के मध्य में 'परदेवतायै नमः' सर्वतोमुख्यै नमः' तक पढ़कर अक्षत छोड़े। फिर पीठ के ऊपर बिन्दु-त्रिकोण को अष्टदल से आवृत, रेखारूप चौकोर और चार

अथ पूर्वोक्त ऋष्यादिन्यासं कृत्वा प्राणानायम्य मूलेन व्यापकं गायत्र्युच्चारणपूर्वकं हस्ताभ्यां पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा नासारन्ध्रेण पुष्पसञ्चयकल्पितयन्त्रमये कल्पितमूर्ति निःक्षिप्य तत्तत्स्थानगतानि आवरणानि ध्यात्वा आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्याऽऽवाहनं[1] सन्निधापनं[2] सन्निरोधनं[3] सम्मुखीकरणम्[4]

द्वार युक्त गायत्री यन्त्र स्थापित करे और 'ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-बिम्बात्मक-सौरपीठाय नमः' पढ़कर अक्षत छोड़े। पश्चात् गन्धादि से पीठ का पूजन करे।

इसके बाद फिर पहले कहे गये 'विश्वामित्र' आदि ऋष्यादि न्यास को करे तथा प्राणायाम कर गायत्री का उच्चारण करता हुआ मूल-मन्त्र से व्यापक मुद्रा करे, फिर दोनों हाथों में पुष्पाञ्जलि लेकर नासिका रन्ध्र से पुष्प समूहों के द्वारा बनाये गये यन्त्र में कल्पित गायत्री मूर्ति के ऊपर छोड़ कर, उन-उन स्थानों पर नियत आवरणों का ध्यान करे। आवाहन की मुद्रा दिखा कर, आवाहन, सन्निधापन, सन्निरोधन, सम्मुखीकरण,

---

१. स्थापनी सा तु मुद्रा स्यादेवाऽऽवाहन-मुद्रिका।
अधोमुखी कृता सा चेत् सर्वसंस्थापने क्षमा॥
—मे० तं०, अ० प्र०, श्लो० ३१

२. सन्निधापनमुद्रा स्याद्योगो मुष्टिद्वयस्य तु।
सम्यक् कृतावुभौ जातौ त्वंगुष्ठावुच्छ्रितौ यदि॥
—वही, श्लो० ३७

३. संरोधिनी तु सा मुद्रा मुष्टयोरन्तःप्रवेशितौ।
द्वावङ्गुष्ठौ मुष्टियोगो निश्छिद्रश्च भवेद् यदि॥
—वही, श्लो० ३८

४. सम्मुखीकरणी मुद्रा सा ज्ञेया मुष्टियुग्मकम्।
देवानां स्थापने या स्यादङ्गुष्ठद्वयमुक्तकम्॥

अवगुण्ठनं[१] सकलीकरणं[२] चेति। मूलान्ते श्रीगायत्रि देवि! इहावाहिता भव, पुष्पेण देव्या हृदि करं निधाय, 'आं ह्रीं क्रौं' इति मन्त्रेण द्वादशवारं जपेत्।

ततो भूतशुद्धिं प्राणप्रतिष्ठां विधाय पूजयेत्। 'नमः' इति मन्त्रेण देव्याः पादाम्बुजे पाद्यं दद्यात्। 'स्वाहा' इति मन्त्रेण मूर्ध्न्यर्घ्यम्, 'वम्' इति मन्त्रेण मुखे आचमनम्, ततः स्नानशालायां सुगन्धिसलिलैः स्नापयित्वा मूलेन शतसंख्येन

अवगुण्ठन, सकलीकरण आदि क्रिया करे। पश्चात् मूलान्त में 'श्रीगायत्रि देवि! इहावाहिता भव' ऐसा मन्त्र पढ़कर फूल से देवी के हृदय में अपना हाथ रखकर, 'आं ह्रीं क्रौं' यह मन्त्र बारह बार पढ़े।

तदनन्तर भूतशुद्धि तथा मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा कर देवी का पूजन करे। 'नमः' इस मन्त्र से देवी के पैरों पर पाद्य देवे, 'स्वाहा' इस मन्त्र से देवी के शिर पर अर्घ्यदान करे, पुनः 'वम्' इस मन्त्र से भगवती के मुख में आचमन करावे, फिर स्नानगृह में सुगन्धित जल से भगवती को

---

१. अवगुण्ठनमुद्रा तु दीर्घाधोमुखतर्जनी।
मुष्टिबद्धस्य हस्तस्य सव्यस्य भ्रामयेच्च ताम्॥

—मेरु०, अ० प्र०, श्लो० ३५

२. देवाङ्गेषु षडङ्गानां न्यासः स्यात् सकलीकृतिः।
अपि च—

हृदयादि-शरीरान्ते कनिष्ठाद्यङ्गुलीषु च।
हृदयादि-मन्त्रविन्यासः सकलीकरणं मतम्॥

वा राजोपचारैः[1] स्नापयित्वाऽङ्गप्रोक्षणं कृत्वा, मूलेन पीठं संस्थाप्य, पूर्वोक्तां ध्यात्वा, पञ्चोपचारैः[2] सम्पूज्य, देवतां प्रसन्नां विभाव्य, आवरणपूजां कुर्यात् ।

आवरण-पूजा

प्रथमम्—तत्र मध्ये त्रिकोणे व्याहृत्यै नमः । अथ कोणे गायत्र्यै नमः । नैर्ऋत्यकोणे सावित्र्यै नमः । वायव्यकोणे

स्नान करा कर, मूल मन्त्र से सौ बार राजोचित सामग्रियों से स्नान कराकर, अंग पोंछ कर, गायत्री मन्त्र पढ़कर, आसन पर रखे, और पूर्वोक्तरीति से ध्यान कर पंचोपचार से पूजन करे। तथा मन में 'भगवती गायत्री प्रसन्न हैं—ऐसी भावना करता हुआ आवरण-पूजा करे।

आवरणपूजा—आवरण-पूजा के लिए बनाये गये त्रिकोण के मध्य में 'व्याहृत्यै नमः', कोण पर 'गायत्र्यै नमः', नैर्ऋत्य कोण में, 'सावित्र्यै। नमः', वायव्य कोण में 'सरस्वत्यै नमः', ऐसा पढ़कर अक्षत छोड़े

---

१. राजोपचाराः, संस्कारभास्करे—

ततः पञ्चामृताभ्यङ्गपङ्कस्योद्वर्तनं तथा ।
मधुपर्कं परिमलैर्द्रव्याणि विविधानि च ॥
पादुकान्दोलनादर्शं व्यजनं छत्र-चामरे ।
वाद्यार्तिक्यं नृत्य-गीत-शय्या-राजोपचारकाः ॥

२. ध्यानमावाहनं चैव भक्त्या यच्च निवेदनम् ।
नीराजनं प्रणामश्च पञ्च पूजोपचारकाः ॥

—परशुरामकल्पसूत्रम्

सरस्वत्य नमः । त्रिकोणान्तरालेषु, ब्रह्मणे नमः । विष्णवे नमः । रुद्राय नमः । मूलेन पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि, शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥

अनेन पुष्पाञ्जलिं दत्वा द्वितीयावरणं पूजयेत् ।

इति प्रथमावरणम् ।

द्वितीयम्–अष्टदलेषु पूर्वादिदिक्षु–ॐ आदित्याय नमः । भानवे नमः । भास्कराय नमः । रवये नमः । आग्नेयादि-केशरेषु–उषायै नमः । प्रभायै नमः । प्रजायै नमः । सन्ध्यायै नमः । मूलमुच्चरन्, 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि–' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इति द्वितीयावरणम् ।

फिर त्रिकोण के बीच में 'ब्रह्मणे नमः, विष्णवे नमः, रुद्राय नमः' ऐसा पढ़े। तथा गायत्री मन्त्र पढ़कर पुष्पांजलि लेकर, 'अभीष्टसिद्धि में'—इस मन्त्र को पढ़े।

मन्त्रार्थ—हे शरणागत के ऊपर कृपा करनेवाली भगवती गायत्री, मेरा मनोरथ पूर्ण करो। हम तुम्हें यह प्रथमावरण पूजा भक्ति से युक्त हो समर्पित कर रहे हैं।

इस प्रकार मन्त्र पढ़कर पुष्पांजलि निवेदन करे, तत्पश्चात् द्वितीयावरण की पूजा करे।

द्वितीयावरण—अष्टदलों पर पूर्वादि दिशा के क्रम से 'आदित्याय नमः' से लेकर 'रवये नमः' तक पढ़कर चारों दिशाओं के चार कमल पर अक्षत छोड़े। फिर आग्नेय कोण में 'उषायै नमः' से प्रारम्भ कर 'सन्ध्यायै नमः' तक चारों कोनों वाले कमल पर अक्षत छोड़ें, फिर 'अभीष्टसिद्धि'—इस मन्त्र को पढ़ता हुआ पुष्पांजलि समर्पित करे।

तृतीयम्–**हृदि, ब्रह्मणे नमः। हृदयाय नमः। ईशाने, रुद्राय शिखायै वषट्। नैर्ऋत्ये, ईश्वराय कवचाय हुम्। वायव्ये, सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्। आग्नेये, सर्वात्मने अस्त्राय फट्। तत्तद् देवताभ्यो नमः। मूलेन पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा,**

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले!।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम्॥

अनेन पुष्पाञ्जलिं दत्वा, चतुर्थावरणं पूजयेत्।

इति तृतीयावरणम्।

चतुर्थम्–**तद्बहिः पूर्वाद्यष्टदलेषु। अमृतायै नमः। नित्यायै नमः। विश्वम्भरायै नमः। ईशान्य नमः। प्रभायै नमः। जयायै नमः। विजयायै नमः। शान्त्यै नमः। मूलेन पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा,**

तृतीयावरण—'ब्रह्मणे नमः' 'हृदयाय नमः' ऐसा पढ़कर हृदय का, ईशान कोण में 'रुद्राय शिखायै वषट्' से सिखा का, नैर्ऋत्यकोण में 'ईश्वराय कवचाय हुम्' से दोनों बाहुमूल का, वायव्य में 'सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्' से दोनों नेत्रों का, आग्नेय में 'सर्वात्मने अस्त्राय फट्' मन्त्र पढ़कर बायें हाथ पर दाहिने हाथ के द्वारा ताली बजावे। 'तत्तद्देवताभ्यो नमः' से शरीर के चारों ओर चुटकी बजावे। तथा पुष्पांजलि लेकर 'अभीष्टसिद्धि०' इत्यादि मन्त्र को पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित करे। पुनः चतुर्थावरण की पूजा करे।

चतुर्थावरण—प्रथम पूजित अष्टदल के बाहर वाले अष्टदल पर 'अमृतायै नमः' से आरम्भ कर 'शान्त्यै नमः' तक पढ़कर पूर्वादि क्रम

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ।।
इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इति चतुर्थावरणम् ।

पञ्चमम्–तद्बहिः पूर्वाद्यष्टदिक्षु । ॐ कान्त्यै नमः । दुर्गायै नमः । सरस्वत्यै नमः । विद्यारूपायै नमः । विशालायै नमः । ईशानायै नमः । वायव्यै नमः । विमलायै नमः । मूलमुच्चरन्, 'अभीष्टसिद्धिम्–' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् ।

इति पञ्चमावरणम् ।

षष्ठम्–पूर्वाद्यष्टदिक्षु । संहारिण्यै नमः । सूक्ष्मायै नमः । विश्वयोन्यै नमः । जयावहायै नमः । पद्मालयायै नमः । परायै नमः । शोभायै नमः । रूपायै नमः । मूलेन पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा, 'अभीष्टसिद्धिम्–' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् ।

इति षष्ठावरणम् ।

से आठों अष्टदल पर अक्षत छोड़े । तथा पुष्पांजलि लेकर 'अभीष्ट-सिद्धि मे देहि' मन्त्र को पढ़ता हुआ पुष्पांजलि समर्पित करे ।

पञ्चमावरण पूजा—चतुर्थावरण के बाहर पूर्व के क्रम से आठों दिशाओं में क्रमशः 'कान्त्यै नमः' से प्रारम्भ कर 'विमलायै नमः' तक मन्त्र पढ़कर गायत्री मन्त्र का उच्चारण करता हुआ पूजन करे । और 'अभीष्टसिद्धि' मन्त्र को पढ़ता हुआ पुष्पांजलि समर्पित करे ।

षष्ठावरण पूजा—पुनः पंचमावरण के बाहर पूर्वादि आठों दिशाओं के क्रम से 'संहारिण्यै नमः' से प्रारम्भ कर 'रूपायै नमः' तक पढ़कर अक्षत से आवाहन करे । पश्चात् पूजन कर, गायत्री मन्त्र का उच्चारण करे और 'अभीष्टसिद्धि' मन्त्र पढ़कर पुष्पांजलि अर्पण करे ।

सप्तमम्-पूर्वाद्यष्टदिक्षु । ॐ आं ब्राह्मयै नमः । ॐ ईं माहेश्वर्यै नमः । ॐ ऊं कौमार्यै नमः । ॐ ऋं वैष्णव्यै नमः । ॐ लृं वाराह्यै नमः । ॐ औं चामुण्डायै नमः । ॐ अः चण्डिकायै नमः । मूलमुच्चार्य 'अभीष्टसिद्धिं--' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इति सप्तमावरणम् ।

अष्टमम्-तद्बहिः पूर्वाद्यष्टदिक्षु । ॐ सों सोमाय नमः । ॐ बुं बुधाय नमः । ॐ शुं शुक्राय नमः । ॐ भौं भौमाय नमः । ॐ शं शनैश्चराय नमः । ॐ रां राहवे नमः । ॐ कें केतवे नमः । मूलेन 'अभीष्टसिद्धिं--' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इत्यष्टमावरणम् ।

नवमम्---पूर्वाद्यष्टदिक्षु । ॐ लं इन्द्राय नमः । ॐ रं अग्नये नमः । ॐ यं यमाय नमः । ॐ क्षं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ वं वरुणाय नमः । ॐ यं वायवे नमः । ॐ सं सोमाय नमः । ॐ ईं

सप्तमावरण पूजा—पूर्वोक्त पूर्वादि आठ दिशाओं में क्रमशः 'ॐ आं ब्राह्मचै नमः' से प्रारम्भ कर 'ॐ अः चण्डिकायै नमः' तक मन्त्र पढ़ता हुआ अक्षत आदि से आवाहन कर, गायत्री मन्त्र का उच्चारण करे। पुनः 'अभीष्टसिद्धि' इस मन्त्र को पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित करे।

अष्टमावरण—सप्तमावरण के बाहर पूर्वादि आठ दिशाओं के क्रम से 'ॐ सों सोमाय नमः' से प्रारम्भ कर, 'ॐ कें केतवे नमः' तक पढ़कर अक्षत आदि से आवाहन कर, पूजन करे और गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर 'अभीष्टसिद्धि' मन्त्र से पुष्पांजलि समर्पित करे।

नवमावरण—पूर्वादि आठ दिशाओं तक ऊपर और नीचे इस प्रकार दश के क्रम से 'ॐ लं इन्द्राय नमः' से आरम्भ कर

ईशानाय नमः । ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ अनन्ताय नमः । मूलेन 'अभीष्टसिद्धिम्०' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इति नवमावरणम् ।

दशमम्— ॐ वं वज्राय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ पं पाशाय नमः । ॐ गं गदायै नमः । ॐ त्रिं त्रिशूलाय नमः । ॐ चं चक्राय नमः । ॐ अं अम्बुजाय नमः । मूलेन 'अभीष्टसिद्धिम्--' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । इति दशमावरणम् ।

'यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो-यज्ञ-क्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥

इति पूजां समर्प्य, जपफलं देव्याः करे समर्प्य, पुष्पाञ्जलिं

'ॐ अनन्ताय नमः' तक पढ़ कर अक्षत आदि से आवाहन करे। पश्चात् गायत्री का उच्चारण करता हुआ 'अभीष्टसिद्धि' मन्त्र को पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित करे।

दशमावरण–'ॐ वं वज्राय नमः' से आरम्भ कर 'ॐ अं अम्बुजाय नमः' तक पढ़ कर पूर्वादि आठ दिशाओं में तथा ऊपर और नीचे तत्तद् देवताओं का आवाहन कर; पूजन करे तथा मूल मन्त्र का उच्चारण करता हुआ 'अभीष्टसिद्धि मे' मन्त्र से पुष्पांजलि समर्पित करे।

तत्पश्चात् सभी आवरणों की पंचोपचार से पूजा करे, आरती तथा पुष्पांजलि देकर 'यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या'— मन्त्र को पढ़कर पूजा समर्पित करे। तथा नित्य नियमानुसार जप करे, जप को भगवती के हाथ में समर्पित करे और पुष्पांजलि प्रदान कर, क्षमा-

दत्वा, क्षमाप्य, स्वहृदि उद्वास्य पुनर्ऋष्यादिन्यासं कृत्वा, निर्माल्यं विसृजेत।

इति नित्यपूजापद्धतिः समाप्ता।

नैमित्तिकमाह—

गुरुजन्मदिवसे स्वजन्मदिवसे जन्मनक्षत्रे विद्याप्राप्तिदिवसे पूर्णायां व्यतीपाते वा विशेषं पूजयेत्। इति नैमित्तिकम्।

पुरश्चरणविधिः

कर्ता स्वशक्त्या गुरुं सम्पूज्य, तदनुज्ञया देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणं प्राजापत्यं वा समाचरेत्। पुरश्चरणदिवसे सुगन्धसलिलैः स्नात्वा, पूजाप्रदेशे चतुरस्रं चतुर्द्वारं मण्डपं विधाय हृष्टधीर्वाङ्नियमितो मिताहारो जितेन्द्रियः प्रातरारभ्य मध्याह्ने जपेत्। एवं चतुर्विंशतिलक्षं जपेत्। तदुक्तम्—

प्रार्थना कर अपने हृदय में भगवती को बैठाकर पुनः पूर्वोक्त क्रम से ऋष्यादिन्यास कर, निर्माल्य को भगवती पर से हटा देवे। यहाँ तक गायत्री पुरश्चरण के लिए नित्य पूजन करना चाहिए।

नैमित्तिक गायत्री पूजन—गुरु के जन्मदिन में अथवा अपने जन्म-दिन में, या अपने नक्षत्र में, विद्याप्राप्ति के दिन, पूर्णिमा तथा व्यतीपात में गायत्री का विशेष रूप से पूजन करे।

पुरश्चरण विधि—पुरश्चरण करने वाला साधक अपनी शक्ति के अनुसार गुरु का पूजन कर और उनकी आज्ञा से शरीर-शुद्धि के लिए चान्द्रायण या प्राजापत्य व्रत करे। पुरश्चरण आरम्भ करने वाले दिन में सुगन्धित जल से स्नान कर, पूजा-स्थान पर समतल, चौकोर, चार द्वार का मण्डप बनाकर, प्रसन्नता से वाणी को नियन्त्रित कर, थोड़ा भोजन कर, अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रख कर, प्रातःकाल से

उक्तलक्षविधानेन कृत्वा विप्रा जितेन्द्रियाः।
क्षीरौदनं तिलं दूर्वा-क्षीरद्रुम-समिद्-द्रुमान् ॥

अष्टद्रव्येण च पृथक् सहस्रत्रितयं हुनेत्। मन्त्रफल-सिद्धये जपदशांशहोमः। तद्दशांशेन तर्पणम्। तद्दशांशेन मार्जनम्। तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम्।

इति पुरश्चरणविधिः।

अथ काम्यमुच्यते--

विद्यार्थी वाग्भवाद्यां, लक्ष्मीकामः श्रीबीजं, वश्यार्थे कामबीजम्, सर्वकामार्थे मायाबीजम्, आयुःकामार्थे मृत्युञ्जयचतुरक्षरी-सहितं जपेत्।

इति काम्यविधिः

आरम्भ कर मध्याह्न पर्यन्त जप करे। इस प्रकार प्रतिदिन के क्रमानुसार चौबीस लाख (२४०००००) गायत्री जप पूर्ण करे।

कहा भी है—उपर्युक्त क्रम के विधान से जितेन्द्रिय ब्राह्मण दूध, पायस, दूर्वा, दुधार पेड़ की लकड़ी, अष्टद्रव्य आदि से तीन हजार गायत्री मन्त्र के द्वारा हवन करे।

मन्त्र-फल की सिद्धि के लिए जप का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए।

काम्यपूजन—विद्यार्थी विद्या के लिए 'ॐ ह्लीं' लगाकर, लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए 'ॐ श्रीं' बीज तथा वशीकरण के लिए 'क्लीं' काम बीज, सम्पूर्ण मनोरथ की सिद्धि के लिए मायाबीज, आयु की कामना के लिए, मृत्युञ्जय चतुरक्षरी 'ॐ ह्रीं मां जीवय पालय' सहित गायत्री का जप करे।

तत्त्वसंख्यासहस्राणि समन्त्रं जुहुयात् तिलैः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुश्च विन्दति ।।
आयुष्यं साज्यहविषा केवलेनाथ सर्पिषा ।
पर्वाङ्कितैस्तिलैर्मन्त्री जुहुयात् त्रिसहस्रकम् ।।
अरुणाक्षैस्त्रिमध्वाज्यैः प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः ।
बहुना किमिहोक्तेन यथावत् साधु साधिता ।।
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धकामदुहा स्मृता ।।

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-रचिते गायत्री-रहस्ये
गायत्री-पद्धतिः समाप्ता ।

•

गायत्री मन्त्र के द्वारा तिल से चौबीस हजार हवन करे, तो वह सब पापों से मुक्त हो जाता है, और उसकी आयु बढ़ती है, तथा वह दीर्घायु होता है। आयु की कामना के लिए हवि, घी अथवा केवल घी से या तिल से तीन हजार गायत्री मन्त्र के द्वारा हवन करे। अरुणाक्ष (मजीठ), मधु, घी तथा ब्रह्मवृक्ष (पलाश) के पुष्प से हवन करने का फल बहुत है, क्या कहें, साधक को गायत्री की सिद्धि हो जाती है। ब्राह्मणों के लिए कामधेनु के समान यह विद्या सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करनेवाली होती है।

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' भाषाटीका-
सहित गायत्री-रहस्य में गायत्री-पद्धति समाप्त ।

गायत्री-पटलम्

ब्रह्मशापविमोचनम्

विनयोगः--ॐ अस्य श्रीब्रह्मशाप-विमोचन-मन्त्रस्य निग्रहाऽनुग्रहकर्ता प्रजापतिर्ऋषिः, कामदुघा गायत्रीच्छन्दः, ॐ ब्रह्मशापविमोचन-गायत्रीशक्तिर्देवता, ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः ।

मन्त्रः-सवितुः ब्रह्मोमेत्युपासनात् तत्तद्ब्रह्मविदो विदुस्तां प्रयतन्ति धीराः । सुमनसा वाचा ममाऽग्रतः । ॐ देवि गायत्रि ! त्वं ब्रह्मशापाद् विमुक्ता भव ।

विशेष—ब्रह्मा, वसिष्ठ तथा विश्वामित्र ने गायत्री मन्त्र को शाप दिया है, एतदर्थं शाप-निवृत्ति के लिए शाप-विमोचन करना चाहिए।

विनियोग—दाहिने हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीब्रह्मशाप-विमोचनमन्त्रस्य–' से आरम्भ कर, 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर भूमि पर जल छोड़े ।

ब्रह्मशापविमोचन मन्त्र—विनियोग करने के बाद 'सवितुः ब्रह्मो-मेत्युपासनात्—' से लेकर 'विमुक्ता भव' यहाँ तक के मन्त्र का उच्चारण करे ।

विश्वामित्रशापविमोचनम्

विनियोगः—ॐ विश्वामित्र-शापविमोचन-मन्त्रस्य नूतन-सृष्टिकर्ता विश्वामित्र-ऋषिः, वाग्दोहा गायत्रीच्छन्दः, भुक्ति-मुक्तिप्रदा विश्वामित्रानुग्रहीता गायत्रीशक्तिः, सविता देवता, विश्वामित्रशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः।

मन्त्रः—तत्त्वानि चाङ्गेष्वग्निचितो धियांसः त्रिगर्भा यदुद्भवां देवाश्चोचिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये यन्मुखान्निःसृतो वेदगर्भः। ॐ गायत्रि! त्वं विश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव।

वसिष्ठशापविमोचनम्

विनियोगः—ॐ वसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य वसिष्ठऋषिः, विश्वोद्भवो गायत्रीच्छन्दः, वसिष्ठानुग्रहीता, गायत्रीशक्ति-र्देवता, वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः।

पश्चात् विश्वामित्रशापविमोचन के लिए निम्नलिखित विनियोग-पूर्वक मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए।

विनियोग—हाथ में जल लेकर, 'ॐ विश्वामित्रशापविमोचन-मन्त्रस्य'—से प्रारम्भ कर 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर जल छोड़े।

विश्वामित्रशापविमोचनमन्त्र—'तत्त्वानि'—यहाँ से आरम्भ कर 'विमुक्ता भव' तक मन्त्र पढ़े।

वसिष्ठशापविमोचन के लिए विनियोग तथा मन्त्र कहते हैं—

विनियोग—'ॐ वसिष्ठशापविमोचन'—से आरम्भ कर 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर जल छोड़े।

मन्त्रः—तत्त्वानि चाङ्गेष्वग्निचितो धियासः ध्यायन्ति विष्णोरायुधानि बिभ्रत्। जनानता सोपरमं च शश्वत्। गायत्री मासाच्छुरनुत्तमं च धाम। ॐ गायत्रि! त्वं वसिष्ठ-शापाद् विमुक्ता भव।

प्रार्थना—सोऽहमर्कमयं ज्योतिरर्कः ज्योतिरहं शिवः।
आत्मज्योतिरहं शुक्लं शुक्लं ज्योतिरसोऽहमोम्॥
अहो विष्णुमहेशेशे! दिव्ये सिद्धिसरस्वति!।
अजरे अमरे चैव दिव्ययोने! नमोऽस्तु ते॥

शुद्धगायत्रीध्यानम्

यद्देवाऽसुरपूजितं परतरं सामर्थ्यतारात्मकं
पुन्नागा-ऽम्बुज-पुष्प-नाग-बकुलैः केशैः शुकैरर्चितम्।
नित्यं ध्यानसमस्तदीप्तिकिरणं कालाग्निरुद्दीपनं
तत्संहारकरं नमामि सततं पातालसंस्थं मुखम्॥

इति गायत्रीशापविमोचनम्।

वसिष्ठशापविमोचन मन्त्र—'तत्त्वानि'—से आरम्भ कर 'विमुक्ता भव' तक मन्त्र पढ़े।

तदनन्तर 'सोऽहमर्कमयं ज्योतिरर्कः—' से आरम्भकर 'दिव्ययोने! नमोऽस्तु ते' तक प्रार्थना मन्त्र पढ़कर गायत्री को नमस्कार करे।

पश्चात् 'यद्देवाऽसुरपूजितं—' से 'पातालसंस्थं मुखम्' तक श्लोक पढ़कर तेजःस्वरूपा गायत्री का ध्यान करे।

अथ न्यासः

वर्णन्यासः—**ॐ तत् पादाङ्गुलिपर्वभ्यां नमः। ॐ स पादाङ्गुलिभ्यो नमः। ॐ वि जङ्घाभ्यां नमः। ॐ तुर्जानुभ्यां नमः। ॐ व ऊरुभ्यां नमः। ॐ रे शिश्नाय नमः। ॐ णि वृषणाभ्यां नमः। ॐ यं कट्यै नमः। ॐ भर्नाभ्यै नमः। ॐ गो उदराय नमः। ॐ दे स्तनाभ्यां नमः। ॐ व उरसे नमः। ॐ स्य कण्ठाय नमः। ॐ धी दन्तेभ्यो नमः। ॐ म तालुने नमः। ॐ हि नासिकायै नमः। ॐ धि नेत्राभ्यां नमः। ॐ यो भ्रूभ्यां नमः। ॐ यो ललाटाय नमः। ॐ नः पूर्वमुखाय नमः। ॐ प्र दक्षिणमुखाय नमः। ॐ चो पश्चिममुखाय नमः। ॐ द उत्तरमुखाय नमः। ॐ यात् मूर्ध्ने नमः।**

वर्णन्यास—'ॐ तत् पादांगुलिपर्वभ्यां नमः' मन्त्र पढ़कर पैर के प्रत्येक अँगुलियों के गाँठों का स्पर्श करे। 'ॐ स पादांगुलिभ्यो नमः' से पैर के सभी अँगुलियों का, 'ॐ वि जंघाभ्यां नमः' पढ़कर दोनों जाँघों का स्पर्श, 'ॐ तुर्जानुभ्यां नमः' से दोनों जानु का, 'ॐ व ऊरुभ्यां नमः' से कटि के नीचे का भाग, 'ॐ रे शिश्नाय नमः' से शिश्न (लिंग) का स्पर्श, 'ॐ णि वृषणाभ्यां नमः' से वृषण (अण्डकोष) का, 'ॐ वं कट्यै नमः' से कटि का, 'ॐ भर्नाभ्यै नमः' से नाभि का, 'ॐ गो उदराय नमः' से पेट का, 'ॐ दे स्तनाभ्यां नमः' से दोनों स्तन का, 'ॐ व उरसे नमः' से छाती का स्पर्श करे। 'ॐ स्य कण्ठाय नमः' से कण्ठ का, 'ॐ धी दन्तेभ्यो नमः' से दाँतों का, 'ॐ म तालुने नमः' से तालु का, 'ॐ हि नासिकायै नमः' से नासिका (नाक) का स्पर्श,

करन्यासः—ॐ तत्सवितुरङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ भर्गोदेवस्य मध्यमाभ्यां नमः। ॐ धीमहि अनामिकाभ्यां नमः। ॐ धियो यो नः कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ प्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

देहन्यास—ॐ भूः पादयोः। ॐ भुवः जान्वोः। ॐ स्वः नाभौ। ॐ महः हृदये। ॐ जनः कण्ठे। ॐ तपः ललाटे।

'ॐ धि नेत्राभ्यां नमः' पढ़कर दोनों नेत्रों को छुए, 'ॐ यो भ्रूभ्यां नमः' से भौहों का स्पर्श, 'ॐ यो ललाटाय नमः' से ललाट का, 'ॐ नः पूर्वमुखाय नमः' से मुख के पूर्वी भाग का, 'ॐ प्र दक्षिणमुखाय नमः' से मुख के दक्षिणी भाग का, 'ॐ चो पश्चिममुखाय नमः' से मुख के पश्चिमी भाग का, 'ॐ द उत्तरमुखाय नमः' से मुख के उत्तरी हिस्से का, 'ॐ यात् मूर्ध्ने नमः' मन्त्र पढ़कर शिर का स्पर्श करे।

करन्यास—'ॐ तत्सवितुरंगुष्ठाभ्यां नमः' मन्त्र पढ़कर अँगूठे का स्पर्श, 'ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः' से तर्जनी अँगुलि का, 'ॐ भर्गो देवस्य मध्यमाभ्यां नमः' से मध्यमा अँगुलि का, 'ॐ धीमहि अनामिकाभ्यां नमः' से अनामिका अँगुलि का, 'ॐ धियो यो नः कनिष्ठिकाभ्यां नमः' पढ़कर कानी अँगुलि का स्पर्श करे और 'ॐ प्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः' से दोनों हाथों की हथेलियों से हथेलियों को तथा पीठों से पीठों का स्पर्श करना चाहिए।

देहन्यास—तत्पश्चात् देहन्यास करे, जैसे—'ॐ भूः पादयोः' से दोनों पैरों का स्पर्श, 'ॐ भुवः जान्वोः' पढ़कर दोनों जानु का, 'ॐ स्वः नाभौ' से नाभि का, 'ॐ महः' से हृदय का, 'ॐ जनः' से कण्ठ

ॐ सत्यं मूर्ध्नि । ॐ तत्पादयोः । ॐ सवितुर्जान्वोः । ॐ वरेण्यं स्कन्धयोः । ॐ भर्गो हृदये । ॐ देवस्य कण्ठे । ॐ धीमहि वक्त्रे । ॐ धियो यो नेत्रे । ॐ नः मुखे । ॐ प्रचोदयात् अस्त्राय फट् ।

करन्यासः—ॐ आपः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ज्योतिस्तर्जनीभ्यां नमः । ॐ रसो मध्यमाभ्यां नमः । ॐ अमृतम् अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ब्रह्म कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ भूर्भुवः स्वरोम् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ अग्नये हृदयाय नमः । ॐ वायवे शिरसे स्वाहा । ॐ सूर्याय शिखायै वषट् ।

का, 'ॐ तपः' से ललाट का, 'ॐ सत्यं' मन्त्र से सिर का, 'ॐ तत् पादयोः' से दोनों चरणों का, 'ॐ सवितुर्जान्वोः' से जानु का, 'ॐ वरेण्यं' से दोनों कन्धे का, 'ॐ भर्गो' से हृदय का, 'ॐ देवस्य' से कण्ठ का, 'ॐ धीमहि' से मुख का, 'ॐ धियो यो नेत्रे' से दोनों नेत्रों का, 'ॐ नः' से मुख का स्पर्श करना चाहिए। पश्चात् 'ॐ प्रचोदयात्' मन्त्र पढ़कर ताली बजा दे।

पुन करन्यास करे, यथा—'ॐ आपः अंगुष्ठाभ्यां नमः' से अँगूठे का स्पर्श करे, 'ॐ ज्योतिस्तर्जनीभ्यां नमः' से तर्जनी अँगुलि का, 'ॐ रसो मध्यमाभ्यां नमः' से मध्यमा अँगुलि का, 'ॐ अमृतम् अनामिकाभ्यां नमः' से अनामिका अँगुलि का, 'ॐ ब्रह्म कनिष्ठिकाभ्यां नमः' से कानी अँगुलि का स्पर्श करना, 'ॐ भूर्भुवः स्वरोम्' मन्त्र से दोनों हाथ की हथेलियों तथा पृष्ठ भाग को छूना चाहिए। 'ॐ अग्नये हृदयाय नमः' से हृदय का, 'ॐ वायवे शिरसे स्वाहा' से सिर का,

ॐ ब्रह्मणे कवचाय हुम्। ॐ विष्णवे नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ रुद्राय अस्त्राय फट्। इति न्यासः।

ब्रह्मगायत्रीमन्त्रः

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ अपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्।

इति सप्तव्याहृतिसहितगायत्रीमन्त्रः।

अथ वेदादिगीतायाः प्रसादजननं विधिम्।
गायत्र्याः सम्प्रवक्ष्यामि धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्षदम्॥ १॥
नित्य-नैमित्तके काम्ये तृतीये तपवर्द्धने।
गायत्र्यास्तु परं नास्ति इह लोके परत्र च॥ २॥

'ॐ सूर्याय शिखायै वौषट्' से शिखा का, 'ॐ ब्रह्मणे कवचाय हुम्' से दोनों हाथ की भुजा का स्पर्श, 'ॐ विष्णवे नेत्रत्रयाय वौषट्' से दोनों नेत्रों का स्पर्श करना चाहिए। पश्चात् 'ॐ रुद्राय अस्त्राय फट्' मन्त्र पढ़कर ताली बजा दे।

'ॐ भूः ॐ भुवः—' यह सप्तव्याहृति संहित ब्रह्मगायत्री मन्त्र है।

इसके अनन्तर वेदादि में कहे गये गायत्री की प्रसन्नता की विधि कहता हूँ, जिससे मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है॥१॥ नित्य-नैमित्तिक, काम्य-कर्मों में तथा तप की वृद्धि के लिए गायत्री से बढ़कर इस लोक तथा परलोक में और कोई दूसरा देवता नहीं है॥२॥ मध्याह्न में थोड़ा भोजन करे, मौन होकर

मध्याह्ने मितभुङ् मौनी त्रिस्थानार्चनतत्परः ।
जपेल्लक्षत्रयं धीमान् नाऽन्यमानसकस्तु यः ॥ ३ ॥
कर्मभिर्यो जपेत् पश्चात् क्रमशः स्वेच्छयाऽपि वा ।
यावत्कार्यं न कुर्वीत न लोपेत् तावता व्रतम् ॥ ४ ॥
आदित्यस्योदये स्नात्वा सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं धनं च लभते ध्रुवम् ॥ ५ ॥
त्रिरात्रोपोषितः सम्यग् घृतं हुत्वा सहस्रशः ।
सहस्रं लाभमाप्नोति हुत्वाऽग्नौ खदिरेन्धनम् ॥ ६ ॥
पालाशैः समिधैश्चैव घृताक्तानां हुताशने ।
सहस्रं लाभमाप्नोति राहु - सूर्य - समागमे ॥ ७ ॥

त्रिकाल भगवती गायत्री का पूजन करे तथा गायत्री का ध्यान करता हुआ अपनी इष्ट-सिद्धि के लिए गायत्री का एक लाख जप करना चाहिए ॥ ३ ॥ कर्म करता हुआ किसी कामना से अथवा स्वेच्छा से गायत्री का जप करना चाहिए। परन्तु जब तक कार्य सिद्धि न हो तब तक गायत्री का निरन्तर जप करना चाहिए। क्रिया तथा व्रत का लोप नहीं करना चाहिए ॥ ४ ॥

सूर्योदय के पहले स्नान कर प्रतिदिन एक सहस्र गायत्री का जप करना चाहिए। इस प्रकार मनुष्यको आयु, आरोग्य और ऐश्वर्य एवं धनकी प्राप्ति निश्चित होती है ॥५॥ तीन रात उपवास कर, खैर की लकड़ी को घृत में डुबोकर उससे हवन करे, तो मनुष्य को सहस्रों का लाभ होता है ॥६॥ पलाश की समिधा (लकड़ी) घृत में डुबो कर

हुत्वा तु खदिरं वह्नौ घृताक्तं रक्तचन्दनम् ।
सहस्रहेममाप्नोति राहुचन्द्रसमागमे ॥ ८ ॥
रक्तचन्दनमिश्रं तु सघृतं हव्यवाहने ।
हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्रं गोमयं द्विजः ॥ ९ ॥
जाती - चम्पक - राजार्क - कुसुमानां सहस्रश ।
हुत्वा वस्त्रमवाप्नोति घृताक्तानां हुताशने ॥१०॥
सूर्यमण्डलबिम्बे च हुत्वा तोयं सहस्रशः ।
सहस्रं प्राप्नुयाद्धैमं रौप्यमिन्दुमये हुते ॥११॥
अलक्ष्मीपापसंयुक्ते मलव्याधिविनाशके ।
मुच्येत् सहस्रजाप्येन स्नायाद् यस्तु जलेन वै ॥१२॥

सूर्यग्रहण के समय गायत्री मन्त्र से एक हजार हवन करे तो अवश्य ही सहस्रों का लाभ होता है ॥७॥ खैर की लकड़ी एवं लालचन्दन को घृत में डुबो कर चन्द्रग्रहण में गायत्री मन्त्र से एक सहस्र हवन करे तो सोने की प्राप्ति होती है ॥८॥ रक्तचन्दन से मिला हुआ घृतयुक्त गाय का कण्डा गायत्री मन्त्र से जो ब्राह्मण अग्निमें हवन करता है उसे हजारों गोमय (रत्नविशेष) की प्राप्ति होती है ॥ ९ ॥ मालती, चम्पा तथा राजार्क (मन्दार) के पुष्पों को घी में डुबो कर गायत्री मन्त्र से अग्नि में हवन करे, तो विविध वस्त्रों की प्राप्ति होती है ॥ १० ॥

सूर्यमण्डल बिम्ब में गायत्री के द्वारा जल से प्रतिदिन एक हजार अर्घ दान करे तो सुवर्ण तथा चन्द्रमण्डल में गायत्री के द्वारा प्रतिदिन जल से अर्घ दान करने पर चाँदी की प्राप्ति होती है ॥११॥ द्ररिता, पाप, अशान्ति तथा व्याधि के विनाश के लिए प्रतिदिन एक हजार

गोघृतेन सहस्रेण लोध्रेण जुहुयाद् यदि ।
चोरा-ऽग्नि-मारुतोत्थानि भयानि न भवन्ति हि ॥१३॥
क्षीराहारो जपेल्लक्षमपमृत्युमपोहति ।
घृताशी प्राप्नुयान्मेधां बहुविज्ञान-सञ्चयाम् ॥१४॥
हुत्वा वेतसपत्राणि घृताक्तानि हुताशने ।
लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमं न संशयः ॥१५॥
लक्षेण भस्महोमस्य हुत्वा ह्युत्तिष्ठते जलात् ।
आदित्याभिमुखं स्थित्वा नाभिमात्रजले शुचौ ॥१६॥
गर्भपातादि-प्रदराश्चाऽन्ये स्त्रीणां महारुजः ।
नाशमेष्यन्ति ते सर्वे मृतवत्सादि-दुःखदाः ॥१७॥

गायत्री के मन्त्र से अभिमन्त्रित जल से स्नान करे ॥ १२ ॥ लोध का पुष्प गाय के घी के साथ गायत्री मन्त्र से प्रतिदिन एक हजार अग्नि में हवन करे तो चोर, अग्नि तथा वायु से उत्पन्न होने वाले कोई उपद्रव नहीं होते, यह निश्चय है ॥ १३ ॥ यदि मनुष्य दूध पीकर एक लाख गायत्री का जप करे तो निश्चय ही उसकी अपमृत्यु (अकालमृत्यु) नहीं होती । घी पीकर लक्ष गायत्री को जपने वाले ब्राह्मण की बुद्धि अत्यन्त तीव्र हो जाती है और वह अनेक विशिष्टज्ञान से युक्त हो जाता है ॥ १४ ॥

बेंत के पत्तो को घी के साथ गायत्री मन्त्र से अग्नि में हवन करने से निश्चय ही मनुष्य लखपति तथा सार्वभौम हो जाता है--इसमें संशय नहीं ॥१५॥ जो ग्रीष्म ऋतु में नाभिमात्र जल में स्थित होकर गायत्री मन्त्र के द्वारा एक लाख भस्म की आहुति देता है, पुनः जल के बाहर होकर मन्त्र के द्वारा सूर्य का उपस्थान करता है ॥१६॥ तो

तिलानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सर्वकामसमृद्धात्मा परं स्थानमवाप्नुयात् ॥१८॥
यवानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सर्वकामसमृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात् ॥१९॥
घृतस्याहुतिलक्षेण सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
पञ्चगव्याशनो लक्षं जपेज्जातिस्मृतिर्भवेत् ॥२०॥
तदेव ह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहुसाधनम्।
अन्नादि-हवनान्नित्यमन्नाद्यं च भवेत् सदा ॥२१॥

उसके प्रभाव से गर्भपात, प्रदर तथा मृतवत्सा आदि दुःख देनेवाले स्त्रियों के सारे दोष निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। उत्पन्न हुए पुत्रों का बाल्यपन में मर जाना ही मृतवत्सा कहलाता है ॥ १७ ॥

घृत में तिल को मल कर गायत्री मन्त्र के द्वारा अग्नि में एक लाख आहुति करने से मनुष्य की सारी कामनाओं की पूर्ति हो जाती है और उत्तम लोक की प्राप्ति होती है ॥ १८ ॥

इसी प्रकार यव को घी से संयुक्त कर गायत्री मन्त्र से अग्नि में एक लाख हवन करने से मनुष्य की सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा उसको सब प्रकार की सिद्धि मिलती है ॥ १९ ॥ केवल घी से गायत्री मन्त्र के द्वारा एक लाख आहुति देने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं तथा पंचगव्य पीकर एक लाख गायत्री के जप से मनुष्य को जन्मान्तर का स्मरण हो जाता है ॥ २० ॥

पंचगव्य का एक लाख हवन करने से सब प्रकार के साधन प्राप्त हो जाते हैं। तथा नित्य अन्नादि के हवन से अन्न आदि की प्राप्ति होती है ॥ २१ ॥

जुहुयात् सर्वसाध्यानामाहुत्यायुतसंख्यया ।
रक्तसिद्धार्थकान् हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून् ॥२२॥
लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत् ।
हुत्वा तु करवीराणि रक्तानि ज्वालयेज्ज्वरम् ॥२३॥
हुत्वा भिल्लातकं तैलं देशादेव प्रचालयेत् ।
हुत्वा तु निम्बपत्राणि विद्वेषशान्तये नृणाम् ॥२४॥
रक्तानां तन्दुलानां च घृताक्तानां हुताशने ।
हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्न स जीयते ॥२५॥
प्रत्यानयनसिद्ध्यर्थं मधु-सर्पिः-समन्वितम् ।
गवां क्षीरं प्रदीप्तेऽग्नौ जुह्वतस्तत्प्रशाम्यति ॥२६॥

दस हजार गायत्री मन्त्र के द्वारा रक्त सिद्धार्थक (लाल सरसों) का हवन करने से सभी शत्रु वश में हो जाते हैं ॥ २२ ॥ मधु से युक्त सेंधा नमक का दस हजार गायत्री मन्त्र द्वारा हवन करने से मनुष्य के वश में सभी हो जाते हैं। लाल करवीर (कनइल) पुष्प के हवन करने से सभी प्रकार के ज्वरों का नाश होता है ॥ २३ ॥

गायत्री मन्त्र के द्वारा भिल्लातक (लोध) के तेल का एक लाख हवन करने से मनुष्य अपने शत्रु को देश से भगा देता है तथा उतनी ही संख्या से निम्ब के पत्र (पत्ता) का हवन करने से मनुष्यों को शत्रु का द्वेष समाप्त हो जाता है ॥२४॥ लाल चावल (साठी का) घी में आर्द्र (मिला) कर एक लाख हवन करने से मनुष्य बलवान् होता है और उसका शत्रु उसे कभी पराजित नहीं कर सकता ॥२५॥ गाय का दूध, मधु तथा घी में मिलाकर एक लाख गायत्री मन्त्र के द्वारा हवन करने से विदेश गया हुआ आदमी अपने-आप घर लौट आता है ॥ २६ ॥

ब्रह्मचारी जिताहारो यः सहस्रत्रयं जपेत् ।
संवत्सरेण लभते धनैश्वर्यं न संशयः ॥२७॥
शमी-बिल्व-पलाशानामर्कस्य तु विशेषतः ।
पुष्पाणां समिधश्चैव हुत्वा हेममवाप्नुयात् ॥२८॥
आब्रह्मत्र्यम्बकादीनां यस्यायतनमाश्रितः ।
जपेल्लक्षं निराहारः स तस्य वरदो भवेत् ॥२९॥
बिल्वानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने ।
परां श्रियमवाप्नोति यदि न भ्रूणहा भवेत् ॥३०॥
पद्मानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने ।
प्राप्नोति राज्यमखिलं सुसम्पन्नमकण्टकम् ॥३१॥

ब्रह्मचारी आहारका संयम कर, यदि प्रतिदिन तीन हजार गायत्री मन्त्र का जप करे, तो एक वर्ष के भीतर ही वह धन, शक्ति और बल प्राप्त कर लेता है, इसमें संशय नहीं ॥२७॥ शमी, बेल, पलाश तथा मन्दार का फूल और उसकी लकड़ी से एक लाख गायत्रीके द्वारा हवन करने वाले को सुवर्णकी प्राप्ति होती है ॥२८॥ ब्रह्मचारी पुरुष जिस-किसी के घर पर रहकर यदि निराहार होकर, एक लाख गायत्री का जप करे, तो समस्त जगत् को वर देने वाला हो जाता है ॥२९॥

घी में डुबोयी गयी बेल की लकड़ी से एक लाख गायत्री के द्वारा अग्नि में हवन करने से मनुष्य लक्ष्मीवान् हो जाता है, यदि वह भ्रूणहा (भ्रूण-गर्भस्थ शिशु की हत्या करनेवाला) न हो तो ॥३०॥ घृताक्त-घृतयुक्त कमल के फूल का एक लाख गायत्री के द्वारा प्रदीप्त अग्नि में हवन करने वाला अकण्टक समृद्ध राज्य को प्राप्त करता है ॥३१॥

पञ्चविंशतिलक्षेण दधि - क्षीरं हुताशने।
स्वदेहे सिद्ध्यते जन्तुः कौशिकस्य मतं तथा ।३२॥
एकाहं पञ्चगव्याशी एकाहं मारुताशनः।
एकाहं च द्विजोऽन्नाशी गायत्रीजप उच्यते ॥३३॥
महारोगा विनश्यन्ति लक्षजप्यानुभावतः।
शतेन गायत्र्याः स्नात्वा शतमन्तर्जले जपेत् ॥
शतेन यस्त्वपः पीत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३४॥
गोघ्नः पितृघ्न - मातृघ्नौ ब्रह्महा गुरुतल्पगः।
स्वर्णहारी तैलहारी यस्तु विप्रः सुरां पिबेत् ॥३५॥
चन्दनद्वयसंयुक्तं कर्पूरं तण्डुलं यवम्।
लवङ्गं सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकैः ॥३६॥

गौ का दूध तथा दही का गायत्री मन्त्र के द्वारा पचीस लाख के, प्रज्वलित अग्नि में हवन करने वाला इसी शरीर से सिद्ध हो जाता है, ऐसा विश्वामित्र का मत है ॥३२।

गायत्री जप द्वारा महारोग की शान्ति के लिए एक दिन पंचगव्य का प्राशन, दूसरे दिन वायु का आहार तथा तीसरे दिन अन्न का भोजन कर, ब्राह्मण यदि एक लाख गायत्री का जप करे और नित्य एक सौ गायत्री से स्नान कर जल के भीतर एक सौ गायत्री का जप करता हुआ तथा एक सौ गायत्री से आचमन करता हुआ जप करे, तो वह मनुष्य सम्पूर्ण पापों से छूट जाता है ॥ ३३-३४ ॥ गाय, पिता, माता तथा ब्राह्मण का बध करने वाला, गुरु तल्पगामी, सोना तथा तेल को चुराने-वाला, मद्य पीने वाला ब्राह्मण लाल, सफेद चन्दन, कपूर, चावल, यव, लवंग, सुन्दर फल (जायफल आदि), घी और मिश्री का हवन आम

अन्यं न्यूनविधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः ।
एवं कृते महासौख्यं प्राप्नोति साधको ध्रुवम् ॥३७॥
अभोज्यभोजनं हुत्वा कृत्वा वा कर्मगर्हितम् ।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानो महीमपि स-सागराम् ॥३८॥
ये चाऽस्य उत्थिता लोके ग्रहाः सूर्यादयो भुवि ।
ते यान्ति सौम्यतां सर्वे शिवे इति न संशयः ॥३९॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचिते गायत्री-रहस्ये
गायत्री-पटलं समाप्तम् ।

●

की लकड़ी से एक लाख गायत्री के द्वारा प्रदीप्त अग्नि में हवन करे तो उसके ऊपर गायत्री देवी प्रसन्न हो जाती हैं और ऐसा करने से साधक को अनेक प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है ॥ ३५-३७ ॥

नीच काम अज्ञात रूप से कर लेने पर घी से मिले हुए अन्न का एक लाख गायत्री से प्रदीप्त अग्नि में हवन करे तो सागरपर्यन्त पृथ्वी का दान लेने पर भी पतित नहीं होता ॥३८॥ यदि सूर्यादि ग्रह भी उसके विरुद्ध हों, तो भी उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते । सभी दुष्ट ग्रह उसके कल्याणकारक हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥३९॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका-सहित गायत्री-रहस्य में
गायत्री-पटल समाप्त ।

●

१. गायत्री-कवचम्

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दो गायत्री देवता, ॐ भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम्, गायत्रीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

ध्यानम्

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटिसमप्रभाम्।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि-सुशीतलाम् ॥ १ ॥
त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहारविराजिताम्।
वरा-ऽभयांकुश-कशा-हेमपात्राक्षमालिकाम् ॥ २ ॥
शङ्ख-चक्रा-ऽब्ज-युगलं कराभ्यां दधतीं पराम्।
सित-पङ्कज-संस्थां च हंसारूढां सुखस्मिताम् ॥
ध्यात्वैवं मनसाम्भोजे गायत्री-कवचं जपेत् ॥ ३½ ॥

विनियोग—हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य०' से आरम्भ कर, 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर नीचे गिरा देना चाहिए।

ध्यान—जो गायत्री देवी पाँच मुख तथा दशभुजा वाली हैं, जिनकी कान्ति करोड़ों सूर्य के समान है, तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान जो शीतल हैं, जो ब्रह्मा आदि देवताओं को भी वर देने वाली हैं, जिनके तीन नेत्र हैं तथा मुखमण्डल स्वच्छ (प्रसन्न) है, जो मोतियों की माला से विभूषित हैं, जिनके दोनों हाथों में वर, अभय, अंकुश, कशा, स्वर्णपात्र, अक्षमाला, शंख, चक्र तथा ध्वज विराजमान हैं, जो

ब्रह्मोवाच

कवचम्

विश्वामित्र ! महाप्राज्ञ ! गायत्रीकवचं शृणु ।
यस्य विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत् क्षणात् ॥ १ ॥
सावित्री मे शिरः पातु शिखायाममृतेश्वरी ।
ललाटं ब्रह्मदैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी ॥ २ ॥
कर्णौ मे पातु रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके ।
गायत्री वदनं पातु शारदा दशनच्छदौ ॥ ३ ॥
द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती ।
सांख्यायनी नासिका मे कपोलौ चन्द्रहासिनी ॥ ४ ॥

परब्रह्मस्वरूपिणी हैं, जो श्वेत-कमल के आसन पर विराज रही हैं, शुभ्र (सफेद) हंस जिनका वाहन है, प्रसन्नता से जो ईषद्धास्य कर (कुछ मुसका) रही हैं। साधक इस प्रकार गायत्री का हृत्कमल में ध्यान कर गायत्री-कवच का पाठ करे ॥ १-३½ ॥

कवच--ब्रह्मा ने विश्वामित्र से कहा--हे महाबुद्धिमान् विश्वामित्र ! तुम गायत्री-कवच को सुनो। जिसके केवल पाठ मात्र से ही साधक तीनों लोकों को अपने वश में कर लेता है ॥ १ ॥

सावित्री मेरे शिर की, अमृतेश्वरी शिखा की, ब्रह्मदैवत्या ललाट की तथा वैष्णवी दोनों भ्रुवों (भौंहों) की रक्षा करें ॥२॥ रुद्राणी दोनों कानों की, सूर्य में रहकर समस्त प्राणियों का सृजन करने वाली भगवती दोनों नेत्रों की, गायत्री मुख की तथा शारदा मसूड़ों की रक्षा करें ॥ ३ ॥ यज्ञप्रिया दाँतों की, सरस्वती जीभ की, सांख्यायनी नाक की तथा चन्द्रहासिनी कपोल की रक्षा करें ॥४॥

चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनाशिनी ।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदं ब्रह्मवादिनी ॥ ५ ॥
उदरं विश्वभोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया ।
जघनं नारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्डधारिणी ॥ ६ ॥
पार्श्वौ मे पातु पद्माक्षी गुह्यं गो-गोप्त्रिकाऽवतु ।
ऊर्वोरोङ्काररूपा च जान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु ॥ ७ ॥
जङ्घयोः पातु अक्षोभ्या गुल्फयोर्ब्रह्मशीर्षका ।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादाङ्गुलीषु च ॥ ८ ॥
सर्वाङ्गं वेदजननी पातु मे सर्वदाऽनघा ।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन् ! गायत्र्याः सर्वपावनम् ॥ ९ ॥

वेदगर्भा चिबुक की, अघ (पाप) नाशिनी कण्ठ की, इन्द्राणी स्तन की तथा ब्रह्मवादिनी हृदय की रक्षा करें ॥५॥

विश्व-भोक्त्री पेट की, सुरप्रिया नाभि की, नारसिंही जघन की तथा ब्रह्माण्डधारिणी पीठ की रक्षा करें ॥६॥ पद्माक्षी दोनों पार्श्व की, गोप्त्रिका गुप्त स्थान की, ॐकाररूपा दोनों ऊरु की तथा सन्ध्यात्मिका दोनों जानु (घुटनों) की रक्षा करें ॥७॥ अक्षोभ्या दोनों जाँघ की, ब्रह्मशीर्षका गुल्फ की, सूर्या दोनों पैरों की तथा चन्द्रा पैर के अंगुलियों की रक्षा करें ॥८॥ सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाली वेदजननी सर्वदा हमारे सम्पूर्ण अंगों की रक्षा करें । ब्रह्मा ने कहा-- हे विश्वामित्र ! इस प्रकार यह गायत्री कवच सदैव साधक को पवित्र करता है ॥९॥

पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोगनिवारणम् ।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद् विद्वान् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥१०॥
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स भवेद् वेदवित्तमः ।
सर्वयज्ञफलं प्राप्य ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात् ॥११॥
प्राप्नोति जपमात्रेण पुरुषार्थश्चतुर्विधान् ॥१२॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृते
गायत्री-रहस्ये विश्वामित्र-संहितोक्तं
गायत्री-कवचं सम्पूर्णम् ।

यह गायत्री-कवच पुण्य, पवित्र, पापों को नाश करने वाला तथा रोगों को दूर करने वाला है। जो विद्वान् तीनों काल में इस गायत्री-कवच का पाठ करते हैं उनका सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध हो जाता है ॥१०॥

गायत्री-कवच के पाठ से पाठक सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्व का ज्ञाता एवं वेदज्ञ हो जाता है। और उसे सम्पूर्ण यज्ञों के फलों की प्राप्ति होती है। तथा साधक अन्त में ब्रह्म पद को प्राप्त करता है, तथा चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति अनायास ही हो जाती है ॥ ११-१२ ॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती'
हिन्दीटीका सहित गायत्री-रहस्य में विश्वामित्र-
संहितोक्त गायत्री-कवच समाप्त ।

२. गायत्री-कवचम्

याज्ञवल्क्य उवाच

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ ! संशयोऽस्ति महान् मम ।
चतुष्षष्टि - कलानां च पातकानां च तद्वद ? ॥ १ ॥
मुच्यते केन पुण्येन ब्रह्मरूपं कथं भवेत् ? ।
देहश्च देवतारूपं मन्त्ररूपं विशेषतः ॥ २ ॥
क्रमतः श्रोतुमिच्छामि कवचं विधिपूर्वकम् ।

ब्रह्मोवाच

गायत्र्याः कवचस्याऽस्य ब्रह्मा विष्णुः शिवो ऋषिः ॥ ३ ॥
ऋग्-यजुः-सामा-ऽथर्वाणि छन्दांसि परिकीर्तिताः ।
परब्रह्मस्वरूपा सा गायत्री देवता स्मृता ॥ ४ ॥

याज्ञवल्क्य ने कहा--हे ब्रह्मन् ! सम्पूर्ण चराचर विश्व के स्वामी महाब्रह्मन् ! मुझे एक बहुत बड़ा संशय है कि मनुष्य को चौंसठ कलाओं की प्राप्ति तथा सम्पूर्ण पापों से छुटकारा किस पुण्य के प्रभाव से प्राप्त होता है ? तथा किस पुण्य के प्रभाव से मनुष्य को ब्रह्मरूप की प्राप्ति होती है ? और वह कौन-सा कवच है जिसका विधिपूर्वक पाठ करने से मनुष्य देह, देवता तथा मन्त्ररूप हो जाता है ? मैं उस कवच को सुनना चाहता हूँ ॥१-२½॥

ब्रह्मा ने कहा—इस गायत्री-कवच के ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ऋषि हैं। ऋग्, यजुः, साम तथा अथर्व छन्द हैं, परब्रह्मस्वरूपा गायत्री ही देवता हैं ॥२½-४॥

रक्षाहीनं तु यत् स्थानं कवचेन विना कृतम् ।
सर्वं सर्वत्र संरक्षेत् सर्वाङ्गं भुवनेश्वरी ॥ ५ ॥
बीजं भर्गश्च शक्तिश्च धियः कीलकमेव च ।
पुरुषार्थ - विनियोगो यो नश्च परिकीर्तितः ॥ ६ ॥
ऋषिं मूर्ध्नि न्यसेत् पूर्वं मुखे छन्द उदीरितम् ।
देवता हृदि विन्यस्य गुह्ये बीजं नियोजयेत् ॥ ७ ॥
शक्ति पदोऽस्तु विन्यस्य नाभौ तु कीलकं न्यसेत् ।
द्वात्रिंशत्तु महाविद्याः सांख्यायनस - गोत्रजाः ॥ ८ ॥
द्वादशलक्ष - संयुक्ता विनियोगः पृथक् - पृथक् ।

आगे कहे जाने वाले कवच में जो स्थान रक्षा के लिए नहीं कहे गये हैं, उन सभी स्थानों की रक्षा भुवनेश्वरी देवी करें। क्योंकि वे भुवनेश्वरी हैं और कोई भी स्थान भुवन से बाहर नहीं है ॥५॥

इस गायत्री कवच का 'गर्भः' बीज है, 'धियः' शक्ति है तथा 'यो नः प्रचोदयात्' यह कीलक है। चारों पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिए इसे पढ़ना चाहिए, यही विनियोग है ॥६।

अंगन्यास—'ऋषिभ्यो नमः' ऐसा कह कर शिर का, 'छन्दोभ्यो नमः' कह कर मुख का, 'देवताभ्यो नमः' से हृदय का, 'बीजाय नमः' से गुह्यस्थान का, 'शक्तये नमः' से पैर का, 'कीलकाय नमः' से नाभि का स्पर्श करे। 'द्वात्रिशन्महाविद्याभ्यो नमः' से सम्पूर्ण शरीर का स्पर्श करे। इस प्रकार पृथक्-पृथक् अंगन्यास तथा करन्यास कर, द्वादशलक्षात्मक गायत्री का जप करे ॥७-८½ ॥

एवं न्यास-विधिं कृत्वा कराङ्गं विधिपूर्वकम् ॥ ९ ॥
व्याहृतित्रयमुच्चार्य अनुलोम-विलोमतः ।
चतुरक्षर-संयुक्तं कराङ्गन्यासमाचरेत् ॥१०॥
आवाहनादिभेदं च दश मुद्राः प्रदर्शयेत् ।
सा पातु वरदा देवी अङ्ग-प्रत्यङ्ग-सङ्गमे ॥११॥
ध्यानं मुद्रां नमस्कारं गुरुमन्त्रं तथैव च ।
संयोगमात्म-सिद्धिं च षड्विधं किं विचारयेत् ॥१२॥

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मा-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, ऋग्-यजुः-सामा-ऽथर्वाणि च्छन्दांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री-देवता, भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वाहा कीलकम्, श्रीगायत्री-प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।

इस प्रकार अंगन्यासकर फिर उपर्युक्त विधिसे करन्यास भी करना चाहिए—'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः' इस महाव्याहृति का अनुलोम तथा 'ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः' इस प्रकार प्रतिलोम-रूपसे महाव्याहृति का उच्चारण करे। 'तत्सवितुर्वरेण्यं' 'भर्गो देवस्य' 'धीमहि धियो' 'यो नः प्रचोदयात्' इन चार मन्त्रों से करांगन्यास करे॥ ९-१०॥

गायत्री का आवाहनादि दशमुद्रा प्रदर्शित करे। तथा वह वरदा देवी अंग-प्रत्यंग की सन्धियों में रक्षा करें॥११॥ इस प्रकार ध्यान, मुद्रा, नमस्कार, गुरुमन्त्र, संयोग तथा आत्मसिद्धि इन छह प्रकारों से गायत्री की सिद्धि करे॥ १२॥

विनियोग–दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य०' से आरम्भ कर, 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर, भूमिपर जल छोड़ दे। (मन्त्रार्थ यों है–इस गायत्री कवच के ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र ऋषि

ध्यानम्

वर्णास्त्रां कुण्डिकाहस्तां शुद्ध-निर्मल-ज्योतिषीम् ।
सर्वतत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम् ॥ १ ॥
मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभया-ङ्कुश-कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥ २ ॥

कवचम्

ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे ।
ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती ॥ १ ॥

हैं, ऋग्, यजु, साम तथा अथर्व छन्द हैं, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता हैं, भूः बीज है, भुवः शक्ति है, स्वाहा कीलक है, गायत्री की प्रीति के लिए इसका पाठ करना चाहिए।)

ध्यान—सम्पूर्ण वर्णों के स्वरूप वाली, कुण्डिका को धारण करने वाली, शुद्ध-निर्मल ज्योति-स्वरूप वाली, सम्पूर्ण तत्त्वों से विराजमान, वेदमाता गायत्री की मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥ मोती, मूँगा, स्वर्ण, नील तथा स्वच्छ छायावाले मुख से जो सुशोभित हैं तथा स्त्रियोचित सम्पूर्ण मंगलों से जो युक्त हैं, रत्नजटित चन्द्रकला से जो सुशोभित हैं, जो वर्णस्वरूप हैं तथा ब्रह्मरूपिणी हैं। जिनके हाथों में वर, अभय, अंकुश, कशा, शूल, कपाल, धनुष, शंख, चक्र तथा कमल का जोड़ा सुशोभित हो रहा है, ऐसी गायत्री देवी का मैं ध्यान करता हूँ ॥२॥

कवच-गायत्री पूर्व दिशा में, सावित्री दक्षिण दिशा में, महाविद्या पश्चिम दिशा में तथा सरस्वती उत्तर दिशा में हमारी रक्षा

पावकीं मे दिशं रक्षेत् पावकोज्ज्वलशालिनी ।
यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधान-गणार्दिनी ॥ २ ॥
पावमानीं दिशं रक्षेत् पवमान-विलासिनी ।
दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणी रुद्ररूपिणी ॥ ३ ॥
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्तात् वैष्णवी तथा ।
एवं दश दिशो रक्षेत् सर्वतो भुवनेश्वरी ॥ ४ ॥
ब्रह्मास्त्र-स्मरणादेव वाचां सिद्धिः प्रजायते ।
ब्रह्मदण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रा-ऽस्त्र-भक्षकः ॥ ५ ॥
ब्रह्मशीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः ।
सप्तव्याहृतयः पान्तु सर्वदा बिन्दुसंयुताः ॥ ६ ॥
वेदमाता च मां पातु स-रहस्या स-दैवता ।
देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता ॥ ७ ॥

करें ॥१॥ अग्नि के समान देदीप्यमान देवी अग्निकोण में, यातुधानों का नाश करने वाली नैर्ऋत्य कोण में हमारी रक्षा करें ॥२॥ हवा के समान विलास करने वाली देवी वायव्यकोण में, रुद्ररूपिणी भगवती रुद्राणी ईशान-कोण में हमारी रक्षा करें ॥३॥ ब्रह्माणी ऊपर तथा वैष्णवी नीचे की ओर हमारी रक्षा करें। भुवनेश्वरी सभी स्थानों में हमारी रक्षा करें। इस प्रकार उपर्युक्त सभी देवियाँ दश दिशाओं में रक्षा करें ॥४॥ सम्पूर्ण शस्त्रास्त्रों का विनाश करने वाला ब्रह्मदण्ड हमारी रक्षा करे। शत्रुओं का वध करने वाला ब्रह्मशीर्ष हमारी रक्षा करे। विसर्ग के सहित सप्रवण व्याहृतियाँ सर्वदा हमारी रक्षा करें ॥५-६॥ सरहस्या एवं सदैवता तथा वेदमाता मेरी रक्षा करें, जिसके सहस्राक्षर-देवता हैं, वह देवीसूक्त हमारी रक्षा करे। चतुःषष्टि

चतुष्षष्टिकलाविद्या दिव्याद्या पातु देवता ।
बीजशक्तिश्च मे पातु पातु विक्रमदेवता ॥ ८ ॥
तत्पदं पातु मे पादौ जङ्घे मे सवितुः पदम् ।
वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ ९ ॥
देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा ।
धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने ॥१०॥
ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धानं मे प्रचोदयात् ।
तद्वर्णः पातु मूर्द्धानं सकारः पातु भालकम् ॥११॥
चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः ।
नासापुटे वकारो मे रेकारस्तु कपोलयोः ॥१२॥
णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूर्ध्व ओष्ठके ।
आस्यमध्ये भकारस्तु र्गोकारस्तु कपोलयोः ॥१३॥

कलासमेत दिव्य विद्या हमारी रक्षा करे, बीजशक्ति हमारी रक्षा करे, विक्रमदेवता हमारी रक्षा करे ॥७-८॥ गायत्री के प्रत्येक वर्ण से रक्षा-कवच कहते हैं—'तत्' पद पैर की रक्षा करे, 'सवितुः' पद जंघे की, 'वरेण्यं' कटि देश की तथा 'भर्ग' पद हमारे नाभि-स्थान की रक्षा करे ॥९॥ 'देवस्य' हृदय की, 'धीमहि' गले की, 'धियः' जिह्वा की, 'यः' पद नेत्र की रक्षा करे ॥१०॥ 'नः' ललाट की, 'प्रचोदयात्' शिर की रक्षा करे। 'तत्' वर्ण मूर्धा की तथा 'स' वर्ण भाल की रक्षा करे ॥११॥ 'वि' वर्ण दोनों चक्षुओं की, 'तु' वर्ण दोनों कान की, 'व' नासापुटों की, 'रे' वर्ण कपोलों की रक्षा करे ॥१२॥ 'ण्' वर्ण अधरोष्ठ की, 'य' ऊपर के ओठ की, 'भ' वर्ण मुख के मध्य में, 'र्गो' दोनों कपोलों की रक्षा करे ॥१३॥

देकारः कण्ठदेशे च वकारः स्कन्धदेशयोः ।
स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तकम् ॥१४॥
मकारो हृदयं रक्षेद् हिकारो जठरं तथा ।
धिकारो नाभि-देशं तु योकारस्तु कटिद्वयम् ॥१५॥
गुह्यं रक्षतु योकार ऊरू मे नः पदाक्षरम् ।
प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जङ्घदेशयोः ॥१६॥
दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम् ।
जातवेदेति[1] गायत्री त्र्यम्बकेति[2] दशाक्षरा ॥१७॥

'दे' कण्ठदेश की, 'व' स्कन्धदेश की, 'स्य' दाहिने हाथ की, 'धी' बायें हाथ की रक्षा करे ॥१४॥ 'म' हृदय की, 'हि' जठर की, 'धि' नाभि-स्थान की, 'यो' दोनों कटि भाग की रक्षा करे ॥१५॥ 'यो' गुह्यांग की, 'नः' पद एवं अक्षर दोनों ऊरु की, 'प्र' दोनों घुटनों की, 'चो' दोनों जंघा की रक्षा करे ॥१६॥ 'द' गुल्फ की, 'यात्' दोनों पैरों की रक्षा करे। 'ॐ जातवेदसे सुनवास सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं, दुरितात्यग्निः ॥' इसमें ४३ अक्षर, 'ॐ त्र्यम्बकं यजाहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥' इसमें ३३ अक्षर तथा २४ अक्षर की गायत्री सब मिलाकर शताक्षरा गायत्री कही गयी है।

१. ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः ।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥
—ऋ० १, १९, १

२. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥
—शु० य० सं०, अ० १, म० ६

सर्वतः सर्वदा पातु आपो ज्योतीति षोडशी[1] ।
इदं तु कवचं दिव्यं बाधा-शत-विनाशकम् ॥१८॥
चतुष्षष्टिकलाविद्या - सकलैश्वर्य - सिद्धिदम् ।
जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ॥१९॥
स्त्री-गो-ब्राह्मण-मित्रादि-द्रोहाद्यखिल-पातकैः ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधि-गच्छति ॥२०॥
पुष्पाञ्जलिं च गायत्र्या मूलेनैव पठेत् सकृत् ।
शतसाहस्र-वर्षाणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥२१॥
भूर्जपत्रे लिखित्वैतत् स्वकण्ठे धारयेद् यदि ।
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारयेद् बुधः ॥२२॥

तथा ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतम् ॐ ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्' यह षोडशाक्षर गायत्री सर्वदा सभी जगह हमारी रक्षा करे ॥१७॥

यह गायत्री का कवच सैकड़ों बाधाओं को नष्ट करने वाला है, चौंसठ कलाओं तथा समस्त ऐश्वर्य को देने वाला है। गायत्री-जप के आरम्भ में गायत्री-हृदय तथा जप के अन्त में गायत्री-कवच का पाठ करना चाहिए ॥१८-१९॥ स्त्रीवध, गोवध, ब्राह्मणवध तथा मित्रद्रोह आदि पापों को नष्ट करने वाला है। गायत्री-कवच का पाठ करने वाला पुरुष परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है ॥२०॥ इस गायत्री के कवच का सदैव पाठ कर मूल मन्त्र से गायत्री को एक बार भी पुष्पांजलि देने से सैकड़ों तथा हजारों वर्ष के गायत्री-पूजा का फल प्राप्त होता है ॥ २१॥

जो बुद्धिमान् पुरुष इस गायत्री-कवच को भोजपत्र पर लिख

१. ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ।

त्रैलोक्यं क्षोभयेत् सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात् ।
पुत्रवान् धनवाञ्छ्रीमान् नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥२३॥
ब्रह्मास्त्रादीनि सर्वाणि तदङ्गस्पर्शनात्ततः ।
भवन्ति तस्य तुच्छानि किमन्यत् कथयामि ते ॥२४॥
अभिमन्त्रित-गायत्री-कवचं मानसं पठेत् ।
तज्जलं पिबतो नित्यं पुरश्चर्याफलं भवेत् ॥२५॥
लघुसामान्यकं मन्त्रं महामन्त्रं तथैव च ।
यो वेत्ति धारणां युञ्जन् जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥२६॥
सप्तव्याहृति-विप्रेन्द्र ! सप्तावस्थाः प्रकीर्तिताः ।
सप्तजीवसता नित्यं व्याहृती अग्निरूपिणी ॥२७॥

कर, कण्ठ, शिखा तथा दाहिने हाथ में अथवा मणिबन्ध में धारण करते हैं ॥२२॥ वे क्षण-भर में त्रैलोक्य को क्षुब्ध कर सकते हैं अथवा तीनों लोक का नाश कर सकते हैं। वे पुत्रवान्, धनवान्, श्रीमान् तथा अनेक विद्याओं के निधि विशेषज्ञ बन जाते हैं ॥२३॥ इस गायत्री-कवच के पाठ के फल को बहुत कहने से क्या ? ब्रह्मास्त्र आदि भी उसके अंग के स्पर्श से तुच्छ हो जाते हैं ॥२४॥

जो लोग गायत्री-कवच से जल को अभिमन्त्रित कर उसे सदैव पीते हैं वे पुरश्चरण के फल को प्राप्त करते हैं ॥२५॥ गायत्री का लघुमन्त्र, सामान्य मन्त्र तथा महामन्त्र को जो व्यक्ति जानता है और उसका जप करता है वह 'जीवन्मुक्त' हो जाता है ॥२६॥ हे विप्रेन्द्र ! यह सात महाव्याहृतियाँ जीव की सात अवस्थाएँ हैं तथा अग्निरूपिणी हैं ॥२७॥

प्रणवे नित्ययुक्तस्य व्याहृतीषु च सप्तसु।
सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते ॥२८॥
शतं सहस्रमभ्यस्तं गायत्रीपावनं महत्।
दशशतमष्टोत्तरशत-गायत्री पावनं महत् ॥२९॥
भक्तिभाजो भवेद् विप्रः सन्ध्याकर्म समाचरेत्।
काले काले प्रकर्त्तव्यं सिद्धिर्भवति नाऽन्यथा ॥३०॥
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
तूर्यं सहैव गायत्रीजप एवमुदाहृतम् ॥३१॥
तुरीयपादमुत्सृज्य गायत्रीं च जपेत् द्विजः।
स मूढो नरकं याति कालसूत्रमधोगतिः ॥३२॥

प्रणवपूर्वक सप्तव्याहृति का जप करने वाले पुरुष को सभी पापों के सांकर्य उपस्थित हो जाने पर सौ अथवा हजार भी गायत्री के जप से उसकी शुद्धि हो जाती है, क्योंकि एक हजार अथवा एक सौ आठ भी गायत्री का जप अत्यन्त पावन– पवित्रकारक है ॥ २८-२९ ॥

गायत्री में भक्ति (निष्ठा) रखने वाला पुरुष सर्व-प्रथम सन्ध्योपासन करे, फिर समय से गायत्री का जप करे तभी उसे सिद्धि होती है अन्यथा नहीं ॥३०॥ साधक को सर्व-प्रथम प्रणव का उच्चारण करना चाहिए। पश्चात् 'भूर्भुवः स्वः' का, फिर गायत्री के चारों पाद का ('तत्' से प्रचोदयात् पर्यन्त) इस प्रकार गायत्री के जप की विधि कही गयी है। 'ॐ भूर्भुवःस्वः तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' यही जप का प्रकार है ॥३१॥ जो ब्राह्मण गायत्री के चौथे पाद ('धियो— प्रचोदयात्') को छोड़कर सप्रणव, सव्याहृति गायत्री का जप करता है। वह मूर्ख कालसूत्र नामक नरक में जाकर अधोगति को प्राप्त करता है ॥३२॥

मन्त्रादौ जननं प्रोक्तं मन्त्रान्ते मृतसूत्रकम् ।
उभयोर्दोषनिर्मुक्तं गायत्री सफला भवेत् ॥३३॥
मन्त्रादौ पाशबीजं च मन्त्रान्ते कुशबीजकम् ।
मन्त्रमध्ये तु या माया गायत्री सफला भवेत् ॥३४॥
वाचिकस्त्वहमेव स्यादुपांशु शतमुच्यते ।
सहस्रं मानसं प्रोक्तं त्रिविधं जपलक्षणम् ॥३५॥
अक्षमालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत् ।
जपं चाक्षस्वरूपेणा-ऽनामिका-मध्यपर्वणि ॥३६॥
अनामा मध्यया हीना कनिष्ठादिक्रमेण तु ।
तजनी - मूलपर्यन्तं गायत्रीजपलक्षणम् ॥३७॥

मन्त्र का आदि जनन है तथा मन्त्र के अन्त में मृतसूत्र है। इसलिए दोनों दोष रहित सम्पूर्ण गायत्री का जप करना चाहिए ॥ ३३ ॥ मन्त्र के आदि में पाशबीज है तथा मन्त्र के अन्त में कुश-बीज है, मन्त्र के मध्य में माया है, जो ऐसा जानता है उसके गायत्री का जप सफल है ॥३४॥

जप तीन प्रकार का होता है—१. वाचिक, २. उपांशु, ३. मानस। वाचिकजप का सामान्य फल होता है। उसकी अपेक्षा उपांशु का सौ गुना फल होता है तथा वाचिक से मानस का फल सहस्रगुना होता है। यह तीनों प्रकार के जपों का फल होता है ॥३५॥

जपमाला, मुद्रा, गुरु को भी नहीं दिखाना चाहिए, अनामिका के मध्य-पर्व से लेकर कनिष्ठा के पर्व से तर्जनी के मूल पर्यन्त जप करना गायत्री जप का लक्षण है। इस प्रक्रिया में मध्यमा का मध्य पर्व सुमेरु

पर्वभिस्तु जपेदेवमन्यत्र नियमः स्मृतः ।
गायत्रीवेदमूलत्वाद् वेदः पर्वसु गीयते ॥३८॥
दशभिर्जन्मजनितं शतेनैव पुरा कृतम् ।
त्रियुगं तु सहस्राणि गायत्री हन्ति किल्बिषम् ॥३९॥
प्रातःकालेषु कर्तव्यं सिद्धिं विप्रो य इच्छति ।
नादालये समाधिश्च सन्ध्यायां समुपासते ॥४०॥
अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने ।
असंख्यया च यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत् ॥४१॥
विना वस्त्रं प्रकुर्वीत गायत्री निष्फला भवेत् ।
वस्त्रपुच्छं न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ॥४२॥

होता है, उसका लंघन नहीं करना चाहिए। गायत्री वेद का मूल मन्त्र है और वेद का मूल पर्व में है ॥३६-३८॥

गायत्री का जप दश जन्म, सौ जन्म तथा सहस्र जन्म के पापों को दूर करता है ॥३९॥ जो ब्राह्मण सिद्धि की इच्छा रखता है, उसे प्रातः-काल में गायत्री का जप करना चाहिए और जो सन्ध्या में गायत्री की उपासना करता है। उसे अनहद नाद में समाधि होती है ॥४०॥

जो जप अंगुलि के अग्र-भाग से किया जाता है, तथा जो सुमेरु का लंघन कर जप किया जाता है अथवा बिना संख्या के जो जप किया जाता है, उस जप का कोई फल नहीं होता, वह जप निष्फल ही है ॥४१॥

जो जप वस्त्र के भीतर (गोमुखी आदि) में नहीं किया जाता अथवा जो जप वस्त्र के पिछले भाग (अन्तिम भाग) में किया जाता है; वह जप निष्फल होता है ॥४२॥

गायत्रीं तु परित्यज्य अन्यमन्त्रमुपासते ।
सिद्धान्नं च परित्यज्य भिक्षामटति दुर्मतिः ॥४३॥
ऋषिश्छन्दो देवताख्या बीजं शक्तिश्च कीलकम् ।
नियोगं न च जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥४४॥
वर्ण - मुद्रा - ध्यानपदमावाहन - विसर्जनम् ।
दीपं चक्रं न जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥४५॥
शक्ति न्यासस्तथा स्थानं मन्त्र-सम्बोधनं परम् ।
त्रिविधं यो न जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥४६॥
पञ्चोपचारकांश्चैव होमद्रव्यं तथैव च ।
पञ्चाङ्गं च विना नित्यं गायत्री निष्फला भवेत् ॥४७॥

जो गायत्री को छोड़ कर अन्य मन्त्र की उपासना करता है वह मूर्ख अपने घर सिद्ध अन्न का परित्याग कर भिक्षा माँगता फिरता है ॥४३। जो गायत्री के ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, कील तथा विनियोग को नहीं जानता उसके गायत्री के जप का फल निष्फल होता है ॥४४॥ जो गायत्री का वर्ण (ध्यान), मुद्रा, ध्यान पद, आवाहन, विसर्जन तथा दीप चक्र को नहीं जानते, उनके गायत्री का जप निष्फल होता है ॥४५॥

जो शक्ति, न्यास, स्थान, मन्त्र तथा सम्बोधन तथा तीन प्रकारके जप को नहीं जानते, उनको गायत्री के जप का फल नहीं होता ॥४६॥ जो गायत्री के पंचोपचार पूजन, होम, द्रव्य तथा पंचांग को नहीं जानते उनको गायत्री के जप का फल नहीं होता है ॥४७॥

मन्त्रसिद्धिर्भवेज्ज्ञातु विश्वामित्रेण भाषितम् ।
व्यासो वाचस्पतिर्जीवस्तुता देवो तपःस्मृतौ ॥४८॥
सहस्रजप्ता सा देवी ह्युपपातकनाशिनी ।
लक्षजाप्ये तथा तच्च महापातकनाशिनी ॥
कोटि-जाप्येन राजेन्द्र ! यदिच्छति तदाप्नुयात् ॥४९॥
न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ।
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात् ॥५०॥

इति आचार्य-पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते गायत्री-रहस्ये वशिष्ठसंहितोक्तं गायत्री-कवचं समाप्तम् ।

जो लोग उपर्युक्त सभी प्रकार के विधियों को जानते हैं, उन्हें निश्चय ही सिद्धि मिलती है, ऐसा विश्वामित्र का मत है। व्यास, वाचस्पति, बृहस्पति तो स्तुति, तपस्या तथा स्मृति (ध्यान) से ही सिद्धि मानते हैं ॥ ४८ ॥

गायत्री के सहस्र संख्या जप से उपपातक का नाश हो जाता है। लक्ष जप से महापातक का नाश होता है, तथा करोड़ जप से मनुष्य जो चाहता है वह प्राप्त कर लेता है ॥४९॥ गायत्री-कवच तथा जपादि की उपर्यक्त विधि दूसरे के शिष्य को नहीं देना चाहिए तथा जो भक्त न हो उसे भी नहीं देना चाहिए। अपने शिष्य तथा भक्त को ही यह सब कहना चाहिए अन्यथा वह मृत्यु को प्राप्त कर लेता है ॥५०॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका सहित गायत्री-रहस्य में वशिष्ठसंहितोक्त गायत्री-कवच समाप्त ।

●

गायत्री-पञ्जर-स्तोत्रम्

भगवन्तं देवदेवं ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् ।
विधातारं विश्वसृजं पद्मयोनिं प्रजापतिम् ॥ १ ॥
शुद्ध - स्फटिक - सङ्काशं महेन्द्रशिखरोपमम् ।
बद्ध - पिङ्ग-जटाजूटं तडित्-कनक-कुण्डलम् ॥ २ ॥
शरच्चन्द्राभवदनं स्फुरदिन्दीवरेक्षणम् ।
हिरण्मयं विश्वरूपमुपवीताजिनावृतम् ॥ ३ ॥
मौक्तिकाभाक्ष-वलय-स्तन्त्री-लय-समन्वितः ।
कर्पूरोद्धूलिततनुः स्रष्टुर्नयन-वर्द्धनम् ॥ ४ ॥
विनयेनोपसङ्गम्य शिरसा प्रणिपत्य च ।
नारदः परिपप्रच्छ देवर्षिगण-मध्यगः ॥ ५ ॥

जो ब्रह्मा इस सृष्टि के विधाता हैं, जगत् की सृष्टि करने वाले हैं, कमल से उनकी उत्पत्ति है, जो प्रजाओं के पति हैं ॥१॥ जिनके शरीर का वर्ण शुद्ध स्फटिक के समान स्वच्छ है, जो महेन्द्र शिखर के समान शोभा पा रहे हैं, जिन्होंने अपना पीला जटाजूट बाँध रखा है, जिनका कनक कुण्डल बिजली के समान चमक रहा है ॥२॥ जिनका मुख-मण्डल शरत्कालीन चन्द्रमा के समान प्रसन्न है तथा जिनके नेत्र कमल के समान सुशोभित हैं, जो हिरण्यगर्भ हैं, जिनके शरीर पर यज्ञोपवीत तथा अजिन शोभा पा रहा है ॥३॥ मोतियों के जप-माला का वलय (कंकण) जिनके हाथ में सुशोभित है, जो तन्त्री (वीणा) लय से संयुक्त हैं, जिनका शरीर कर्पूर से उपलिप्त है तथा जिनके दर्शन से नेत्रों को आनन्द प्राप्त होता है ॥४॥ ऐसे ब्रह्माजी के पास देवर्षि नारद ने विनय-पूर्वक जाकर प्रणाम किया और उनसे पूछा ॥५॥

नारद उवाच

भगवन् ! देवदेवेश ! सर्वज्ञ ! करुणानिधे ! ।
श्रोतुमिच्छामि प्रश्नेन भोग-मोक्षैक-साधनम् ॥ ६ ॥
ऐश्वर्यस्य समग्रस्य फलदं द्वन्द्ववर्जितम् ।
ब्रह्महत्यादि पापघ्नं पापाद्यरिभयापहम् ॥ ७ ॥
यदेकं निष्कलं सूक्ष्मं निरञ्जनमनामयम् ।
यत्ते प्रियतमं लोके तन्मे ब्रूहि पितर्मम ॥ ८ ॥

ब्रह्मोवाच

शृणु नारद ! वक्ष्यामि ब्रह्ममूलं सनातनम् ।
सृष्ट्यादौ मन्मुखे क्षिप्तं देवदेवेन विष्णुना ॥ ९ ॥
प्रपञ्चबीजमित्याहुरुत्पत्ति - स्थिति - हेतुकम् ।
पुरा मया तु कथितं कश्यपाय सुधीमते ॥१०॥

नारदजीने पूछा—हे भगवन् ! हे देवदेवेश ! हे सर्वज्ञ ! हे करुणानिधे ! हम आप से पूछना चाहते हैं कि भोग तथा मोक्ष की प्राप्ति का साधन क्या है ? ॥६॥ समग्र ऐश्वर्य से सम्पन्न मनुष्य किस प्रकार हो सकता है ? ब्रह्म हत्या आदि पापों से छुटकारा किस प्रकार मिल सकता है ? तथा पापरूपी शत्रुओं का नाश करने वाला उपाय क्या है ? ॥७॥ इस जगत् में निराकार, मायारहित तथा निर्दोष क्या है ? तथा सबसे आपका प्रियतम क्या है ? हे महाराज ! आप उसे मुझे कृपा कर बताइए ? ॥८॥

तब ब्रह्माजी ने कहा—हे नारद ! जो सृष्टि का मूल परब्रह्म है, जो सनातन है तथा सृष्टि के आदि में देवाधिदेव श्री विष्णु जिसे मेरे मुख में प्रक्षिप्त किया था ॥९॥ जो समस्त प्रपंचभूत इस जगत् का बीज तथा उसके स्थिति का कारण है और जिसे मैंने पूर्व-काल में कश्यप को उपदेश किया था ॥१०॥

सावित्रीपञ्जरं नाम रहस्यं निगमत्रये।
ऋष्यादिकं च दिग्वर्णं साङ्गावरणकं क्रमात् ॥११॥
वाहना-ऽऽयुध-मन्त्रास्त्रं मूर्ति-ध्यान-समन्वितम्।
स्तोत्रं शृणु प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाच्च नारद! ॥१२॥
ब्रह्मनिष्ठाय देयं स्याददेयं यस्य कस्यचित्।
आचम्य नियतः पश्चादात्म-ध्यान-पुरःसरम् ॥१३॥
ओमित्यादौ विचिन्त्याथ व्योम-हेमाब्ज-संस्थितम्।
धर्मकन्द - गतज्ञानमैश्वर्याष्ट - दलान्वितम् ॥१४॥
वैराग्य - कर्णिकासीनां प्रणव - ग्रहमध्यगाम्।
ब्रह्मवेदिसमायुक्तां चैतन्यपुरमध्यगाम् ॥१५॥

जो वेदों में सावित्री-पंजर नाम से विख्यात है, जो ऋषि, दिग्वर्ण, सांगावरण, वाहन, आयुध, मन्त्र, अस्त्र, मूर्ति तथा ध्यान से युक्त है, उस स्तोत्र को सुनो, क्योंकि तुम मेरे पुत्र हो, इसलिए तुम्हारे ऊपर स्नेह कर मैं कह रहा हूँ ॥११-१२॥

यह स्तोत्र ब्रह्मनिष्ठ को ही बताना चाहिए, जिस-किसी को नहीं। स्तोत्र-पाठ के पूर्व मनुष्य को स्नान आदि क्रिया के अनन्तर विधिपूर्वक आचमन करना चाहिए, फिर ब्रह्मस्वरूपा गायत्री का ध्यान करना चाहिए ॥१३॥

गायत्री ध्यान का स्वरूप--जो गायत्री प्रणव-स्वरूपा हैं, जो गगनसदृश सुवर्णमय कमल पर विराजमान हैं, जिस कमल का धर्मरूप कन्द है, जिससे ज्ञान की उत्पत्ति है तथा जो गायत्री ऐश्वर्य आदि आठ कलाओं से युक्त हैं ॥१४॥ जो वैराग्यरूपी कमलकर्णिका पर बैठी हुई हैं, तथा प्रणव ही जिनका गृह है, जो ब्रह्मरूपी वेदी से संयुक्त हैं, तथा चैतन्यरूपी पुर में निवास करने वाली हैं, ॥१५॥ जो

तत्त्व - हंस - समाकीर्णां शब्दपीठे सुसंस्थिताम् ।
नाद - बिन्दु - कलातीतां गोपुरैरुपशोभिताम् ॥१६॥
विद्या - ऽविद्यामृतत्त्वादि - प्रकारैरभिसंवृताम् ।
निगमार्गलसञ्छन्नां निर्गुणद्वारवाटिकाम् ॥१७॥
चतुर्वर्गफलोपेतां महाकल्पवनैर्वृताम् ।
सान्द्रानन्द-सुधासिन्धु-निगमद्वार-वाटिकाम् ॥१८॥
ध्यान-धारण-योगादि-तृण-गुल्म-लतावृताम् ।
सदसच्चित्स्वरूपाख्य-मृग-पक्षि-समाकुलाम् ॥१९॥
विद्याऽविद्या-विचारत्वाल्लोकाऽलोकाचलावृताम् ।
अविकार-समाश्लिष्ट-निजध्यान-गुणावृताम् ।
पञ्चीकरण-पञ्चोत्थ-भूत-तत्त्व-निवेदिताम् ॥२०॥

तत्त्वरूपी हंस से घिरी हुई हैं, तथा शब्द-पीठ पर विराजमान हैं, नाद, बिन्दु तथा कला से परे हैं, जो शब्द ही चैतन्यपुर का गोपुर (प्रधान द्वार) है एवं विद्या, अविद्या, अमृततत्त्वादि रूप प्राकार (चहार-दिवारी) से जो चैतन्यरूप पुर परिवेष्टित है, जो वेदरूपी अर्गला से संछन्न हैं तथा जो निर्गुण द्वार वाली वाटिका (बगीचा) रूप है ॥१६-१७॥ जो धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूपी चतुर्वर्ग से संयुक्त हैं, तथा जो मनुष्य के वांछासिद्धि के लिए महाकल्प वृक्ष रूप वन से आवृत हैं। जो घने आनन्द का सुधासिन्धु हैं, निर्गुण ब्रह्म ही जिसका द्वार है वैसी वाटिका है, जो वाटिका में ध्यान धारण योगरूप तृण गुल्मता से आवृत है। तथा जिस वाटिका में सत्-असत्-चित् स्वरूप मृग एवं पक्षी विचरण कर रहे हैं ॥१८-१९॥

विकार रहित एवं ध्यानरूपी गुणों से आवृत हैं तथा पञ्चीकरण (वेदान्त विषय), पंचोत्थ (पंचज्ञानेन्द्रियों से भासित होने वाला चित्) तथा भूत तत्त्वों से जिसका ज्ञान होता है ॥२०॥

वेदोपनिषदर्थाख्य-देवर्षिगण-सेविताम् ।
इतिहासग्रहगणैः सदारैरभिवन्दिताम् ॥२१॥
गाथाप्सरोभिर्यक्षैश्च गण-किन्नर-सेविताम् ।
नाग-सिंह-पुराणाख्यैः पुरुषः कल्पचारणैः ॥२२॥
कृतगान-विनोदादि-कथालापन-तत्परा ।
तदित्यवाङ्-मनोगम्य-तेजोरूपधरां पराम् ॥२३॥
जगतः प्रसवित्रीं तां सवितुः सृष्टिकारिणीम् ।
वरेण्यमित्यन्नमयीं पुरुषार्थफलप्रदाम् ॥२४॥
अविद्यावर्णवर्ज्यां च तेजोवद्गर्भसंज्ञिकाम् ।
देवस्य सच्चिदानन्द-परब्रह्मरसात्मिकाम् ॥२५॥

वेद और उपनिषद्‌रूपी महर्षिगण जिस निगुण वाटिकारूपी सावित्री में निवास करते हैं, इतिहासरूपी ग्रह स्त्री समेत जिसकी वन्दना करते हैं ॥२१॥

अनेक प्रकार की गाथाएँ रूपी अप्सरा, यक्ष, गण, किन्नर जिसमें निवास करते हैं। पुराणरूपी नृसिंह जिस वाटिका में गरज रहा है, कल्याणरूपी चारण पुरुष जिसकी स्तुति करते हैं ॥२२॥ तथा चारणरूपी कल्प पुरुष अनेक प्रकार विनोद और गाथाओं से गान कर रहे हैं, जो परब्रह्मस्वरूपा हैं, वाणी और मन से सर्वथा परे हैं, दिव्य तेजोमय स्वरूप ही जिनका विग्रह है ॥२३॥

इस चराचर जगत् को जन्म देने वाली तथा सविता की भी सृष्टि करने वाली, जगत् के भरण-पोषण के लिए अन्नस्वरूप धारण करने वाली, धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूप चारों पदार्थों के फल को देने वाली हैं ॥२४॥

जिनमें अविद्या का लेश भी नहीं है, जिनका कोई रूप नहीं है,

धीमह्य हंस वै तद्वद् ब्रह्मद्वैत-स्वरूपिणीम् ।
धियो यो नस्तु सविता प्रचोदयादुपासिताम् ॥२६॥
परोऽसौ सविता साक्षादनो निर्हरणाय च ।
परो रजस इत्यादि परं ब्रह्मसनातनम् ॥२७॥
आपो ज्योतिरिति द्वाभ्यां पाञ्चभौतिकसंज्ञकम् ।
रसोऽमृतं ब्रह्मपदैस्तां नित्यां तपिनीं पराम् ॥२८॥
भूर्भुवः सुवरित्येतैर्निगमत्व - प्रकाशिकाम् ।
महर्जनस्तपःसत्य - लोकोपरि - सुसंस्थिताम् ॥२९॥
तादृगस्या विराड्रूप-किरीट-वरराजिताम् ।
व्योमकेशालकाकाश-रहस्यं प्रवदाम्यहम् ॥३०॥

जो सर्वदा तेजोरूपेण विराजमान हैं, सच्चिदानन्द रूप देवता की जो परब्रह्मरूप रसस्वरूपा हैं ॥२५॥

ब्रह्म के उस अद्वैतस्वरूपिणी भगवती सावित्री का मैं ध्यान करता हूँ। वह सविता देवता मेरे द्वारा उपासित होकर हमारी बुद्धि को अच्छे कार्य में प्रेरित करें ॥२६॥

पाप को दूर करने के लिये जो साक्षात् सविता-स्वरूपा हैं तथा रजोगुण से परे जो सनातन परब्रह्मस्वरूप हैं ॥२७॥

'आपो' 'ज्योती' इन दो रूपों से इस जगत् के मूल पांचभौतिक शरीर से विराजमान हैं। तथा अमृतरसरूपी अपने किरणों से नित्य सूर्यरूपा हैं ॥२८॥ जो 'भूर्भुवः स्वः' इन तीनों पदों से समस्त पदार्थ को प्रकाशित करने वाली हैं तथा मह, जन, तप तथा सत्य लोक से ऊपर विराजमान हैं ॥२९॥ सुन्दर किरीट से सुशोभित होकर जो इस जगत् में विराट्रूप से विराज रही हैं। आकाशरूपी केशों वाली उस व्योमकेशा भगवती का मैं रहस्य कह रहा हूँ ॥३०॥

मेघ-भ्रुकुटिकाक्रान्त-विधि-विष्णु - शिवार्चिताम् ।
गुरु-भार्गव-कर्णान्तां सोम-सूर्या-ऽग्नि-लोचनाम् ॥३१॥
इडा-पिङ्गल-सूक्ष्माभ्यां वायु-नासापुटान्विताम् ।
सन्ध्या-द्विरोष्ठ-पुटितां लसद्-वाग्-भूप-जिह्विकाम ॥३२॥
सन्ध्यांसौ द्युमणे कण्ठ-लसद्-बाहु-समन्विताम् ।
पर्जन्य - हृदयासक्त - वसु-सुस्तन - मण्डलाम् ॥३३॥
आकाशोदर - वित्रस्त - नाभ्यवान्तर - देशकाम् ।
प्राजापत्याख्य-जघनां कटीन्द्राणीति-संज्ञिकाम् ॥३४॥
ऊरू-मलय - मेरुभ्यां शोभमाना - ऽसुरद्विषम् ।
जानुनी जह्नु - कुशिक - वैश्वदेव - सदाभुजाम् ॥३५॥

मेघ ही जिनकी सुन्दर भृकुटी है तथा ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव जिनकी सदैव अर्चना करते हैं। बृहस्पति तथा शुक्र जिस विराट्स्वरूपा भगवती के कान हैं। चन्द्रमा तथा सूर्य जिनके दो नेत्र हैं ॥३१॥

वायुग्रहण के लिए सूक्ष्म इडा तथा पिंगला ही जिनके ये दो नासिका के छिद्र हैं, दोनों सन्ध्याएँ ही जिस विराट् भगवती के दो ओष्ठ हैं, शोभना वाणी ही जिनकी जिह्वा है ॥३२॥ दो सन्ध्या ही जिनके स्कन्ध देश हैं, द्युमणि-सूर्य जिनके कण्ठ हैं, पर्जन्य ही जिनका हृदय है, वसु ही जिनके मनोहर स्तन हैं ॥३३॥ आकाश ही जिनका नाभि से अवान्तर देश तक व्याप्त उदर है, जिनके प्रजापति ही जघन हैं तथा समस्त इन्द्रियाँ ही जिनके कटिप्रदेश हैं ॥३४॥ मलय तथा मेरु ही ऊरु हैं, असुर ही जिनके शत्रु हैं, जह्नु तथा कुशिक जिनके जानु हैं, वैश्वदेव ही जिनकी भुजाएँ हैं ॥३५॥

अवनद्वय-जङ्घाद्य - खुराद्य - पितृ - संज्ञिकाम् ।
पदांघ्रि - नख - रोमाद्य - भूतलद्रुम-लाञ्छिताम् ॥३६॥
ग्रह - राश्यृक्ष - देवर्षि - मूर्ति च परसंज्ञिकाम् ।
तिथि-मासर्तु-वर्षाख्य - सुकेतु - निमिषात्मिकाम् ॥३७॥
अहोरात्रार्द्ध - मासाख्यां सूर्याचन्द्रमसात्मिकाम् ।
माया-कल्पित - वैचित्र्य-सन्ध्याच्छादन - संवृताम् ॥३८॥
ज्वलत्-कालानल-प्रख्यां तडित्कोटि-समप्रभाम् ।
कोटिसूर्य - प्रतीकाशां चन्द्रकोटि - सुशीतलाम् ॥३९॥
सुधामण्डल-मध्यस्थां सान्द्रानन्दाऽमृतात्मिकाम् ।
प्रागतीतां मनोरम्यां वरदां वेदमातरम् ॥४०॥

दोनों भवन ही जिनके जंघे हैं तथा देवता और पितर ही जिनके दो चरण हैं, पृथ्वी के समस्त वृक्ष ही जिनके नख तथा रोम हैं ॥३६॥

(कालरूपा भगवती का वर्णन)—जिस पर ब्रह्मस्वरूपिणी भगवती की ग्रह, राशि, नक्षत्र तथा देवर्षि मूर्तियाँ हैं, तिथि, मास, ऋतु और वर्ष तथा निमिष ही जिनके ध्वज हैं ॥३७॥ दिन, रात तथा पक्ष ही जिनका नाम है, सूर्य तथा चन्द्रमा ही जिनकी आत्मा है, माया-कल्पित विचित्रता से युक्त सन्ध्या ही जिनका आच्छादन (वस्त्र) है ॥३८॥ जो जलते हुए कालाग्नि के समान भयंकर हैं, तथा करोड़ों विद्युत् के समान देदीप्यमान जिनके शरीर की कान्ति है। करोड़ों सूर्य के समान जो तेजस्वी हैं तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान जो सुशीतल हैं ॥३९॥ जो सुधा-मण्डल के मध्य में निवास करनेवाली हैं तथा घने आनन्द के समुद्र के समान हैं। सृष्टि के प्राक्काल से ही जो विद्यमान हैं, जो मन को आनन्द देनेवाली हैं, मनुष्यों को वर देने वाली तथा साक्षात् वेदों

चराऽचरमयीं नित्यां ब्रह्माक्षर - समन्विताम् ।
ध्यात्वा स्वात्मनि भेदेन ब्रह्मपञ्जरमारभेत् ॥४१॥
पञ्जरस्य ऋषिश्चाऽहं छन्दो विकृतिरुच्यते ।
देवता च परो हंसः परब्रह्माऽधिदेवता ॥४२॥
प्रणवो बीजशक्तिः स्यादों कीलकमुदाहृतम् ।
तत्तत्त्वं धीमहि क्षेत्रं धियोऽस्त्रं यः परं पदम् ॥४३॥
मन्त्रमापो ज्योतिरिति योनिर्हंसः सबन्धकम् ।
विनियोगस्तु सिद्ध्यर्थं पुरुषार्थचतुष्टये ॥४४॥
ततस्तैरङ्गषट्कं स्यात्तैरेव व्यापकत्रयम् ।
पूर्वोक्तदेवतां ध्यायेत् साकारगुणसंयुताम् ॥४५॥

की माता हैं ॥४०॥ चर-अचर जगत् ही जिनका स्वरूप है, जो नित्य तथा अक्षर हैं। इस प्रकार भगवती का विराट् तथा कालात्मकरूप ध्यान कर, पश्चात् ब्रह्मपञ्जर स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥४१॥

पुनः ब्रह्मा ने कहा - हे नारद ! सुनो, गायत्रीपंजर-स्तोत्र का ऋषि मैं हूँ, विकृति ही इसका छन्द है, परब्रह्म ही इसका अधिदेवता तथा हंस ही इसका देवता है ॥४२॥ प्रणव बीज शक्ति है तथा 'ॐ' इसका कीलक है। 'तत्' तत्त्व है, 'धीमहि' क्षेत्र है, 'श्रियः' अस्त्र है, 'यः' यही पद है, 'आपो ज्योति' मन्त्र है, 'हंसः' योनि है, पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि ही गायत्रीपंजर पाठ का विनियोग है ॥४३-४४॥

तदनन्तर अंगन्यास तथा करन्यास करे। पश्चात् व्यापकादि तीन मुद्रा प्रदर्शित कर, आकार और गुण का स्मरण करता हुआ भगवती गायत्री का ध्यान करे ॥४५॥

पञ्चवक्त्रां दशभुजां त्रिपञ्च - नयनैर्युताम् ।
मुक्ता - विद्रुम-सौवर्णां सित - शुभ्र - समाननाम् ॥४६॥
वाणीं परां रमां मायां चामरैर्दर्पणैर्युताम् ।
षडङ्गदेवतामन्त्रै रूपाद्यवयवात्मिकाम् ॥४७॥
मृगेन्द्र - वृषपक्षीन्द्र - मृगहंसासने स्थिताम् ।
अर्द्धेन्दुबद्ध - मुकुट - किरीट - मणि - कुण्डलाम् ॥४८॥
रत्नताटङ्क - माङ्गल्य - परग्रैवेय - नूपुराम् ।
अङ्गुलीयक - केयूर - कङ्कणाद्यैरलङ्कृताम् ॥४९॥
दिव्यस्रग् - वस्त्र - संछन्न-रविमण्डल - मध्यगाम् ।
वरा-ऽभया-ऽब्ज-युगलां शङ्ख-चक्र-गदाऽङ्कुशान् ॥५०॥
शुभ्रं कपालं दधतीं वहन्तीमक्षमालिकाम् ।
गायत्रीं वरदां देवीं सावित्रीं वेदमातरम् ॥५१॥

गायत्री-ध्यान—जिस भगवती गायत्रीके पाँच मुख तथा दश भुजा हैं, पन्द्रह नेत्र हैं। जिनके पाँचों मुख क्रमशः मोती, मूँगा, सुवर्ण, स्वच्छ तथा शुभ्र हैं ॥४६॥ सरस्वती, रमा, माया तथा चामर और दर्पण से संयुक्त हैं। षडंग, देवता तथा मन्त्रों से जिनके रूपादि अवयव ज्ञात होते हैं ॥४७॥ जो दुर्गा रूप से सिंह पर, माहेश्वरी रूप से बैल पर, वैष्णवीरूप से गरुड पर तथा ब्रह्माणी रूप से हंसासन पर विराज रही हैं। अर्द्धचन्द्र से संयुक्त जिनका मुकुट एवं किरीट है तथा जिनका कुण्डल मणि से संयुक्त है ॥४८॥ जो रत्नजटित ताटंक (कान का बाला) तथा सौभाग्ययुक्त ग्रैवेयक (हार, कंठा), नूपुर (पैर का आभूषण), अँगूठी, केयूर (बाजूबन्द, बिजायठ) तथा कंकणादि अलंकारों से अलंकृत हैं ॥४९॥ अनेक सुन्दर माला तथा वस्त्र से विभूषित होकर आदित्य-मण्डलमें निवास करनेवाली हैं। वर, अभय,

आदित्यपथगामिन्यां स्मरेद् ब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
विचित्र - मन्त्रजननीं स्मरेद् विद्यां सरस्वतीम् ।।५२।।
त्रिपदा ऋङ्मयी पूर्वामुखी ब्रह्मास्त्रसंज्ञिका ।
चतुर्विंशतितत्त्वाख्या पातु प्राचीं दिशं मम ।।५३।।
चतुष्पाद - यजुर्ब्रह्मदण्डाख्या पातु दक्षिणाम् ।
षट्त्रिंशत्तत्त्वयुक्ता सा पातु मे दक्षिणां दिशम् ।।५४।।
प्रत्यङ्मुखी पञ्चपदी पञ्चाशत्तत्त्वरूपिणी ।
पातु प्रतीचीमनिशं सामब्रह्मशिरोऽङ्किता ।।५५।।
सौम्या ब्रह्मस्वरूपाख्या साथर्वाङ्गिरसात्मिकाम् ।
उदीचीं षट्पदा पातु चतुष्षष्टि - कलात्मिका ।।५७।।

कमल का जोड़ा, शंख, चक्र, गदा, अंकुश, शुभ्र कपाल तथा जपमाला जिनके हाथों में सुशोभित हो रहे हैं। ऐसी वर देने वाली तथा बुद्धि को प्रेरणा प्रदान करने वाली भगवती वेद-माता गायत्री का स्मरण करना चाहिए ।।५०-५१।। आदित्यपथ से चलने वाली, विचित्र मन्त्रों को जन्म देने वाली, ऐसी परब्रह्मस्वरूपा भगवती सरस्वती का ध्यान करना चाहिए ।।५२।।

पूर्वाभिमुखी, त्रिपाद ऋचा से संयुक्त, ऋग्वेद-स्वरूपा, चौबीस तत्त्वों से भरी हुई ब्रह्मास्त्रसंज्ञिका भगवती पूर्व दिशा में हमारी रक्षा करें ।।५३।। चार पाद वाली दक्षिणाभिमुखी, यजुर्वेदस्वरूपा, छत्तीस तत्त्वों से युक्त, ब्रह्मदण्डसंज्ञिका भगवती दक्षिण-दिशा में हमारी रक्षा करें ।। ५४ ।। पाँच पादवाली, पश्चिमाभिमुखी, पचास-तत्त्वात्मिका, सामस्वरूपा, ब्रह्मशिरसंज्ञिका भगवती पश्चिम दिशा में हमारी रक्षा करें ।।५५।। छह पादवाली, अत्यन्त सुन्दर, चौंसठ कला से संयुक्त, अथर्वांगिरसस्वरूपा, उत्तराभिमुखी, ब्रह्मस्वरूप

पञ्चाशत्तत्त्वरचिता भवपादा शताक्षरी ।
व्योमाख्या पातु मे चोर्ध्वां दिशं वेदाङ्गसंस्थिता ॥५७॥
विद्युन्निभा ब्रह्मसंज्ञा मृगारूढा चतुर्भुजा ।
चापेषु-चर्मा-ऽसिधरा पातु मे पावकीं दिशम् ॥५८॥
ब्राह्मी कुमारी गायत्री रक्ताङ्गी हंसवाहिनी ।
बिभ्रत्कमण्डल्वक्ष-स्रक्स्रुवान् मे पातु नैऋतीम् ॥५९॥
चतुर्भुजा वेदमाता शुक्लाङ्गी वृषवाहिनी ।
वराभय - कपालाक्ष - स्रग्विणी पातु वारुणीम् ॥६०॥
श्यामा सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडासना ।
शङ्खाराब्जाभयकरा पातु शैवीं दिशं मम ॥६१॥

संज्ञिका भगवती उत्तर दिशा में हमारी रक्षा करें ॥५६॥ ग्यारह पैर वाली, पचास तत्त्वों वाली, शताक्षरी, जिनका निवास वेदांगों में है, वह कामाख्या भगवती ऊपर हमारी रक्षा करें ॥५७॥ मृग के ऊपर सवार होने वाली, चतुर्भुजा, विद्युत् (बिजली) के समान देदीप्यमान, धनुष, बाण, ढाल तथा तलवार को धारण करने वाली, ब्रह्मसंज्ञिका भगवती आग्नेय कोण में हमारी रक्षा करें ॥५८॥ हंस के ऊपर सवारी करने वाली, रक्त वर्ण वाली, कमण्डलु, अक्ष माला, स्रक् तथा स्रुवा को धारण करने वाली, कुमारावस्था से संयुक्त, ब्रह्मशक्ति-स्वरूपा भगवती गायत्री नैर्ऋत्य दिशा में हमारी रक्षा करें ॥५९॥ शुक्लवर्ण वाली, बैल के ऊपर सवार रहने वाली, वर, अभय, कपाल, अक्षमाला को धारण करने वाली, चतुर्भुजा, भगवती वेद-माता पश्चिम-दिशा में हमारी रक्षा करें ॥६०॥ श्यामा, सरस्वती, शक्तियों में श्रेष्ठ, गरुडासन पर विराजमान, शंख, असि, अब्ज तथा अभय को धारण करने वाली, वैष्णवी शक्ति ईशान कोण में हमारी

चातुर्भुजा वेदमाता गौराङ्गी सिंहवाहना ।
वरा-ऽभया-ऽब्ज-युगलैर्भुजैः पात्वधरां दिशम् ॥६२॥
तत्तत्पार्श्वस्थिताः स्व - स्ववाहनायुध - भूषणाः ।
स्व-स्वदिक्षु स्थिताः पान्तु ग्रहशक्त्यङ्गदेवताः ॥६३॥
मन्त्राधिदेवतारूपा मुद्राधिष्ठानदेवताः ।
व्यापकत्वेन पात्वस्मानापदतलमस्तकम् ॥६४॥
तत्पदं मे शिरः पातु भालं मे सवितुः पदम् ।
वरेण्यं मे दृशौ पातु श्रुती भर्गः सदा मम ॥६५॥
घ्राणं देवस्य मे पातु पातु धीमहि मे मुखम् ।
जिह्वां मम धियः पान्तु कण्ठं मे पातु यः पदम् ॥६६॥

रक्षा करें ॥६१॥ गौर वर्ण वाली, सिंहवाहना, चार भुजाओं से संयुक्त, वेदमाता जिनके हाथों में वर, अभय तथा कमल के जोड़े हैं, वे भगवती नीचे हमारी रक्षा करें ॥६२॥ अपने-अपने दिशाओं में स्वामिनी रूप से विराजमान, ग्रहों की शक्तियाँ, अपने प्रत्यधिदेवता सहित, अपने-अपने वाहन, आयुध तथा भूषणों से सुसज्जित होकर उन-उन दिशाओं में हमारी रक्षा करें ॥६३॥ मन्त्रों के प्रत्यधिदेवतारूप तथा मुद्रा के अधिष्ठान देवता, अपने व्यापक रूप से पैर के तलवे से लेकर मस्तक पयन्त हमारी रक्षा करें ॥६४॥

'तत्' पद हमारे शिर की रक्षा करे, 'सवितुः' पद भाल (मस्तक) को, 'वरेण्यम्' मेरे नेत्रों की तथा 'भर्गः' पद हमारे कानों की रक्षा करें ॥६५॥ 'देवस्य' मेरे नासिका की, 'धीमहि' मेरे मुख की, 'धियः' पद मेरे जीभ की तथा 'यः' पद हमारे कण्ठ की रक्षा करें ॥६६॥ 'नः' पद कन्धों की तथा 'प्रचयोदयात्' पद हमारे भुजाओं की रक्षा करे । 'परः' पद हमारे हाथों की तथा 'रजसे' हमारे पैरों की रक्षा करे ॥६७॥

नःपदं पातु मे स्कन्धौ भुजौ पातु प्रचोदयात् ।
करौ मे च परः पातु पादौ मे रजसेऽवतु ॥६७॥
असौ मे हृदयं पातु मम मध्यमदाऽवतु ।
ओं मे नाभिं सदा पातु कटिं मे पातु मे सदा ।
ओमापः सक्थिनी पातु गुह्यं ज्योतिः सदा मम ॥६८॥
ऊरू मम रसः पातु जानुनी अमृतं मम ।
जंघे ब्रह्मपदं पातु गुल्फौ भूः पातु मे सदा ।६९॥
पादौ मम भुवः पातु सुवः पात्वखिलं वपुः ।
रोमाणि मे महः पातु रोमकं पातु मे जनः ॥७०॥
प्राणांश्च धातुतत्त्वानि तदीशः पातु मे तपः ।
सत्यं पातु ममायूंषि हंसो बुद्धिं च पातु मे ।७१॥
[1]शुचिषत् पातु मे शक्रं वसुः पातु श्रियं मम ।
मतिं पात्वन्तरिक्षसद्धोता दानं च पातु मे ॥७२॥

'असौ' हमारे हृदय की तथा 'अदा' हमारे हृदय-मध्य और 'ॐ' हमारे नाभि की, तथा 'मे' पद हमारी कटि (कमर) की रक्षा करे। 'ॐ आपः' पद सक्थिनी (घुटनों) की तथा 'ज्योतिः' हमारे गुप्त-स्थानों की रक्षा करे ॥६८॥ 'रसः' हमारे ऊरु की तथा 'अमृतं' जानु की, 'ब्रह्मपद' जंघों की तथा 'भू' पद हमारे गुल्फप्रदेश की रक्षा करे ॥६९॥ 'महः' हमारे रोम की तथा 'जनः' हमारे अन्य केशों की रक्षा करे ॥७०॥ 'तपः' प्राण, मुख, धातु तथा जीव की रक्षा करे, 'सत्यं' हमारे आयु की तथा 'हंसः' हमारे बुद्धि की रक्षा करे ॥७१॥

१. हठं. सः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत् ॥
—शु० य० सं०, अ १०, म० २४

वेदिषत् पातु मे विद्यामतिथिः पातु मे गृहम्।
धर्मं दुरोणसत्पातु नृषत्पातु सुतान् मम ॥७३॥
वरसत्पातु मे भार्यामृतसत्पातु मे सुतान्।
व्योमसत् पातु मे बन्धून् भ्रातृनब्जाश्च पातु मे ॥७४॥
पशून् मे पातु गोजाश्च ऋतजाः पात मे भवम्।
सर्वं मे अद्रिजाः पातु यानं मे पात्वृतं सदा ॥७५॥
अनुक्तमथ यत् स्थानं शरीरेऽन्तर्बहिश्च यत्।
तत्सर्वं पातु मे नित्यं हंसः सोऽहमहर्निशम् ॥७६॥
इद तु कथितं सम्यङ् मया ते ब्रह्मपञ्जरम्।
सन्ध्ययोः प्रत्यहं भक्त्या जपकाले विशेषतः ॥७७॥

'शुचिषत्' हमारे शुक्र की, 'वसु' हमारी श्री की, 'अन्तरिक्ष' हमारी मति की तथा 'होता' हमारे दाँत की रक्षा करे ॥७२॥ 'वेदिषत्' हमारी विद्या की तथा 'अतिथि' हमारे घर की, 'दुरोणसत्' धर्म की तथा 'नृषत्' हमारे पुत्रों की रक्षा करे ॥७३॥ 'वरसत्' हमारी भार्या की, तथा 'ऋतसत्' बालकों की, 'व्योमसत्' बन्धुओं की तथा 'अजा' हमारे समस्त भाई-बन्धुओं की रक्षा करे ॥७४॥ 'गोजा' हमारे पशुओं की, 'ऋतजा' हमारे जन्म की, 'अद्रिजा' हमारे सब कुछ की तथा 'ऋत्' हमारे यान (सवारी) की रक्षा करे ॥७५॥ इस शरीर की रक्षा के लिए हमने जिन स्थानों को नहीं कहा है तथा जो स्थान शरीर के भीतर और बाहर हैं, जिन्हें इस कवच में नहीं कहा है, उन सभी स्थानों की 'हंस', 'सोऽहम्' ये दोनों पद रक्षा करें ॥७६॥

धारयेद् द्विजवर्यो यः श्रावयेद् वा समाहितः ।
स विष्णुः स शिवः सोऽहं सोऽक्षरः स विराट् स्वराट् ।।७८।।
शताक्षरात्मकं देव्या नामाऽष्टाविंशतिः शतम् ।
शृणु वक्ष्यामि तत्सर्वमतिगुह्यं सनातनम् ।।७९।।
भूतिदा भुवना वाणी वसुधा सुमना मही ।
हरिणी जननी नन्दा सविसर्गा तपस्विनी ।।८०।।
पयस्विनी सती त्यागा चैन्दवी सत्यवी रसा ।
विश्वा तुर्या परा रेच्या निर्घृणी यमिनी भवा ।।८१।।
गोवेद्या च जरिष्ठा च स्कन्दिनी धीर्मतिर्हिमा ।
भीषणा योगिनी पक्षी नदी प्रज्ञा च चोदिनी ।।८२।।
धनिनी यामिनी पद्मा रोहिणी रमणी ऋषिः ।
सेनामुखी सामयी च बकुला दोषवर्जिता ।।८३।।

ब्रह्मा ने नारद से कहा—यह 'ब्रह्मपंजर' नामक स्तोत्र मैंने तुमसे कहा। जो ब्राह्मण भक्तिपूर्वक दोनों सन्ध्या के जपकाल में इसका सावधानी से पाठ करते हैं अथवा किसी को सुनाते हैं, वे विष्णु, शिव, साक्षात् परब्रह्म, अक्षर तथा स्वयं विराट् रूप बन जाते हैं ।।७७-७८।।

देवी का शताक्षर मन्त्र तथा एक सौ अठाईस नाम, जो अत्यन्त गुह्य है तथा सनातन है। हे नारद ! सुनो, मैं तुमसे कहता हूँ,तुम उसे सुनो ।।७९।। भगवती के नाम इस प्रकार हैं--भूतिदा, भुवना, वाणी, वसुधा, सुमना, मही, हरिणी, जननी, नन्दा, सविसर्गा, तपस्विनी, ।।८०।। पयस्विनी, सती, त्यागा, ऐन्दवी, सत्यबी, रसा, विश्वा, तुर्या, परा, रेच्या, निर्घृणी, यमिनी, भवा, ।।८१।। गो, वेद्या, जरिष्ठा, स्कन्दिनी, धी, मति, हिमा, भीषणा, योगिनी, पक्षी, नदी, प्रज्ञा, चोदिनी, ।।८२।। धनिनी, यामिनी, पद्मा, रोहिणी, रमणी, ऋषि,

सर्वकामदुघा सोमोद्भवा - ऽहङ्कार - वर्जिता ।
द्विपदा च चतुष्पादा त्रिपदा चैव षट्पदा ॥८४॥
अष्टापदी नवपदी सा सहस्राक्षरात्मिका
इदं यः परमं गुह्यं सावित्रीमन्त्रपञ्जरम् ॥८५॥
नाम्नाऽष्टविंशतिशतं शृणुयाच्छ्रावयेत् पठेत् ।
मर्त्यानाममृतत्वाय भीतानामभयाय च ॥८६॥
मोक्षाय च मुमुक्षूणां श्रीकामानां श्रिये सदा ।
विजयाय युयुत्सूनां व्याधितानामरोगकृत् ॥८७॥
वश्याय वश्यकामानां विद्याय वेदकामिनाम् ।
द्रविणाय दरिद्राणां पापिनां पापशान्तये ॥८८॥
वादिनां वादिविजये कवीनां कविताप्रदम् ।
अन्नाय क्षुधितानां च स्वर्गाय नाकमिच्छताम् ॥८९॥

सेनामुखी, सामयी, बकुला, दोषवर्जिता, ॥८३॥ सर्वकामदुघा, सोमोद्भवा, अहंकारवर्जिता, द्विपदा, चतुष्पदा, त्रिपदा, षट्पदा, ॥८४॥ अष्टापदी, नवपदी, सहस्राक्षरात्मिका ।

इन एक सौ आठाईस नामों से युक्त सावित्री मन्त्र पंजर को मरने वालों को अमर बनाने के लिए, डरे हुए को भय रहित करने के लिए सुनना-सुनाना तथा पढ़ना चाहिए ॥८५-८६॥ मुमुक्षुओं के मोक्ष के लिए, लक्ष्मी चाहिने वालों को लक्ष्मी प्राप्ति के लिए, युद्ध में वीरों के विजय के लिए, व्याधिग्रस्तों को व्याधि से छुटकारा पाने के लिए, इस मन्त्र को सुनना-सुनाना तथा पढ़ाना चाहिए ॥८७॥ वश में करने के लिए, विद्या चाहनेवालों को बिद्या-प्राप्ति के लिए, दरिद्रों को द्रव्य प्राप्ति के लिए, पापियों को पापशान्ति के लिए सुनना-नुनामा तथा पढ़ना चाहिए ॥८८॥ शास्त्रार्थी को शास्त्रार्थ में विजय के लिए, कवियों को कविता प्राप्ति के लिए भूखों, को भोजन पाने के

पशुभ्यः पशुकामानां पुत्रेभ्यः पुत्रकांक्षिणाम् ।
क्लेशिनां शोकशान्त्यर्थं नृणां शत्रुभयाय च ।९०॥
राजवश्याय द्रष्टव्यं पञ्जरं नृपसेविनाम् ।
भक्त्यर्थं विष्णुभक्तानां विष्णौ सर्वान्तरात्मनि ।।९१॥
नायकं विधिसृष्टानां शान्तये भवति ध्रुवम् ।
निःस्पृहाणां नृणां मुक्तिः शाश्वती भवति ध्रुवम् ॥९२॥
जप्यं त्रिवर्गसंयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः ।
मुनीनां ज्ञानसिद्ध्यर्थं यतीनां मोक्षसिद्धये ॥९३॥
उद्यन्तं चन्द्रकिरणमुपस्थाय कृताञ्जलिः ।
कानने वा स्वभवने तिष्ठञ्छुद्धो जपेदिदम् ॥९४॥

लिए, स्वर्गार्थी को स्वर्ग प्राप्ति के लिए सुनना-सुनाना तथा पढ़ना चाहिए ॥८९॥ पशु चाहनेवालों को पशु-प्राप्ति के लिए, पुत्र चाहनेवालों को पुत्र-प्राप्ति के लिए, दुःखियों को अपने दुःख को दूर करने के लिए तथा शत्रुओं को भय उत्पन्न करने के लिए पढ़ना, सुनना तथा सुनाना चाहिए ॥९०॥ राजसेवकों को राजा को वश में करने के लिए, विष्णुभक्तों को सर्वान्तर्यामी विष्णु में भक्ति की प्राप्ति के लिए इस सावित्री-पंजर का पाठ, सुनना तथा सुनाना चाहिए ॥९१॥

गृहस्थजनों के लिए यह स्तोत्र शान्तिकारक तथा काम-क्रोधादि से निःस्पृह मुनियों को निश्चय ही मुक्ति देने वाला है ॥९२॥ विशेकर गृहस्थों को त्रिवर्ग-प्राप्ति के लिए इसका जप करना चाहिए। इस स्तोत्र का पाठ करने से यतियों-संन्यासियों को मोक्ष तथा मुनियों को ज्ञान-प्राप्ति होती है ॥९३॥

चन्द्रमा की किरण का उदय होने पर भगवती सावित्री का उपस्थान कर हाथों को जोड़कर अपने घर अथवा जंगल या शिव-मन्दिर में शुद्ध होकर इस 'सावित्री-पंजर' का पाठ करना चाहिए ॥९४॥

सर्वान् कामानवाप्नोति तथैव शिवसन्निधौ ।
मम प्रीतिकरं दिव्यं विष्णुभक्ति - विवर्द्धनम् ॥९५॥
ज्वरार्तानां कुशाग्रेण मार्जयेत कुष्ठरोगिणाम् ।
अङ्गमङ्गं यथालिङ्गं कवचेन तु साधकः ॥९६॥
मण्डलेन विशुद्धयेत सर्वरोगैर्न संशयः ।
मृतप्रजा च या नारी जन्मबन्ध्या तथैव च ॥९७॥
कन्यादि-बन्ध्या या नारी तासामङ्गं प्रमार्जयेत् ।
पुत्रा न रोगिणस्तास्तु लभन्ते दीर्घजीविनः ॥९८॥
तास्ताः संवत्सरादर्वाग् गर्भं तु दधिरे पुनः ।
पति-विद्वेषिणी या स्त्री अङ्गं तस्याः प्रमार्जयेत् ॥९९॥
तमेव भजते सा स्त्री पतिं कामवशं भवेत् ।
अश्वत्थे राजवश्यार्थं बिल्वमूले स्वरूपभाक् ॥१००॥

इससे मनुष्य के सम्पूर्ण मनोकामनाओं की सिद्धि होती है। इस स्तोत्र से मैं (ब्रह्मा) तथा विष्णु दोनों ही प्रसन्न होते हैं ॥९५॥ साधक इस कवच से कोढ़ी तथा ज्वरार्त के कुशा द्वारा अंग-प्रत्यंग पर मार्जन करे, तो निश्चय ही रोगी को रोग से छुटकारा मिल जाता है, इसमें संशय नहीं है। जिस स्त्री को लड़का होकर मर जाता है अथवा जो जन्म से ही बन्ध्या (बांझ) है ॥९६-९७॥ अथवा केवल कन्या को ही जन्म देनेवाली जो स्त्रियाँ हैं, उन स्त्रियों को, जिनके पुत्र दीर्घजीवी नहीं हैं उन्हें मन्त्र से मार्जन करने पर दीर्घ-जीवी पुत्र होते हैं ॥९८॥ काकबन्ध्यादि सभी प्रकार की स्त्रियाँ इस कवच से मार्जन करने पर एक वर्ष के भीतर ही गर्भ धारण कर, दीर्घ-जीवी पुत्र को जन्म देती हैं। जिस स्त्री का पति अपनी स्त्री से विद्वेष (प्रेमालाप नहीं) करता है, उस स्त्री को इस मन्त्र से अंग-प्रत्यंग के मार्जन करने से पति कामवश हो जाता है तथा कामातुर होकर

पालाशमूले विद्यार्थी तेजसाभिमुखो रवौ।
कन्यार्थी चण्डिकागेहे जपेच्छत्रुभयाय च ॥१०१॥
श्रीकामो विष्णुगेहे च उद्याने श्रीवशी भवेत्।
आरोग्यार्थे स्वगेहे च मोक्षार्थी शैलमस्तके ॥१०२॥
सर्वकामो विष्णुगेहे मोक्षार्थी यत्र कुत्रचित्।
जपारम्भे तु हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ॥१०३॥
किमत्र बहुनोक्तेन शृणु नारद! तत्त्वतः।
यं यं चिन्तयते नित्यं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥१०४॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-गायत्री-रहस्ये वसिष्ठ-संहितायां ब्रह्म-नारद-संवादे गायत्री-पञ्जरस्तोत्रं समाप्तम्।

अपनी स्त्री से प्रेम करने लग जाता है। राजा को वश में करने के लिए पीपल के वृक्ष के नीचे तथा रूप-प्राप्ति के लिए बिल्व-वृक्ष के नीचे, ॥९९-१००॥ विद्या-प्राप्ति के लिए पलाश के नीचे तथा तेज की प्राप्ति के लिए सूर्य के सम्मुख, कन्या की प्राप्ति तथा शत्रु को भय उत्पन्न करने के लिए काली के मन्दिर में इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥१०१॥ लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए विष्णुमन्दिर में, शोभा-प्राप्ति के लिए उद्यान में, आरोग्य के लिए अपने घर में तथा मोक्ष-प्राप्ति के लिए पर्वत के ऊपर इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥१०२॥ अथवा सम्पूर्ण कामनाओं की प्राप्ति के लिए विष्णु-मन्दिर में, मोक्षार्थी जहाँ-कहीं भी इस स्तोत्र का पाठ कर सकता है। साधक जप के आरम्भ में गायत्री-हृदय तथा जप के अन्त में गायत्री-कवच का पाठ करे ॥१०३॥

हे नारद! बहुत कहने से क्या, सच पूछो तो, मनुष्य जिन-जिन कामनाओं को करता है वह सब इस 'गायत्री-पञ्जर-स्तोत्र' के पाठ से प्राप्त करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥१०४॥

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-'शिवदत्ती' हिन्दीटीका-सहित गायत्री-रहस्य मेंवसिष्ठ-संहितोक्त ब्रह्म-नारद-संवाद में गायत्रीपञ्जरस्तोत्र समाप्त।

गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्रम्

कैलासे सुखमासीनं तुषारकर-शेखरम् ।
बद्धाञ्जलिर्नमस्कृत्याऽभ्यर्च्य पृच्छति पार्वती ॥ १ ॥

पार्वत्युवाच

किं विन्यस्तं त्वया देव ! स्वशरीरे निरन्तरम् ।
कथमेतादृशी कान्तिः कथं तेऽष्टौ समृद्धयः ॥ २ ॥
सर्वतत्त्व-प्रभुत्वं च कथं कथमथाश्रयेत् ।
कृपया ब्रूहि देवेश ! प्रसन्नोऽसि यदि प्रभो ॥ ३ ॥
भगवन् ! विविधा विद्याः श्रोतुमिच्छामि ते प्रभो ! ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि गायत्र्याश्च महोत्सवम् ॥ ४ ॥
नाम्नां सहस्रं देवेश ! कृपया वक्तुमर्हसि ।
यद्यहं प्रेयसी भार्या यद्यहं प्राणवल्लभा ॥ ५ ॥
इति श्रुत्वा वचो देव्याः प्रसन्नः प्रभुरीश्वरः ।
श्रूयतामिति चाभाष्य जगाद जगदम्बिका ॥ ६ ॥
शृणु देवि ! रहस्यं मे कस्याप्यग्रे न चोदितम् ।
गोपितं सर्वतन्त्रेषु सिद्धानां स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ७ ॥

'कैलासे सुखमासीनं' श्लोक १ से आरम्भ कर 'मातङ्गानिव केसरी' श्लोक १७९ तक गायत्री-सहस्रनाम-स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

सूचना : पाठोपयोगी अंश होने एवं ग्रन्थ-विस्तार के कारण यहाँ से हिन्दी टीका नहीं दी जा रही है। कृपया पाठक-गण इस विवशता के लिए क्षमा करेंगे।

सर्वसौभाग्यजनकं सर्व-सम्पत्ति-दायकम् ।
सर्ववश्यकरं लोके सर्वप्रत्यूह-नाशनम् ॥ ८ ॥
सर्ववादि-मुखस्तम्भि निग्रहा-ऽनुग्रह-क्षमम् ।
त्वत्प्रीत्या कथयिष्यामि सुगोप्यमपि दुर्लभम् ॥ ९ ॥
सर्वपापक्षयकरं सर्वज्ञानमयं शिवम् ।
परायणानां परमा परब्रह्मस्वरूपिणी ॥१०॥
परा च परमेशानी परब्रह्मात्मिका मता ।
सा देवी च वरारोहा चेतसा चिन्तयाम्यहम् ॥११॥
ऐश्वर्यं च दशप्राप्तिर्वरदादित्वमेव च ।
गायत्र्या दिव्यसाहस्रं स्वप्ने चाप्तं मयाऽपि यत् ॥१२॥
ऋषिरस्य समाख्यातो महादेवो महेश्वरः ।
देवता देवजननी छन्दः सामादि कीर्तितम् ॥१३॥
धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्षार्थे विनियोग उदाहृतः ।
सर्वभूतान्तरीं ध्यात्वा पद्मासनगतां शुचिः ॥१४॥
ततः सहस्रनामेदं पठितव्यं मुमुक्षुभिः ।
सर्वकार्यकरं पुण्यं महापातकनाशकम् ॥१५॥
ॐ तत्काररूपा तद्रूपा तत्पदार्थस्वरूपिणी ।
तपःस्वाध्याय-निरता तपस्वी वाग्विदांवरा ॥ १ ॥
तत्कीर्तिगुणसम्पन्ना तथ्यवादी तपोनिधिः ।
तत्पदेशानुसम्बन्धा तपोलोकनिवासिनी ॥ २ ॥
तरुणादित्यसङ्काशा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
तमोपहारिणी तन्त्री तन्निपातनिवारिणी ॥ ३ ॥

तलादि-भुवनान्तःस्था तारिणीताररूपिणी ।
तर्करूपित - कोषादि - तर्कशास्त्र - विदारिणी ॥ ४ ॥
तर्कवादिमुखास्तम्भा राज्ञां च परिपालिनी ।
तन्त्रसारा तन्त्रमाता तन्त्रमार्ग - प्रदर्शिनी ॥ ५ ॥
तन्त्री तन्त्रविधानज्ञा तन्त्रस्था तन्त्रसाक्षिणी ।
तदेकध्यान - निरता तत्त्वज्ञान - प्रबोधिनी ॥ ६ ॥
तन्नाममन्त्रसुप्रीता तपस्विजनसेविता ।
ॐकाररूपा सावित्री सर्वरूपा सनातनी ॥ ७ ॥
संसारदुःख - शमनी सर्वयागफलप्रदा ॥ ८ ॥
सफला सत्यसङ्कल्पा सत्या सत्यप्रदायिनी ।
सन्तोषजननी सारा सत्यलोकनिवासिनी ॥ ९ ॥
समुद्रतनयाऽऽराध्या सामगानप्रिया सती ।
समाना सामिधेनी च समस्त - सुरसेविता ॥१०॥
सर्वसम्पत्तिजननी सम्पदा सिन्धुसेविता ।
सर्वोत्तुङ्गा तुङ्गहीना सद्गुणा सकलेष्टदा ॥११॥
सनकादिमुनिध्येया समानाधिकवर्जिता ।
साध्या सिद्धा सुधा वासा सिद्धिः साध्यप्रदायिनी ॥१२॥
सम्यगाराध्यनिलया समुत्तीर्णा सदाशिवा ।
सर्ववेदान्तनिलया सर्वशास्त्रार्थवादिनी ॥१३॥
सहस्रदलपद्मस्था सर्वज्ञा सर्वतोमुखी ।
समया समयाचारा सत्या षड्ग्रन्थिभेदिनी ॥१४॥

सप्तकोटि - महामन्त्र - माता सर्वप्रदायिनी ।
सगुणा सम्भ्रमा साक्षी सर्वचैतन्यरूपिणी ॥१५॥
सत्कीर्तिः सात्त्विकी साध्वी सच्चिदानन्दरूपिणी ।
सङ्कल्परूपिणी सन्ध्या शालग्रामनिवासिनी ॥१६॥
सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता सत्यज्ञान - प्रबोधिनी ।
विकाररूपा विप्रश्री - विप्राराधन - तत्परा ॥१७॥
विप्रिणी विप्रकल्याणी विप्रवाक्यस्वरूपिणी ।
विप्रमन्दिरमध्यस्था विप्री विप्रप्रसादिनी ॥१८॥
विप्रमन्दिरमध्यस्था विप्रवादविनोदिनी ।
विप्रोपाधिविनिर्मुक्ता विप्रहत्याविमोचिनी ॥१९॥
विप्रत्राता विप्रगोत्रा विप्रगोत्रविवर्धिनी ।
विप्रभोजनसन्तुष्टा विष्णुरूपा विनोदिनी ॥२०॥
विष्णुमाया विष्णुवन्द्या विष्णुगर्भा विचित्रिणी ।
वैष्णवी विष्णुभगिनी विष्णुमाया - विलासिनी ॥२१॥
विकाररहिता वन्द्या विज्ञानघनरूपिणी ।
विश्वसाक्षी विश्वयोनि - विश्वामित्र-प्रसादिनी ॥२२॥
विबुधा विष्णुसङ्कल्पा विकल्पा विश्वसाक्षिणी ।
विष्णुचैतन्य - निलया विष्णुस्था विश्ववादिनी ॥२३॥
विवेकी विविधानन्दी विजया विश्वमोहिनी ।
विद्याधरा विधानज्ञा विबुधार्थ - स्वरूपिणी ॥२४॥
विरूपाक्षी विराड्रूपा विक्रमा विश्वमङ्गला ।
विश्वम्भरा समाराध्या विश्वभ्रमणकारिणी ॥२५॥

विनायकी विनोदस्था वीरगोष्ठीविवर्द्धिनी ।
विवाहरहिता वन्द्या विन्ध्याचलनिवासिनी ।
विद्या विद्याकरी वेद्या वैद्यविद्याप्रबोधिनी ॥२६॥
विमला विभवा विद्या किङ्कस्था किङ्कसाक्षिणी ॥२७॥
वीरमध्या वरारोहा वितन्त्रा विश्वनायका ।
वीरहत्याप्रशमनी विनम्रजनपाविनी ॥२८॥
वीरधा विविधाकारा विरोधजनवादिनी ।
तुकारूपा तुतुर्यश्री - स्तुलसीवन - वासिनी ॥२९॥
तुलस्या मातुला तुल्या तुल्यगोत्रा तुलेश्वरी ।
तुरङ्गी तुरगारूढा तुरङ्गरथमोदिनी ॥३०॥
तुरङ्गरदना मोहा तुलादानफलप्रदा ।
तुलामाघस्नानतुष्टा तुष्टि - पुष्टि - प्रदायिनी ॥३१॥
तुरङ्गम - प्रसन्तुष्टा तुलिता तुल्यमध्यगा ।
तुङ्गातुङ्गा तुङ्गकुचा तुहिनाचलसंस्थिता ॥३२॥
तुम्बरादि-स्तुतिप्रीता तुषारवपुषेश्वरी ।
तुष्टा च तुष्टजननी तुष्टलोकनिवासिनी ॥३३॥
तुलाधारा तुलामध्या तुलस्था तुलरूपिणी ।
तुरीयगुणगम्भीरा तुर्यनामस्वरूपिणी ॥३४॥
तुर्यविद्वल्लास्यसंस्था तुर्यशास्त्रार्थवादिनी ।
तुर्यशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा तुर्यवादविनोदिनी ॥३५॥
तुर्यनादान्तनिलया तुर्यानन्दस्वरूपिणी ।
तुरीयभक्तिजननी तुर्यमार्गप्रदर्शिनी ॥३६॥

वकाररूपा वागीशा वरेण्या वरसंस्थिता ।
वरा वरिष्ठा वैदेही वेदशास्त्रप्रदर्शिनी ॥३७॥
वैकल्पश्रमणी वाणी वाञ्छितार्थफलप्रदा ।
वयस्था वयमध्यथा वयोऽवस्थाविवर्जिता ॥३८॥
वन्दिनी वादिनी वार्या वाङ्मयी वीरवन्दिनी ।
वानप्रस्थाश्रमस्थायी वनदुर्गा वनालया ॥३९॥
वनजाक्षी वनचरी वनिता वनमोदिनी ।
वसिष्ठा वामदेवादि-वन्द्या वन्द्यस्वरूपिणी ॥४०॥
वाल्मीकी वाक्करी वाचा वारुणी वारुणप्रिया ।
वैद्या वैद्यचिकित्सा च वषट्कारी वसुन्धरा ॥४१॥
वसुमाता वसुत्राता वसुजन्मविमोचनी ।
वसुप्रदा वासुदेवी वासुदेवमनोहरी ॥४२॥
वासवार्चित - पादश्री - वासवारि - विनाशिनी ।
वागीशवाङ्मनःस्थायी वनवामवशा वशी ॥४३॥
वामदेवी वरारोहा वाद्यघोषणतत्परा ।
वाचस्पति-समाराध्या वागीशी वाचकीरवाक् ॥४४॥
रेकाररूपा रेवा च रेवातीर-निवासिनी ।
रेकिणी रेवती रक्ता रुद्रजन्मा रजस्वला ॥४५॥
रेणुका रमणी रम्या रतिवृद्धा रतावली ।
रावणादित्यदानन्दा राजश्री राजशेखरा ॥४६॥
रणमध्या रथारूढा रविकोटिसमप्रभा ।
रविमण्डलमध्यस्था रजनी रविलोचना ॥४७॥

रथाङ्गपाणी रक्षोघ्नी रागिणी रावणार्चिता ।
रम्भादि-कन्यका-ऽऽराध्या राज्यदा राज्यवर्द्धिनी ॥४८॥
रजताद्रीश्वरोरुस्था रम्या राजीवलोचना ।
रमा वाणी रमाराध्या राज्यदात्री रथोत्सवा ॥४९॥
रेतोवती रथोत्साहा राजहृद्रोगहारिणी ।
रङ्गप्रवृद्धमधुरा रङ्गमण्डपमध्यगा ॥५०॥
रञ्जिता राजजननी रमा रेवा रती रणा ।
राविणी रागिणी राज्या राजराजेश्वरार्चिता ॥५१॥
राजन्वती राजनीतिस्तथा रजतवासिनी ।
राघवार्चितपादा श्रीराघवाराधनप्रिया ॥५२॥
रत्नसागरमध्यस्था रत्नद्वीपनिवासिनी ।
रत्नप्राकारमध्यस्था रत्नमण्डपमध्यगा ॥५३॥
रत्नाभिषेक-सन्तुष्टा रत्नाङ्गी रत्नदायिनी ।
निकाररूपिणी नित्या नित्यतृप्ता निरञ्जना ॥५४॥
निद्रात्ययविशेषज्ञा नीलजीमूतसन्निभा ।
नीवारशूकवत्तन्वी नित्यकल्याणरूपिणी ॥५५॥
नित्योत्सवा नित्यनित्या नित्यानन्दस्वरूपिणी ।
निर्विकल्पा निर्गुणस्था निश्चिन्ता निरुपद्रवा ॥५६॥
निःसंशया संशयघ्नी निर्लोभा लोभनाशिनी ।
निर्भवा भवपाशघ्नी नीतिशास्त्रविचारिणी ॥५७॥
निखिलागम-मध्यस्था निखिलागम-संस्थिता ।
नित्योपाधिविनिर्मुक्ता नित्यकर्मफलप्रदा ॥५८॥

नीलग्रीवा निरीहा च निरञ्जनवरप्रदा ।
नवनीतप्रिया नारी नरकार्णवतारिणी ॥५९॥
नारायणी निराहारा निर्मला निर्गुणप्रिया ।
निर्मला निर्गमाचारा निखिलागमवेदिनी ॥६०॥
निमिषा निमिषोत्पन्ना निमेषाण्डविधायिनी ।
निवात-दीपमध्यस्था निश्चिन्ता चिन्तनाशिनी ॥६१॥
नीलवेणी नीलखण्डा निर्विषा विषनाशिनी ।
नीलांशुक-परीधाना निन्दिता निर्निरीश्वरी ॥६२॥
निश्वासा-श्वास-मध्यस्था मिथो याननिवासिनी ।
यङ्कारारूपा यन्त्रेशी यन्त्रयन्त्रा यशस्विनी ॥६३॥
यन्त्राराधन-सन्तुष्टा यजमानस्वरूपिणी ।
यशस्विनी यकारस्था यूपस्तम्भनिवासिनी ॥६४॥
यमघ्नी यमकल्पा च यशःकामा यतीश्वरी ।
यमादियोगनिरता यतिनिद्रापहारिणी ॥६५॥
याता यज्ञा यज्ञिया च यज्ञश्वरपतिव्रता ।
यज्ञयज्ञा यजुर्यज्वा यज्ञीनिकरकारिणी ॥६६॥
यज्ञसूत्रप्रदा ज्येष्ठा यज्ञकर्मफलप्रदा ।
यवाङ्कुर-प्रिया यामा यवनी यवनाधिपा ॥६७॥
यज्ञकर्त्री यज्ञभोक्त्री यज्ञाङ्गी यज्ञवाहिनी ।
यज्ञसाक्षी यज्ञमुखी यजुषी यज्ञरक्षकी ॥६८॥
भकाररूपा भद्रेशी भद्रकल्याणदायिनी ।
भक्तप्रिया भक्तसखी भक्ताऽभीष्टस्वरूपिणी ॥६९॥

भक्तिनी भक्तिसुलभा भक्तिदा भक्तवत्सला ।
भक्तचैतन्यनिलया भक्तबन्ध-विमोचनी ॥७०॥
भक्तस्वरूपिणी भर्ग्या भाग्यारोग्यप्रदायिनी ।
भक्तमाता भक्तगम्या भक्ताभीष्टप्रदायिनी ॥७१॥
भास्वरी भैरवी भोगी भवानी भयनाशिनी ।
भद्रात्मिका भद्रदायी भद्रकाली भयङ्करी ॥७२॥
भगनिष्यन्दिनी भाग्या भवबन्धविमोचनी ।
भीमा भीमनमा भङ्गी भङ्गुरा भीमदर्शिनी ॥७३॥
भल्ली भल्लीधरा भेरुर्भेरुण्डा भीमपापहा ।
भावज्ञा भोग्यदात्री च भवघ्नी भूतिभूषणा ॥७४॥
भूतिदा भूतिदात्री च भूपतित्वप्रदायिनी ।
भ्रामरी भ्रमरी भारी भवसंसारतारिणी ॥७५॥
भण्डासुरवधोत्साहा भाग्यदा भावमोदिनी ।
गोकाररूपा गोमाता गुरुपत्नी गुरुप्रिया ॥७६॥
गोरोचनप्रिया गौरी गोविन्दगुणवर्द्धिनी ।
गोपालचेष्टा सन्तुष्टा गोवर्द्धनविवर्द्धिनी ॥७७॥
गोविन्दरूपिणी गोप्त्री गोप्त्रागोत्रविवर्द्धिनी ।
गीता गीतप्रिया गेया गोका गोकुलवर्द्धिनी ॥७८॥
गोपी गोहत्यशमनी गुणा च गुणविग्रहा ।
गोविन्दजननी गोष्ठा गोपदा गोकुलोत्सवा ॥७९॥
गोचरी गौतमी गोप्त्री गोमुखी गुरुवासिनी ।
गोपाला गोमयी गुण्ठा गोष्ठी गोपुरवासिनी ॥८०॥

गरुडी गरुडश्रेष्ठा गारुडी गरुडध्वजा ।
गम्भीरा गण्डकी गङ्गा गरुडध्वजवल्लभा ॥८१॥
गगनस्था गयावासा गुणवृत्तिर्गुडोद्भवा ।
देकाररूपा देवेशी दृशिनी देवतार्चिता ॥८२॥
देवराजेश्वरार्द्धाङ्गी दीन-दैन्य-विमोचनी ।
देश-काल-परिज्ञाना देशोपद्रवनाशिनी ॥८३॥
देवमाता देहमोहा देव-दानव-मोहिनी ।
देवेन्द्रार्चित-पादश्री-र्देवदेवप्रसादिनी ॥८४॥
देशान्तरी देवरूपा देवालय-निवासिनी ।
देशभ्रमणकृद्देवी देशस्वास्थ्यप्रदायिनी ॥८५॥
देवयाना देवता च देवसैन्यप्रपालिनी ।
वकाररूपा वाग्देवी वाचा मानसगोचरी ॥८६॥
वैकुण्ठदेशिनी वेद्या वायुरूपा वरप्रदा ।
वक्रतुण्डार्चितपदा वक्रतुण्डप्रदायिनी ॥८७॥
वैचित्री च वसुमतिर्वसुस्थाना वसुप्रिया ।
वषट्कारा च चामुण्डा वरारोहा वरावरी ॥८८॥
वैदेही-जननी वैद्या वैदेही-शोकनाशिनी ।
वेदमाता वेदकन्या वेदरूपा विनोदिनी ॥८९॥
वेदान्तवादिनी वेदा वेदान्तनिलयामरा ।
वेदश्रवा वेदघोषा वेदगानी विनोदिनी ॥९०॥
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा वेदमार्गप्रदर्शिनी ।
वैदिककर्मफलदा वेदसागर-तारिणी ॥९१॥

वेदवादी वेदगुह्या वेदाश्वरथवाहिनी ।
वेदचक्रा वेदवन्द्या वेदाङ्गी वेदवित्कविः ॥९२॥
श्यकाररूपा श्यामाङ्गी श्यामा श्यामासरोरुहा ।
श्यामाक्षा श्यालवृन्ता च शतपत्रनिकेतना ॥९३॥
सर्वदृक्-सन्निविष्टा च सर्वसम्प्रेमणी सदा ।
सव्य उपसव्यदा सव्या सध्रीची च सहायिनी ॥९४॥
भूकला सागरा सारा सार्वभौमस्वभाविनी ।
सन्तापजननी सेव्या सर्वेशी सर्वरञ्जनी ॥९५॥
सरस्वती समाराध्या समदा सिन्धुसेविनी ।
सम्मोहिनी सदामोहा सर्वमाङ्गल्यदायिनी ॥९६॥
समस्तभुवनेशानी सर्वकामफलप्रदा ।
सर्वसिद्धिप्रदा साध्वी सर्वज्ञान-प्रदायिनी ।९७॥
सर्वदारिद्र्यशमनी सर्वदुःखविमोचनी ।
सर्वरोगप्रशमनी सर्वपापविमोचनी ॥९८॥
समदृष्टिः समगुणा सर्वसाक्षी सहायिनी ।
सामर्थ्यवाहिनी संख्या सान्द्रानन्दपयोधरी ॥९९॥
सङ्कीर्णमन्दिरस्थायी साकेतकुलपालिनी ।
संहारा शङ्करी गौरी साकेतपुरवासिनी ॥१००॥
सम्बोधनी समुत्तिष्ठा सम्यग्ज्ञानस्वरूपिणी ॥१०१॥
समत्स्करी समानाङ्गी सर्वभावसुसंस्थिता ।
सम्बोधनी समानन्दा सन्मार्गकुलपालिनी ॥१०२॥
सञ्जीवनी सर्वमेधा सभ्या सम्पत्प्रदायिनी ।
सामदा समिधासीना सामान्या सामवेदिनी ॥१०३॥

समुत्तीर्णा सदाचारा संहारा सर्वपावनी ।
सर्पिणी सर्पमाता च सर्पदंष्टविमोचनी ॥१०४॥
सर्पयागप्रशमनी सर्वज्ञत्वफलप्रदा ।
सङ्क्रमा-ऽसङ्क्रमा सिन्धुः सर्गा सङ्ग्रामपूजिता ॥१०५॥
सङ्कटा सङ्कटाहारी स-कुङ्कुमविलेपना ।
सुमुखा सुमुखस्थायी साङ्गोपाङ्गाचनप्रिया ॥१०६॥
संस्तुता संस्तुतिः प्रीतिः सत्यवादी सदासुखी ।
धीकाररूपा धीमाता धीरा धीरप्रसादिनी ॥१०७॥
धीरोत्तमा धीरधीरा धीरस्था धीरशेखरा ।
स्थितिधैर्या स्थविष्ठा च स्थपतिः स्थलविग्रहा ॥१०८॥
धीरा धारा धीरवन्द्या धीपतिर्धीरमानसा ।
धीपदा धीपदस्थायी धीशना धीप्रदा सुखी ॥१०९॥
मकाररूपी मैत्रेयी महामङ्गलदेवता ।
मनोवैकल्यशमनी मलयाचलवासिनी ॥११०॥
मलयध्वजराजश्रीमानाक्षी मधुरालया ।
महादेवी महारूपा महाभैरवपूजिता ॥१११॥
मनुविद्या मन्त्रमाता मन्त्रवश्या महेश्वरी ।
मत्तमातङ्गगमना मधुरा मेरुमण्डपा ॥११२॥
महागुप्ता महाभूता महाभयविनाशिनी ।
महागौरी महामन्त्री महावैरिविनाशनी ॥११३॥
महालक्ष्मीर्महागौरी महिषासुरमर्दिनी ।
महेशमण्डलस्था च मधुरागमवर्जिता ॥११४॥

मेधा मेधाकरी मेध्या माधवी मधुमर्दिनी ।
मन्त्रा मन्त्रमयी मान्या माया महिममन्त्रिणी ॥११५॥
मायारूपी मायधारि मायस्था मायवादिनी ।
मायासङ्कल्पजननी माया माय-विनोदिनी ॥११६॥
मायाप्रपञ्चजननी मायासंहाररूपिणी ।
मायामन्त्रप्रसादा च मायाजनविमोहिनी ॥११७॥
महापरा महारूपा महाविघ्नविनाशिनी ।
महानुभावा मन्त्रेशी महामङ्गलदेवता ॥११८॥
हिकारस्था हृषीकेशी हितकार्यप्रवर्द्धिनी ।
हीनोपाधि-विनिर्मुक्ता हीनलोकविमोचनी ॥११९॥
ह्रीङ्कारा ह्रीमती ह्रीं-ह्रीं ह्रींदेवी ह्रींस्वभाविनी ।
ह्रीमती ह्रींवती हृस्त्रा ह्रींशिवा ह्रींकुलोद्भवा ॥१२०॥
हितवादी हितप्रीता हितकारुण्यवर्द्धिनी ।
हिताशनी हितक्रोधा हितकर्मफलप्रदा ॥१२१॥
हिमा हिमसुता हेमा हेमाचलनिवासिनी ।
हेती हिमप्रदा हारा होत्रा होतृहुतप्रदा ॥१२२॥
हिमस्था हिमजा हेमा हितकर्मस्वभाविनी ॥१२३॥
धीकाररूपा धिषणा धर्मरूपा धनेश्वरी ।
धनुर्द्धरा धराधारा धर्म-कर्म-फलप्रदा ॥१२४॥
धर्माचारा धर्मसारा धर्ममध्यनिवासिनी ।
धनुर्वेदी धनुर्वादी धन्या धूर्तविनाशिनी ॥१२५॥

धनधान्या धेनुरूपा धनाढ्या धनदायिनी ।
धनेशी धर्मनिरता धर्मराजप्रसादिनी ॥१२६॥
धर्मस्वरूपा धर्मेशी धर्माऽधर्मविचारिणी ।
धर्मसूक्ष्मा धर्मसाक्षी धर्मिष्ठा धर्मगोचरा ॥१२७॥
योकाररूपा योगेशी योगस्था योगरूपिणी ।
योगा योगोपमाराध्या योगमार्गनिवासिनी ॥१२८॥
योगासनस्था योगेशी योगमाया विलासिनी ।
योगाऽयोगोपमाराध्या योगाङ्गी योगविग्रहा ॥१२९॥
योगवासी योगभोगी योगमार्गप्रदर्शिनी ॥१३०॥
योधा योधवती योग्याऽयोग्या योधनतत्परा ।
योधिनी योधिनीसेव्या योधज्ञानप्रबोधिनी ॥१३१॥
योगेश्वर-प्राणनाथा योगीश्वर-हृदि-स्थिता ।
योगाऽयोगक्षेमकर्त्री योगक्षेमविहारिणी ॥१३२॥
योगराजेश्वराराध्या योगानन्दस्वरूपिणी ॥१३३॥
नवसिद्धिसमाराध्या नारायणमनोहरी ।
नारायणी नवाधारा नवब्रह्मार्चिता सदा ॥१३४॥
नगेन्द्रतनयाराध्या नामरूपविवर्जिता ।
नारसिंहार्चितपदा नवबन्धविमोचनी ॥१३५॥
नवग्रहार्चितपदा नवबन्धविमोचनी ।
नैमित्तिकार्थनपदा-नन्दितारि-विनाशनी ॥१३६॥
नवरत्नविधानज्ञा नैमिषारण्यवासिनी ।
नवपीठस्थिता देवी नवर्षिगणसेविता ॥१३७॥

नवचन्दनदिग्धाङ्गी नवकुङ्कुमधारिणी ।
नववस्त्रपरीधाना नवरत्नविभूषणा ॥१३८॥
नवभस्म-विदिग्धाङ्गी नवचन्द्रकलाधरा ।
प्रकाशरूपा प्राणाशी प्राणसंरक्षणी सदा ॥१३९॥
प्राणसञ्जीवनी प्राणा प्राणाऽप्राणप्रबोधिनी ।
प्रज्ञा प्रज्ञाप्रभा प्राच्या प्रतीची प्रबुधाप्रिया ॥१४०॥
प्राचीरा प्रणयान्तस्था प्रभातज्ञानरूपिणी ।
प्रभातकर्मसन्तुष्टा प्राणायामपरायणा ॥१४१॥
प्रायज्ञा प्रणवा प्राप्ताप्रवृत्तिः प्रकृतिः परा ॥१४२॥
प्रबन्धा प्रबुधा साक्षी प्राज्ञा प्रारब्धनाशिनी ।
प्रबोधनिरता प्रक्षा प्रबन्धप्राणसाक्षिणी ॥१४३॥
प्रयागतीर्थनिलया प्रत्यक्षा परमेश्वरी ।
प्रणवाद्यन्त-निलया प्रणवादि-प्रचोदयात् ॥१४४॥
चोकाररूपा चोरघ्नी चोरबाधाविनाशिनी ।
चेतनाऽचेतनाशीता चौराऽचौर्याचमत्कृतिः ॥१४५॥
चक्रवर्तित्वधारी च चक्रिणी चक्रधारिणी ।
चिरञ्जीवी चिदानन्दा चिद्रूपा चिद्विलासिनी ॥१४६॥
चिन्ता चित्तप्रशमनी चिन्तितार्थफलप्रदा ।
चाम्पेयी चम्पकप्रीता चण्डी चण्डाट्टहासिनी ॥१४७॥
चण्डेश्वरी चण्डमाता चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी ।
चकोराक्षी चिरप्रीता चिकुरा चिकुरप्रिया ॥१४८॥
चैतःयरूपिणी चैत्री चेतना चित्तसाक्षिणी ।
चित्रा चित्र-विचित्राङ्गी चित्रगुप्तप्रसादिनी ॥१४९॥

चलना चलसंस्थायी चापिनी चलचित्रिणी ।
चन्द्रमण्डलमध्यस्था कोटिचन्द्रसुशीतला ॥१५०॥
चन्द्रानुज-समाराध्या चन्द्रचन्द्रमहोदरी ।
चर्चितारिश्चन्द्रमाता चन्द्रकान्ता चलेश्वरी ॥१५१॥
चराऽचरनिवासा च चक्रपाणिसहोदरी ।
दकाररूपा दत्तश्री-र्दारिद्र्य-च्छेदकारिणी ॥१५२॥
दन्तिनी दण्डिनी दीना दरिद्रा दीनवत्सला ।
दक्षाराध्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी ॥१५३॥
दक्षा दाक्षायणी दाक्षा दीक्षादक्षवरप्रदा ।
दक्षिणा दक्षिणाराध्या दक्षिणामूर्तिरूपिणी ॥१५४॥
दयावती दमवती दनुजादिर्दयानिधिः ।
दन्तशोभानिभा दैवदमना दाडिमस्तनी ॥१५५॥
दण्डा दमयता दण्डी दण्डाऽदण्डप्रसादिनी ।
दण्डकारण्यनिलया दण्डकारिविनाशिनी ॥१५६॥
दंष्ट्राकरालप्रवृषी दण्डशोभादलादली ।
दरिद्रारिष्टशमनी दमादमनपूजिता ॥१५७॥
दानवार्चित-पादश्री-र्द्रविणा द्रविणोदया ।
दामोदरी दानवारिर्दामोदरसहोदरी ॥१५८॥
दाता दानप्रिया दार्वी दानश्रीर्दीनदण्डपा ।
दम्पतीदम्पती दूर्वा दधिदुग्धा दया दमा ॥१५९॥
दाडिमीबीजसन्दोह - दन्तपंक्ति - विराजिता ।
दर्पणा दर्पणस्वच्छा द्रुममण्डलवासिनी ॥१६०॥

दशावतारजननी दशदिग्दीपपूजिता ।
दया दशदिशादृश्या दशदासी दयानिधिः ॥१६१॥
देशकालपरिज्ञाना देशकालविशोधिनी ।
दशम्यादिकलाराध्या दशग्रीवप्रदर्पहा ॥१६२॥
दशापराधशमनी दशवृत्तिफलप्रदा ।
यात्काररूपिणी याज्ञी यादवी यादवार्चिता ॥१६३॥
ययातिपूजनप्रीता याज्ञिकी याजकप्रिया ।
यादवीयातनायाता यामपूजाफलप्रदा ॥१६४॥
यशस्विनी यमाराध्या यमकन्या यतीश्वरी ।
यमादियोगसन्तुष्टा योगीन्द्रहृदिसङ्गमा ॥१६५॥
यमोपाधिविनिर्मुक्ता यशस्यविधिरच्युता ।
यातनाऽयातनादेहा यात्रापापादिवर्जिता ॥१६६॥
इत्येतत् कथितं देवि ! रहस्यं सर्वकामदम् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वतीर्थफलप्रदम् ॥१६७॥
सर्वरोगहरं पुण्यं सर्वज्ञानमयं शिवम् ।
सर्वसिद्धिप्रदं देवि ! सर्वसौभाग्यवर्द्धनम् ॥१६८॥
आयुष्यं वर्द्धते नित्यं लिखितं यत्र तिष्ठति ।
न चोरा-ऽग्निभयं तस्य न च भूतभयं क्वचित् ॥१६९॥
किं पुनर्वरुणाक्तेन तथाऽपि च वदाम्यहम् ।
सकृच्छ्रवणमात्रेण कोटिजन्माऽघनाशनम् ॥१७०॥
महापातककोटीनां भञ्जनं स्मृतिमात्रतः ।
अपवादक-दौर्भाग्य-शमनं भुक्ति-मुक्तिदम् ॥१७१॥

विषरोगादि-दारिद्र्य-मृत्यु-संहारकारणम् ।
सप्तकोटि-महामन्त्र-पारायण-फलप्रदम् ॥१७२॥
शतरुद्रीयकोटीनां जपं यज्ञफलप्रदम् ।
चतुःसमुद्रपर्यन्त-भूदानं तत्फलं शिवे ! ॥१७३॥
सहस्रकोटि-गोदान-फलदं स्मृतिमात्रतः ।
कोट्यश्वमेधफलदं जरा-मृत्यु-निवारणम् ॥१७४॥
कन्याकोटिप्रदानेन यत्फलं लभते नरः ।
तत्फलं लभते सम्यङ् नाम्नां दशशती जपात् ॥१७५॥
यः शृणोति महाविद्यां श्रावयेद् वा समाहितः ।
सोऽपि मुक्तिमवाप्नोति यत्र गत्वा न शोचति ॥१७६॥
ब्रह्महत्यादि-पापानां नाशः स्याच्छ्रवणेन च ।
किं पुनः पठनादस्य मुक्तिः स्यादनपायिनी ॥१७७॥
इदं रहस्यं परमं पुण्यं स्वस्त्ययनं महत् ।
यः सकृद् वा पठेत् स्तोत्रं शृणुयाद् वा समाहितः ॥१७८॥
लभते च ततः कामानन्ते ब्रह्मपदं व्रजेत् ।
स च शत्रून् जयेत् सद्यो मातङ्गानिव केसरी ॥१७९॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-गायत्री-रहस्ये रुद्रयामले शिव-पार्वती-संवादे ब्रह्मप्रोक्तं श्रीगायत्र्या मन्त्र-वर्णात्मकं दिव्यसहस्रनामस्तोत्रं समाप्तम् ।

[इति गायत्रीपञ्चाङ्गं सम्पूर्णम्]

गायत्री-सहस्र-नामावली

नारद उवाच

भगवन् सर्वधर्मज्ञ ! सर्वशास्त्र-विशारद ! ।
श्रुति-स्मृति-पुराणानां रहस्यं त्वन्मुखाच्छ्रुतम् ॥ १ ॥
सर्वपापहरं देव ! येन विद्या प्रवर्तते ।
केन वा ब्रह्मविज्ञानं किं नु वा मोक्षसाधनम् ? ॥ २ ॥
ब्राह्मणानां गतिः केन केन वा मृत्युनाशनम् ? ।
ऐहिका-ऽऽमुष्मिकफलं केन वा पद्मलोचन ! ॥ ३ ॥
वक्तुमर्हस्यशेषेण सर्वं निखिलमादितः ।

श्रीनारायण उवाच

साधु साधु महाप्राज्ञ ! सम्यक् पृष्टं त्वयाऽनघ ! ॥ ४ ॥
शृणु वक्ष्यामि यत्नेन गायत्र्यष्टसहस्रकम् ।
नाम्नां शुभानां दिव्यानां सर्वपापविनाशनम् ॥ ५ ॥

नारदजी ने (श्रीनारायण से) कहा—हे भगवन् ! आप सभी धर्मों और समस्त शास्त्रों के ज्ञाता हैं। आपके श्रीमुख से मैंने श्रुति-स्मृति और पुराणों के तत्त्व को सुना ॥१॥ हे भगवन् ! जिससे सब पापों की नाशक विद्या प्रकट होती है, वह कौन-सी है ? ब्रह्मज्ञान और मोक्ष मार्ग का साधन क्या है ? ॥२॥ हे कमलनयन भगवन् ! ब्राह्मणों की उत्तम गति कैसे होती है और मृत्यु का नाश किस प्रकार से होता है ? इहलोक और परलोक का फल किससे मिलता है ? ॥३॥ आप इस सम्बन्ध में सब-कुछ कहने के योग्य हैं। अतः आद्योपान्त आप इस तत्त्व को कहिए।

भगवान् नारायण ने कहा—हे नारद जी, आपने मुझसे बहुत ही उत्तम प्रश्न किया है ॥४॥ मैं इसके लिए शुभदायक दिव्यकारक और सर्वपाप-नाशक गायत्री के एक हजार आठ नामों का वर्णन

सृष्ट्यादौ यद्भगवता पूर्वं प्रोक्तं ब्रवीमि ते ।
अष्टोत्तरसहस्रस्य ऋषिर्ब्रह्मा प्रकीर्तितः ॥ ६ ॥
छन्दो-ऽनुष्टुप् तथा देवी गायत्री देवता स्मृता ।
हलो बीजानि तस्यैव स्वराः शक्तय ईरिताः ॥ ७ ॥
अङ्गन्यास - करन्यासावुच्येते मातृकाक्षरैः ।
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि साधकानां हिताय वै ॥ ८ ॥

ध्यानम्

रक्त-श्वेत-हिरण्य-नील-धवलैर्युक्तां त्रिनेत्रोज्ज्वलां
रक्तां रक्त-नवस्रजां मणिगणैर्युक्तां कुमारीमिमाम् ।
गायत्रीं कमलासनां करतल-व्यानद्ध-कुण्डाम्बुजां
पद्माक्षीं च वरस्रजं च दधतीं हंसाधिरूढां भजे ॥ ९ ॥

करूँगा जिसे आप ध्यानपूर्वक श्रवण करें ॥५॥ सृष्टि के आरम्भ में जैसा कि पहले भगवान् से कहा गया है कि अष्टोत्तरसहस्र अर्थात् एक हजार आठ नामवाले स्तोत्र का ऋषि ब्रह्मा हैं, ॥६॥ गायत्री मन्त्र का छन्द अनुष्टुप् है, गायत्री ही देवता हैं, इसका बीज मन्त्र ही हलन्त-अक्षर हैं और इसमें सात स्वर शक्ति-स्वरूप हैं ॥७॥ इसमें मातृका मन्त्र के छह अक्षर ही अंगन्यास और करन्यास के रूप में हैं। अब साधकों के हितार्थ मैं भगवती का ध्यान करता हूँ ॥८॥

ध्यान—जो लाल, श्वेत और स्वर्ण के समान पीत, नील एवं उज्ज्वल वर्णों—श्रीमुखों-से युक्त हैं, त्रिनेत्रों से देदीप्यमान हैं, रक्तारक्त मणियों से युक्त, नवीन माला धारिणी, कौमारावस्थावाली, पद्मासन की मुद्रा में विराजमान, जिनकी हथेलियों में कमल-पुष्प और कमण्डलु है, कमल की श्रेष्ठ माला से विभूषित और हंस के वाहन पर आरूढ़, ऐसी गायत्री देवी को मैं भजता हूँ ॥९॥

नामावली

१ ॐ अचिन्त्यलक्षणायै नमः
२ ॐ अव्यक्तायै नमः
३ ॐ अर्थमातृमहेश्वर्यै नमः
४ ॐ अमृतार्णवमध्यस्थायै नमः
५ ॐ अजितायै नमः
६ ॐ अपराजितायै नमः
७ ॐ अणिमादिगुणाधारायै नमः
८ ॐ अर्कमण्डलसंस्थितायै नमः
९ ॐ अजरायै नमः
१० ॐ अजाय नमः
११ ॐ अपरायै नमः
१२ ॐ अधर्मायै नमः
१३ ॐ अक्षसूत्रधरायै नमः
१४ ॐ अधरायै नमः
१५ ॐ अकारादिक्षकारान्तायै नमः
१६ ॐ अरिषड्वर्गभेदिन्यै नमः
१७ ॐ अञ्जनादिप्रतीकाशायै नमः
१८ ॐ अञ्जनाद्रिनिवासिन्यै नमः
१९ ॐ अदित्यै नमः
२० ॐ अजपाय नमः
२१ ॐ अविद्याय नमः
२२ ॐ अरविन्दनिभेक्षणायै नमः
२३ ॐ अन्तर्बहिःस्थितायै नमः
२४ ॐ अविद्याध्वंसिन्यै नमः
२५ ॐ अन्तरात्मिकायै नमः
२६ ॐ अजायै नमः
२७ ॐ अजमुखावासायै नमः
२८ ॐ अरविन्दनिभाननायै नमः
२९ ॐ अर्धमात्रायै नमः
३० ॐ अर्थदानज्ञायै नमः
३१ ॐ अरिमण्डलमर्दिन्यै नमः
३२ ॐ असुरघ्न्यै नमः
३३ ॐ अमावास्यायै नमः
३४ ॐ अलक्ष्मीघ्नन्त्यै नमः
३५ ॐ अजार्चितायै नमः
३६ ॐ आदिलक्ष्म्यै नमः
३७ ॐ आदिशक्त्यै नमः
३८ ॐ आकृत्यै नमः
३९ ॐ आयताननायै नमः
४० ॐ आदित्यपदवीचारायै नमः

४१ ॐआदित्यपरिसेवितायै नमः
४२ ॐ आचार्याय नमः
४३ ॐ आवर्तनाय नमः
४४ ॐ आचारायै नमः
४५ ॐ आदिमूर्तिनिवासिन्यनमः
४६ ॐ आग्नेय्यै नमः
४७ ॐ आमर्यै नमः
४८ ॐ आद्यायै नमः
४९ ॐ आराध्यायै नमः
५० ॐ आसनस्थितायै नमः
५१ ॐ आधारनिलयायै नमः
५२ ॐ आधारायै नमः
५३ ॐ आकाशान्तनिवासिन्यै०
५४ ॐ आद्याक्षरसमयुक्तायै०
५५ ॐ अन्तराकाशरूपिण्यैनमः
५६ ॐआदित्यमण्डलगतायै नमः
५७ ॐ आन्तरध्वान्तनाशिन्यै०
५८ ॐ इन्दिरायै नमः
५९ ॐ इष्टदायै नमः
६० ॐ इष्टायै नमः
६१ ॐइन्दीवरनिभेक्षणायै नमः
६२ ॐ इरावत्यै नमः
६३ ॐ इन्द्रपदायै नमः
६४ ॐ इन्द्राण्यै नमः
६५ ॐ इन्दुरूपिण्यै नमः
६६ ॐ इक्षुकोदण्डसंयुक्तायैनमः
६७ ॐ इषुसन्धानकारिण्यै नमः
७८ ॐ इन्द्रनीलसमाकारायैनमः
६९ ॐ इडापिङ्गलरूपिण्यै नमः
७० ॐ इन्द्राक्ष्यै नमः
७१ ॐ ईश्वरीदेव्यै नमः
७२ ॐ ईहात्रयविवर्जितायै नमः
७३ ॐ उमायै नमः
७४ ॐ उषायै नमः
७५ ॐ उडुनिभायै नमः
७६ ॐ उर्वारुकफलाननायै नमः
७७ ॐ उडुप्रभायै नमः
७८ ॐ उडुमत्यै नमः
७९ ॐ उडुपायै नमः
८० ॐ उडुमध्यगायै नमः
८१ ॐ ऊर्ध्वायै नमः
८२ ॐ ऊर्ध्वकेश्यै नमः
८३ ॐ ऊर्ध्वाधोगतिभेदिन्यैनमः
८४ ॐ ऊर्ध्वबाहुप्रियायै नमः

८५ ॐ ऊर्मिमालावाग्ग्रन्थ-
दायिन्यै नमः
८६ ॐ ऋतायै नमः
८७ ॐ ऋषये नमः
८८ ॐ ऋतुमत्यै नमः
८९ ॐ ऋषिदेवनमस्कृतायै नमः
९० ॐ ऋग्वेदायै नमः
९१ ॐ ऋणहन्त्र्यै नमः
९२ ॐ ऋषिमण्डलचारिण्यै नमः
९३ ॐ ऋद्धिदायै नमः
९४ ॐ ऋजुमार्गस्थायै नमः
९५ ॐ ऋजुधर्मायै नमः
९६ ॐ ऋतुप्रदायै नमः
९७ ॐ ऋग्वेदनिलयायै नमः
९८ ॐ ऋज्व्यै नमः
९९ ॐ लुप्तधर्मप्रवर्तिन्यै नमः
१०० ॐ लूतारिवरसंभूतायै नमः
१०१ ॐ लूतादिविषहारिण्यै नमः
१०२ ॐ एकाक्षरायै नमः
१०३ ॐ एकमात्रायै नमः
१०४ ॐ एकायै नमः
१०५ ॐ एकैकनिष्ठितायै नमः
१०६ ॐ ऐन्द्र्यै नमः
१०७ ॐ ऐरावतारूढायै नमः
१०८ ॐ ऐहिकाऽऽमुष्मिकप्रदायै
नमः
१०९ ॐ ओङ्कारायै नमः
११० ॐ ओषध्यै नमः
१११ ॐ ओतायै नमः
११२ ॐ ओतप्रोतनिवासिन्यै नमः
११३ ॐ और्वायै नमः
११४ ॐ औषधसम्पन्नायै नमः
११५ ॐ औपासनफलप्रदायै नमः
११६ ॐ अण्डमध्यस्थितदेव्यै
नमः
११७ ॐ अःकारमनुरूपिण्यै नमः
११८ ॐ कात्यायन्यै नमः
११९ ॐ कालरात्र्यै नमः
१२० ॐ कामाक्ष्यै नमः
१२१ ॐ कामसुन्दर्यै नमः
१२२ ॐ कमलायै नमः
१२३ ॐ कामिन्यै नमः
१२४ ॐ कान्तायै नमः
१२५ ॐ कामदायै नमः

१२६ ॐ कालकण्ठ्यै नमः
१२७ ॐ कारकुम्भस्तनभरायै नमः
१२८ ॐ करवीरसुवासिन्यै नमः
१२९ ॐ कल्याण्यै नमः
१३० ॐ कुण्डलवत्यै नमः
१३१ ॐ कुरुक्षेत्रनिवासिन्यै नमः
१३२ ॐ कुरुविन्ददलाकारायै नमः
१३३ ॐ कुण्डल्यै नमः
१३४ ॐ कुमुदालयायै नमः
१३५ ॐ कालजिह्वायै नमः
१३६ ॐ करालास्यायै नमः
१३७ ॐ कालिकायै नमः
१३८ ॐ कालरूपिण्यै नमः
१३९ ॐ कमनीयगुणायै नमः
१४० ॐ कान्त्यै नमः
१४१ ॐ कलाधारायै नमः
१४२ ॐ कुमुद्वत्यै नमः
१४३ ॐ कौशिक्यै नमः
१४४ ॐ कमलाकारायै नमः
१४५ ॐ कामचारप्रभञ्जिन्यै नमः
१४६ ॐ कामार्यै नमः
१४७ ॐ करुणापाङ्ग्यै नमः
१४८ ॐ कञ्चुवन्तायै नमः
१४९ ॐ कारिप्रियायै नमः
१५० ॐ केश्यै नमः
१५१ ॐ केशवनुतायै नमः
१५२ ॐ कदम्बकुसुमप्रियायै नमः
१५३ ॐ कालिन्द्यै नमः
१५४ ॐ कालिकायै नमः
१५५ ॐ काञ्च्यै नमः
१५६ ॐ कलशोद्भवसंस्तुतायै नमः
१५७ ॐ काममात्रे नमः
१५८ ॐ क्रतुमत्यै नमः
१५९ ॐ कामरूपायै नमः
१६० ॐ कृपावत्यै नमः
१६१ ॐ कुमार्यै नमः
१६२ ॐ कुण्डनिलयायै नमः
१६३ ॐ किरात्यै नमः
१६४ ॐ कीरवाहनायै नमः
१६५ ॐ कैकेय्यै नमः
१६६ ॐ कोकिलालापायै नमः
१६७ ॐ केतक्यै नमः
१६८ ॐ कुसुमप्रियायै नमः
१६९ ॐ कमण्डलुधरायै नमः

१७० ॐ काल्यै नमः
१७१ ॐ कर्मनिर्मूलकारिण्यै नमः
१७२ ॐ कलहंसगत्यै नमः
१७३ ॐ कक्षायै नमः
१७४ ॐ कृतकौतुकमङ्गलायै नमः
१७५ ॐ कस्तूरीतिलकायै नमः
१७६ ॐ कम्प्रायै नमः
१७७ ॐ करीन्द्रगमनायै नमः
१७८ ॐ कुह्वै नमः
१७९ ॐ कर्पूरलेपनायै नमः
१८० ॐ कृष्णायै नमः
१८१ ॐ कपिलायै नमः
१८२ ॐ कुहराश्रयायै नमः
१८३ ॐ कूटस्थायै नमः
१८४ ॐ कुधरायै नमः
१८५ ॐ कम्रायै नमः
१८६ ॐ कुक्षिस्थाखिलविष्टपायै नमः
१८७ ॐ खड्गखेटकरायै नमः
१८८ ॐ खर्वायै नमः
१८९ ॐ खेचर्यै नमः
१९० ॐ खगवाहनायै नमः
१९१ ॐ खट्वाङ्गधारिण्यै नमः
१९२ ॐ ख्यातायै नमः
१९३ ॐ खगराजोपरिस्थितायै नमः
१९४ ॐ खलघ्न्यै नमः
१९५ ॐ खण्डितजरायै नमः
१९६ ॐ खण्डाख्यानप्रदायिन्यै नमः
१९७ ॐ खण्डेन्दुतिलकायै नमः
१९८ ॐ गङ्गायै नमः
१९९ ॐ गणेशगुहपूजितायै नमः
२०० ॐ गायत्र्यै नमः
२०१ ॐ गोमत्यै नमः
२०२ ॐ गीतायै नमः
२०३ ॐ गान्धार्यै नमः
२०४ ॐ गानलोलुपायै नमः
२०५ ॐ गौतम्यै नमः
२०६ ॐ गामिन्यै नमः
२०७ ॐ गाधायै नमः
२०८ ॐ गन्धर्वाऽप्सरसेवितायै०
२०९ ॐ गोविन्दचरणाक्रान्तायै नमः

२१० ॐ गुणत्रयविभावितायै नमः
२११ ॐ गान्धर्व्यै नमः
२१२ ॐ गह्वर्यै नमः
२१३ ॐ गोत्रायै नमः
२१४ ॐ गिरीशायै नमः
२१५ ॐ गहनायै नमः
२१६ ॐ गम्यै नमः
२१७ ॐ गुहावासायै नमः
२१८ ॐ गुणवत्यै नमः
२१९ ॐ गुरुपापप्रणाशिन्यै नमः
२२० ॐ गुर्व्यै नमः
२२१ ॐ गुणवत्यै नमः
२२२ ॐ गुह्यायै नमः
२२३ ॐ गोप्तव्यायै नमः
२२४ ॐ गुणदायिन्यै नमः
२२५ ॐ गिरिजायै नमः
२२६ ॐ गुह्यमातङ्ग्यै नमः
२२७ ॐ गरुडध्वजवल्लभायै नमः
२२८ ॐ गर्वापहारिण्यै नमः
२२९ ॐ गोदायै नमः
२३० ॐ गोकुलस्थायै नमः
२३१ ॐ गदाधरायै नमः
२३२ ॐ गोकर्णनिलयासक्तायै०
२३३ ॐ गुह्यमण्डलवर्तिन्यै नमः
२३४ ॐ घर्मदायै नमः
२३५ ॐ घनदायै नमः
२३६ ॐ घण्टायै नमः
२३७ ॐ घोरदानवमर्दिन्यै नमः
२३८ ॐ घृणिमन्त्रमय्यै नमः
२३९ ॐ घोषायै नमः
२४० ॐ घनसंपातदायिन्यै नम
२४१ ॐ घण्टारवप्रियायै नमः
२४२ ॐ घ्राणायै नमः
२४३ ॐ घृणिसन्तुष्टिकारिण्यै०
२४४ ॐ घनारिमण्डलायै नमः
२४५ ॐ घूर्णायै नमः
२४६ ॐ घृताच्यै नमः
२४७ ॐ घनवेगिन्यै नमः
२४८ ॐ ज्ञानधातुमय्यै नमः
२४९ ॐ चर्चायै नमः
२५० ॐ चर्चितायै नमः
२५१ ॐ चारुहासिन्यै नमः
२५२ ॐ चटुलायै नमः
२५३ ॐ चाण्डिकायै नमः

२५४ ॐ चित्रायै नमः
२५५ ॐ चित्रमाल्यविभूषितायै नमः
२५६ ॐ चतुर्भुजायै नमः
२५७ ॐ चारुदन्तायै नमः
२५८ ॐ चातुर्यै नमः
२५९ ॐ चरितप्रदायै नमः
२६० ॐ चूलिकायै नमः
२६१ ॐ चित्रवस्त्रान्तायै नमः
२६२ ॐ चन्द्रमःकर्णकुण्डलायै न०
२६३ ॐ चन्द्रहासायै नमः
२६४ ॐ चारुदात्र्यै नमः
२६५ ॐ चकोर्यै नमः
२६६ ॐ चन्द्रहासिन्यै नमः
२६७ ॐ चन्द्रिकायै नमः
२६८ ॐ चन्द्रधात्र्यै नमः
२६९ ॐ चौर्यै नमः
२७० ॐ चौराये नमः
२७१ ॐ चण्डिकायै नमः
२७२ ॐ चञ्चद्वाग्वादिन्यै नमः
२७३ ॐ चन्द्रचूडायै नमः
२७४ ॐ चोरविनाशिन्यै नमः
२७५ ॐ चारुचन्दनलिप्ताङ्ग्यै न०
२७६ ॐ चञ्चच्चामरवीजितायै नमः
२७७ ॐ चारुमध्यायै नमः
२७८ ॐ चारुगत्यै नमः
२७९ ॐ चन्दिलायै नमः
२८० ॐ चन्द्ररूपिण्यै नमः
२८१ ॐ चारुहोमप्रियायै नमः
२८२ ॐ चार्वाचरितायै नमः
२८३ ॐ चक्रबाहुकायै नमः
२८४ ॐ चन्द्रमण्डलमध्यस्थायै०
२८५ ॐ चन्द्रमण्डलदर्पणायैनमः
२८६ ॐ चक्रवाकस्तन्यै नमः
२८७ ॐ चेष्टायै नमः
२८८ ॐ चित्रायै नमः
२८९ ॐ चारुविलासिन्यै नमः
२९० ॐ चित्स्वरूपायै नमः
२९१ ॐ चन्द्रवत्यै नमः
२९२ ॐ चन्द्रमसे नमः
२९३ ॐ चन्दनप्रियायै नमः
२९४ ॐ चोदयित्र्यै नमः
२९५ ॐ चिरप्रज्ञायै नमः
२९६ ॐ चातकायै नमः

२९७ ॐ चारुहेतक्यै नमः
२९८ ॐ छत्रयातायै नमः
२९९ ॐ छत्रधरायै नमः
३०० ॐ छायायै नमः
३०१ ॐ छन्दःपरिच्छदायै नमः
३०२ ॐ छायादेव्यै नमः
३०३ ॐ छिद्रनखायै नमः
३०४ ॐ छन्नेन्द्रियविसर्पिण्यै नमः
३०५ ॐ छन्दोऽनुष्टुप्प्रतिष्ठान्तायै नमः
३०६ ॐ छिद्रोपद्रवभेदिन्यै नम
३०७ ॐ छेदायै नमः
३०८ ॐ छत्रेश्वर्यै नमः
३०९ ॐ छिन्नायै नमः
३१० ॐ छुरिकायै नमः
३११ ॐ छेदनप्रियायै नमः
३१२ ॐ जनन्यै नमः
३१३ ॐ जन्मरहितायै नमः
३१४ ॐ जातवेदायै नमः
३१५ ॐ जगन्मय्यै नमः
३१६ ॐ जाह्नव्यै नमः
३१७ ॐ जटिलायै नमः
३१८ ॐ जैत्र्यै नमः
३१९ ॐ जरामरणवर्जितायै नमः
३२० ॐ जम्बूद्वीपवत्यै नमः
३२१ ॐ ज्वालायै नमः
३२२ ॐ जयन्त्यै नमः
३२३ ॐ जलशालिन्यै नमः
३२४ ॐ जितेन्द्रियायै नमः
३२५ ॐ जितक्रोधायै नमः
३२६ ॐ जितामित्रायै नमः
३२७ ॐ जगत्प्रियायै नमः
३२८ ॐ जातरूपमय्यै नमः
३२९ ॐ जिह्वायै नमः
३३० ॐ जानक्यै नमः
३३१ ॐ जगत्यै नमः
३३२ ॐ जरायै नमः
३३३ ॐ जनित्र्यै नमः
३३४ ॐ जह्नुतनयायै नमः
३३५ ॐ जगत्त्रयहितैषिण्यै नमः
३३६ ॐ ज्वालामुख्यै नमः
३३७ ॐ जपवत्यै नमः
३३८ ॐ ज्वरघ्न्यै नमः
३३९ ॐ जितविष्टपायै नमः

३४० ॐ जिताक्रान्तमध्यै नमः
३४१ ॐ ज्वालायै नमः
३४२ ॐ जाग्रत्यै नमः
३४३ ॐ ज्वरदेवतायै नमः
३४४ ॐ ज्वलन्त्यै नमः
३४५ ॐ जलदायै नमः
३४६ ॐ ज्येष्ठायै नमः
३४७ ॐ ज्याघोषास्फोटदिङ्मुख्यै नमः
३४८ ॐ जम्भिन्यै नमः
३४९ ॐ जृम्भणायै नमः
३५० ॐ जृम्भायै नमः
३५१ ॐ ज्वलन्माणिक्यकुण्डलायै नमः
३५२ ॐ झिंझिकायै नमः
३५३ ॐ झणनिर्घोषायै नमः
३५४ ॐ झंझामारुतवेगिन्यै नमः
३५५ ॐ झल्लरीवाद्यकुशलायै नमः
३५६ ॐ ञरूपायै नमः
३५७ ॐ ञभुजाम्मृतायै नमः
३५८ ॐ टकबाणसमायुक्तायै नमः
३५९ ॐ टंकिन्यै नमः
३६० ॐ टंकभेदिन्यै नमः
३६१ ॐ टंकीगणकृताघोषायै नमः
३६२ ॐ टंकनीयमहोरसायै नमः
३६३ ॐ टङ्कारकारिणीदेव्यै नमः
३६४ ॐ ठठशब्दनिनादिन्यै नमः
३६५ ॐ डामर्यै नमः
३६६ ॐ डाकिन्यै नमः
३६७ ॐ डिम्भायै नमः
३६८ ॐ डुण्डुमारैकनिर्जितायै०
३६९ ॐ डामरीतन्त्रमार्गस्थायै नमः
३७० ॐ डमड्डमरुनादिन्यै नमः
३७१ ॐ डिण्डीरवसहायै नमः
३७२ ॐ डिम्भलसत्क्रीडापरायणायै नमः
३७३ ॐ ढुण्ढिविघ्नेशजनन्यै नमः
३७४ ॐ ढक्काहस्तायै नमः
३७५ ॐ ढिलिव्रजायै नमः
३७६ ॐ नित्यज्ञानायै नमः
३७७ ॐ निरुपमायै नमः
३७८ ॐ निर्गुणायै नमः
३७९ ॐ नर्मदायै नमः

३८० ॐ नद्यै नमः
३८१ ॐ त्रिगुणायै नमः
३८२ ॐ त्रिपदायै नमः
३८३ ॐ तन्व्यै नमः
३८४ ॐ तुलस्यै नमः
३८५ ॐ तरुणायै नमः
३८६ ॐ तरवे नमः
३८७ ॐ त्रिविक्रमपदक्रान्तायै नमः
३८८ ॐ तुरीयपदगामिन्यै नमः
३८९ ॐ तरुणादित्यसंकाशायै नमः
३९० ॐ तामस्यै नमः
३९१ ॐ तुहिनायै नमः
३९२ ॐ तुरायै नमः
३९३ ॐ त्रिकालज्ञानसंपन्नायै•
३९४ ॐ त्रिवल्यै नमः
३९५ ॐ त्रिलोचनायै नमः
३९६ ॐ त्रिशक्त्यै नमः
३९७ ॐ त्रिपुरायै नमः
३९८ ॐ तुङ्गायै नमः
३९९ ॐ तुरङ्गवदनायै नमः
४०० ॐ तिमिङ्गिलगिलायै नमः
४०१ ॐ तीव्रायै नमः
४०२ ॐ त्रिस्रोतायै नमः
४०३ ॐ तामसादिन्यै नमः
४०४ ॐ तन्त्रमन्त्रविशेषायै नमः
४०५ ॐ तनुमध्यायै नमः
४०६ ॐ त्रिविष्टपायै नमः
४०७ ॐ त्रिसन्ध्यायै नमः
४०८ ॐ त्रिस्तन्यै नमः
४०९ ॐ तोषासंस्थायै नमः
४१० ॐ तालप्रतापिन्यै नमः
४११ ॐ ताटंकिन्यै नमः
४१२ ॐ तुषाराभायै नमः
४१३ ॐ तुहिनाचलवासिन्यै नमः
४१४ ॐ तन्तुजाल-समायुक्तायै नमः
४१५ ॐ तारहारावलिप्रियायै नमः
४१६ ॐ तिलहोमप्रियायै नमः
४१७ ॐ तीर्थायै नमः
४१८ ॐ तमालकुसुमाकृत्यै नमः
४१९ ॐ तारकायै नमः

४२० ॐ त्रियुतायै नमः
४२१ ॐ तन्व्यै नमः
४२२ ॐ त्रिशंकुपरिवारितायै नमः
४२३ ॐ तलोदर्यै नमः
४२४ ॐ तिलाभूषायै नमः
४२५ ॐ ताटङ्कप्रियवाहिन्यै नमः
४२६ ॐ त्रिजटायै नमः
४२७ ॐ तित्तिर्यै नमः
४२८ ॐ तृष्णायै नमः
४२९ ॐ त्रिविधायै नमः
४३० ॐ तरुणाकृत्यै नमः
४३१ ॐ तप्तकाञ्चनसंकाशायै नमः
४३२ ॐ तप्तकाञ्चनभूषणायै नमः
४३३ ॐ त्रैयम्बकायै नमः
४३४ ॐ त्रिवर्गायै नमः
४३५ ॐ त्रिकालज्ञानदायिन्यै नमः
४३६ ॐ तर्पणायै नमः
४३७ ॐ तृप्तिदायै नमः
४३८ ॐ तृप्त्यै नमः
४३९ ॐ तामस्यै नमः
४४० ॐ तुम्बुरुस्तुतायै नमः
४४१ ॐ तार्क्ष्यस्थायै नमः
४४२ ॐ त्रिगुणाकारायै नमः
४४३ ॐ त्रिभंग्यै नमः
४४४ ॐ तनुवल्ल्यै नमः
४४५ ॐ थात्कार्यै नमः
४४६ ॐ थारवायै नमः
४४७ ॐ थान्तायै नमः
४४८ ॐ दोहिन्यै नमः
४४९ ॐ दीनवत्सलायै नमः
४५० ॐ दानवान्तकर्यै नमः
४५१ ॐ दुर्गायै नमः
४५२ ॐ दुर्गासुरनिबर्हिण्यै नमः
४५३ ॐ देवरीत्यै नमः
४५४ ॐ दिवारात्र्यै नमः
४५५ ॐ द्रौपद्यै नमः
४५६ ॐ दुन्दुभिस्वनायै नमः
४५७ ॐ देवयान्यै नमः
४५८ ॐ दुरावासायै नमः
४५९ ॐ दारिद्र्योद्भेदिन्यै नमः
४६० ॐ दिवायै नमः
४६१ ॐ दामोदरप्रियायै नमः
४६२ ॐ दीप्तायै नमः
४६३ ॐ दिग्वासायै नमः

४६४ ॐ दिग्विमोहिन्यै नमः
४६५ ॐ दण्डकारण्यनिलयायै०
४६६ ॐ दण्डिन्यै नमः
४६७ ॐ देवपूजितायै नमः
४६८ ॐ देववन्द्यायै नमः
४६९ ॐ दिविषदायै नमः
४७० ॐ द्वेषिण्यै नमः
४७१ ॐ दानवाकृतये नमः
४७२ ॐ दीनानाथस्तुतायै नमः
४७३ ॐ दीक्षायै नमः
४७४ ॐ दैवतादिस्वरूपिण्यैनमः
४७५ ॐ धात्र्यै नमः
४७६ ॐ धनुर्धरायै नमः
४७७ ॐ धेनवे नमः
४७८ ॐ धारिण्यै नमः
४७९ ॐ धर्मचारिण्यै नमः
४८० ॐ धरंधरायै नमः
४८१ ॐ धराधरायै नमः
४८२ ॐ धनदायै नमः
४८३ ॐ धान्यदोहिन्यै नमः
४८४ ॐ धर्मशीलायै नमः
४८५ ॐ धनाध्यक्षायै नमः
४८६ ॐ धनुर्वेदविशारदायैनमः
४८७ ॐ घृ यै नमः
४८८ ॐ धन्यायै नमः
४८९ ॐ धृतपदायै नमः
४९० ॐ धर्मराजप्रियायै नमः
४९१ ॐ ध्रुवायै नमः
४९२ ॐ धूमावत्यै नमः
४९३ ॐ धूमकेश्यै नमः
४९४ ॐ धर्मशास्त्रप्रकाशिन्यै०
४९५ ॐ ॐ नन्दायै नमः
४९६ ॐ नन्दप्रियायै नमः
४९७ ॐ निद्रायै नमः
४९८ ॐ नृनुतायै नमः
४९९ ॐ नन्दनात्मिकायै नमः
५०० ॐ नर्मदायै नमः
५०१ ॐ नलिन्यै नमः
५०२ ॐ नीलायै नमः
५०३ ॐ नीलकण्ठसमाश्रयायै०
५०४ ॐ नारायणप्रियायै नमः
५०५ ॐ नित्यायै नमः
५०६ ॐ निर्मलायै नमः
५०७ ॐ निर्गुणायै नमः

५०८ ॐ निश्चये नमः
५०९ ॐ निराधारायै नमः
५१० ॐ निरुग्मायै नमः
५११ ॐ नित्यशुद्धायै नमः
५१२ ॐ निरंजनायै नमः
५१३ ॐ नादबिन्दुकलातीतायै०
५१४ ॐ नादबिन्दुकलात्मिकायै नमः
५१५ ॐ नृसिंहिन्यै नमः
५१६ ॐ नगधरायै नमः
५१७ ॐ नृपनागविभूषितायै०
५१८ ॐ नरककलेशशमन्यै नमः
५१९ ॐ नारायणपदाद्भवायै०
५२० ॐ निरवाद्यायै नमः
५२१ ॐ निराकारायै नमः
५२२ ॐ नारदप्रियकारिण्यै नमः
५२३ ॐ नानाज्योतिस्समाख्यातायै नमः
५२४ ॐ निधिदायै नमः
५२५ ॐ निर्मलात्मिकायै नमः
५२६ ॐ नवमत्रधरायै नमः
५२७ ॐ नीतये नमः
५२८ ॐ निरुपद्रवकारिण्यै नमः
५२९ ॐ नन्दजायै नमः
५३० ॐ नवरत्नाढ्यायै नमः
५३१ ॐ नैमिषारण्यवासिन्यै०
५३२ ॐ नवनीतप्रियायै नमः
५३३ ॐ नार्यै नमः
५३४ ॐ नीलजीमूतनिस्वनायै०
५३५ ॐ निमेषिण्यै नमः
५३६ ॐ नदीरूपायै नमः
५३७ ॐ नीलग्रीवायै नमः
५३८ ॐ निशीश्वर्यै नमः
५३९ ॐ नामावल्यै नमः
५४० ॐ निशुम्भघ्न्यै नमः
५४१ ॐ नागलोकनिवासिन्यै०
५४२ ॐ नवजाम्बूनदप्रख्यायै०
५४३ ॐ नागलोकाधिदेवतायै०
५४४ ॐ नूपुराक्रान्तचरणायै०
५४५ ॐ नरचित्तप्रमोदिन्यै नमः
५४६ ॐ निमग्नारक्तनयनायै नमः
५४७ ॐ निर्घातसमनिस्वनायै०
५४८ ॐ नन्दनाद्याननिलयायै०
५४९ ॐ निर्व्यूहापरिचारिण्यै नमः

५५० ॐ पार्वत्यै नमः
५५१ ॐ परमोदरायै नमः
५५२ ॐ परब्रह्मात्मिकायै नमः
५५३ ॐ परायै नमः
५५४ ॐ पञ्चकोशविनिर्मुक्तायै०
५५५ ॐ पञ्चपातकनाशिन्यैनमः
५५६ ॐ परचित्तविधानज्ञायैनमः
५५७ ॐ पञ्चिकायै नमः
५५८ ॐ पञ्चरूपिण्यै नमः
५५९ ॐ पूर्णिमायै नमः
५६० ॐ परमायै ननः
५६१ ॐ प्रीत्यै नमः
५६२ ॐ परतेजःप्रकाशिन्यैनमः
५६३ ॐ पुराण्यै नमः
५६४ ॐ पौरुष्यै नमः
५६५ ॐ पुण्यायै नमः
५६६ ॐ पुण्डरीकनिभेक्षणायै०
५६७ ॐपातालतलनिर्मग्नायै०
५६८ ॐ प्रीतायै नमः
५६९ ॐ प्रीतिविवर्धिन्यै नमः
५७० ॐ पावन्यै नमः
५७१ ॐ पादसंहितायै नमः
५७२ ॐ पेशलायै नमः
५७३ ॐ पवनाशिन्यै नमः
५७४ ॐ प्रजापतये नमः
५७५ ॐ परिश्रान्तायै नमः
५७६ ॐ पर्वतस्तनमण्डलायैनमः
५७७ ॐ पद्मप्रियायै नमः
५७८ ॐ पद्मसंस्थायै नमः
५७९ ॐ पद्माक्ष्यै नमः
५८० ॐ पद्मसंभवायै नमः
५८१ ॐ पद्मपत्रायै नमः
५८२ ॐ पद्मपदायै नमः
५८३ ॐ पद्मिन्यै नमः
५८४ ॐ प्रियभाषिण्यै नमः
५८५ ॐ पशुपाशविनिर्मुक्तायै नमः
५८६ ॐ पुरंध्र्यै नमः
५८७ ॐ पुरवासिन्यै नमः
५८८ ॐ पुष्कलायै नमः
५८९ ॐ पुरुषायै नमः
५९० ॐ पर्वायै नमः
५९१ ॐ पारिजातकुसुमप्रियायै नमः

५९२ ॐ पतिव्रतायै नमः
५९३ ॐ पवित्राङ्घ्र्यै नमः
५९४ ॐ पुष्पहासपरायणायै नमः
५९५ ॐ प्रज्ञावतीसुतायै नमः
५९६ ॐ पौत्र्यै नमः
५९७ ॐ पुत्रपूज्यायै नमः
५९८ ॐ पयस्विन्यै नमः
५९९ ॐ पट्टिपाशधरायै नमः
६०० ॐ पंक्त्यै नमः
६०१ ॐ पितृलोकप्रदायिन्यै नमः
६०२ ॐ पुराण्यै नमः
६०३ ॐ पुण्यशीलायै नमः
६०४ ॐ प्रणतार्तिविनाशिन्यै नमः
६०५ ॐ प्रद्युम्नजनन्यै नमः
६०६ ॐ पुष्टायै नमः
६०७ ॐ पितामहपरिग्रहायै नमः
६०८ ॐ पुण्डरीकपुरावासायै नमः
६०९ ॐ पुण्डरीकसमाननायै०
६१० ॐ पृथुजङ्घायै नमः
६११ ॐ पृथुभुजायै नमः
६१२ ॐ पृथुपादायै नमः
६१३ ॐ पृथूदर्यै नमः
६१४ ॐ प्रवालशोभायै नमः
६१५ ॐ पिङ्गाक्ष्यै नमः
६१६ ॐ पीतवासायै नमः
६१७ ॐ प्रचापलायै नमः
६१८ ॐ प्रसवायै नमः
६१९ ॐ पुष्टिदायै नमः
६२० ॐ पुण्यायै नमः
६२१ ॐ प्रतिष्ठायै नमः
६२२ ॐ प्रणवागत्यै नमः
६२३ ॐ पञ्चवर्णायै नमः
६२४ ॐ पञ्चवाण्यै नमः
६२५ ॐ पञ्चिकायै नमः
६२६ ॐ पञ्जरस्थितायै नमः
६२७ ॐ परमायायै नमः
६२८ ॐ परज्योतिषे नमः
६२९ ॐ परप्रीतये नमः
६३० ॐ परागतये नमः
६३१ ॐ पराकाष्ठायै नमः
६३२ ॐ परेशान्यै नमः
६३३ ॐ पावन्यै नमः
६३४ ॐ पावकद्युतये नमः
६३५ ॐ पुण्यभद्रायै नमः

६३६ ॐ परिच्छेद्यायै नमः
६३७ ॐ पुष्पहासायै नमः
६३८ ॐ पृथूदर्यै नमः
६३९ ॐ पीताङ्ग्यै नमः
६४० ॐ पीतवसनायै नमः
६४१ ॐ पीतशय्यायै नमः
६४२ ॐ पिशाचिन्यै नमः
६४३ ॐ पीतक्रियायै नमः
६४४ ॐ पिशाचघ्न्यै नमः
६४५ ॐ पाटलाक्ष्यै नमः
६४६ ॐ पटुक्रियायै नमः
६४७ ॐ पंचभक्षप्रियाचारायै०
६४८ ॐ पूतनाप्राणघातिन्यैनमः
६४९ ॐ पुन्नागवनमध्यस्थायै०
६५० ॐ पुण्यतीर्थनिषेवितायै०
६५१ ॐ पंचाङ्ग्यै नमः
६५२ ॐ पराशक्त्यै नमः
६५३ ॐ परमाह्लादकारिण्यै नमः
६५४ ॐ पुष्पकाण्डस्थितायै नमः
६५५ ॐ पूषायै नमः
६५६ ॐ पोषिताखिलविष्टपायै०
६५७ ॐ पानप्रियायै नमः
६५८ ॐ पञ्चशिखायै नमः
६५९ ॐ पन्नगोपरिशायिन्यै नमः
६६० ॐ पञ्चमात्रात्मिकायै नमः
६६१ ॐ पृथ्व्यै नमः
६६२ ॐ पथिकायै नमः
६६३ ॐ पृथुदोह्न्यै नमः
६६४ ॐ पुराणन्यायमीमांसायै०
६६५ ॐ पाटल्यै नमः
६६६ ॐ पुष्पगन्धिन्यै नमः
६६७ ॐ पुण्यप्रजायै नमः
६६८ ॐ पारदात्र्यै नमः
६६९ ॐ परमार्गैकगोचरायैनमः
६७० ॐ प्रवालशोभायै नमः
६७१ ॐ पूर्णाशायै नमः
६७२ ॐ प्रणवायै नमः
६७३ ॐ पल्लवोदर्यै नमः
६७४ ॐ फलिन्यै नमः
६७५ ॐ फलदायै नमः
६७६ ॐ फल्गवे नमः
६७७ ॐ फूत्कार्यै नमः
६७८ ॐ फलकाकृत्यै नमः
६७९ ॐ फणीन्द्रभोगशयनायैनम

६८० ॐ फणिमण्डलमण्डितायै०
६८१ ॐ बालबालायै नमः
६८२ ॐ बहुमतायै नमः
६८३ ॐ बालातपनिभांशुकायै नमः
६८४ ॐ बलभद्रप्रियायै नमः
६८५ ॐ वन्द्यायै नमः
६८६ ॐ वडवायै नमः
६८७ ॐ बुद्धिसंस्तुतायै नमः
६८८ ॐ बन्दीदेव्यै नमः
६८९ ॐ बिलवत्यै नमः
६९० ॐ बडिशघ्न्यै नमः
६९१ ॐ बलिप्रियायै नमः
६९२ ॐ बान्धव्यै नमः
६९३ ॐ बोधितायै नमः
६९४ ॐ बुद्ध्यै नमः
६९५ ॐ बन्धूककुसुमप्रियायै नमः
६९६ ॐ बालभानुप्रभाकारायै नमः
६९७ ॐ ब्राह्म्यै नमः
६९८ ॐ ब्राह्मणदेवतायै नमः
६९९ ॐ बृहस्पतिस्तुतायै नमः
७०० ॐ वृन्दायै नमः
७०१ ॐ वृन्दावनविहारिण्यै नमः
७०२ ॐ बालाकिन्यै नमः
७०३ ॐ बिलाहारायै नमः
७०४ ॐ बिलवासायै नमः
७०५ ॐ बहूदकायै नमः
७०६ ॐ बहुनेत्रायै नमः
७०७ ॐ बहुपदायै नमः
७०८ ॐ बहुकर्णावतंसिकायै नमः
७०९ ॐ बहुबाहुयुतायै नमः
७१० ॐ बीजरूपिण्यै नमः
७११ ॐ बहुरूपिण्यै नमः
७१२ ॐ बिन्दुनादकलातीतायै०
७१३ ॐ बिन्दुनादस्वरूपिण्यै नमः
७१४ ॐ बद्धगोधाङ्गुलित्राणायै०
७१५ ॐ बदर्याश्रमवासिन्यै नमः
७१६ ॐ वृन्दारकायै नमः
७१७ ॐ बृहत्स्कन्धायै नमः
७१८ ॐ बृहतीबाणपातिन्यै नमः
७१९ ॐ वृन्दाध्यक्षायै नमः
७२० ॐ बहुनुतायै नमः
७२१ ॐ वनितायै नमः
७२२ ॐ बहुविक्रमायै नमः
७२३ ॐ बद्धपद्मासनासीनायै नमः

७२४ ॐ बिल्वपत्रतलस्थितायै०
७२५ ॐ बोधिद्रुमनिजावासायै०
७२६ ॐ बडिस्थायै नमः
७२७ ॐ बिन्दुदर्पणायै नमः
७२८ ॐ बालायै नमः
७२९ ॐ बाणासनवत्यै नमः
७३० ॐ बडवानलवेगिन्यै०
७३१ ॐ ब्रह्माण्डबहिरन्तःस्थायै नमः
७३२ ॐ ब्रह्मकङ्कणसूत्रिण्यै नमः
७३३ ॐ भवान्यै नमः
७३४ ॐ भीषणवत्यै नमः
७३५ ॐ भाविन्यै नमः
७३६ ॐ भयहारिण्यै नमः
७३७ ॐ भद्रकाल्यै नमः
७३८ ॐ भुजङ्गाक्ष्यै नमः
७३९ ॐ भारत्यै नमः
७४० ॐ भारताशयायै नमः
७४१ ॐ भैरव्यै नमः
७४२ ॐ भीषणाकारायै नमः
७४३ ॐ भूतिदायै नमः
७४४ ॐ भूतिमालिन्यै नमः
७४५ ॐ भामिन्यै नमः
७४६ ॐ भोगनिरतायै नमः
७४७ ॐ भद्रदायै नमः
७४८ ॐ भूरिविक्रमायै नमः
७४९ ॐ भूतवासायै नमः
७५० ॐ भृगुलतायै नमः
७५१ ॐ भार्गव्यै नमः
७५२ ॐ भूसुरार्चितायै नमः
७५३ ॐ भागीरथ्यै नमः
७५४ ॐ भोगवत्यै नमः
७५५ ॐ भवनस्थायै नमः
७५६ ॐ भिषग्वरायै नमः
७५७ ॐ भामिन्यै नमः
७५८ ॐ भोगिन्यै नमः
७५९ ॐ भाषायै नमः
७६० ॐ भवान्यै नमः
७६१ ॐ भूरिदक्षिणायै नमः
७६२ ॐ भर्गात्मिकायै नमः
७६३ ॐ भीमवत्यै नमः
७६४ ॐ भवबन्धविमोचिन्यै नमः
७६५ ॐ भजनीयायै नमः
७६६ ॐ भूतधात्रीरञ्जितायै नमः

७६७ ॐ भुवनेश्वर्यै नमः
७६८ ॐ भुजङ्गवलयायै नमः
७६९ ॐ भीमायै नमः
७७० ॐ मेरुपडायै नमः
७७१ ॐ भागधेयिन्यै नमः
७७२ ॐ मात्रे नमः
७७३ ॐ मायायै नमः
७७४ ॐ मधुमत्यै नमः
७७५ ॐ मधुजिह्वायै नमः
७७६ ॐ मधुप्रियायै नमः
७७७ ॐ महादेव्यै नमः
७७८ ॐ महाभागायै नमः
७७९ ॐ मालिन्यै नमः
७८० ॐ मीनलोचनायै नमः
७८१ ॐ मायातीतायै नमः
७८२ ॐ मधुमत्यै नमः
७८३ ॐ मधुमांसायै नमः
७८४ ॐ मधुद्रवायै नमः
७८५ ॐ मानव्यै नमः
७८६ ॐ मधुसम्भूतायै नमः
७८७ ॐ मिथिलापुरवासिन्यै नमः
७८८ ॐ मधुकैटभसंहर्त्र्यै नमः
७८९ ॐ मेदिन्यै नमः
७९० ॐ मेघमालिन्यै नमः
७९१ ॐ मन्दोदर्यै नमः
७९२ ॐ महामायायै नमः
७९३ ॐ मैथिल्यै नमः
७९४ ॐ मसृणप्रियायै नमः
७९५ ॐ महालक्ष्म्यै नमः
७९६ ॐ महाकाल्यै नमः
७९७ ॐ महाकन्यायै नमः
७९८ ॐ महेश्वर्यै नमः
७९९ ॐ माहेन्द्र्यै नमः
८०० ॐ मेरुतनयायै नमः
८०१ ॐ मन्दारकुसुमार्चितायै०
८०२ ॐ मञ्जु मञ्जीरचरणायै नमः
८०३ ॐ मोक्षदायै नमः
८०४ ॐ मञ्जुभाषिण्यै नमः
८०५ ॐ मधुरद्राविण्यै नमः
८०६ ॐ मुद्रायै नमः
८०७ ॐ मलयायै नमः
८०८ ॐ मलयान्वितायै नमः
८०९ ॐ मेधायै नमः
८१० ॐ मरकतश्यामायै नमः

८११ ॐ मागध्यै नमः
८१२ ॐ मेनकात्मजायै नमः
८१३ ॐ महामायै नमः
८१४ ॐ महावीरायै नमः
८१५ ॐ महाश्यामायै नमः
८१६ ॐ मनुस्तुतायै नमः
८१७ ॐ मातृकायै नमः
८१८ ॐ मिहिराभासायै नमः
८१९ ॐ मुकुन्दपदविक्रमायै नमः
८२० ॐ मूलाधारस्थितायै नमः
८२१ ॐ मुग्धायै नमः
८२२ ॐ मणिपूरकवासिन्यै नमः
८२३ ॐ मृगाक्ष्यै नमः
८२४ ॐ महिषारूढायै नमः
८२५ ॐ महिषासुरमर्दिन्यै नमः
८२६ ॐ योगासनायै नमः
८२७ ॐ योगगम्यायै नमः
८२८ ॐ योगायै नमः
८२९ ॐ यौवनकाश्रयायै नमः
८३० ॐ यौवन्यै नमः
८३१ ॐ युद्धमध्यस्थायै नमः
८३२ ॐ यमुनायै नमः
८३३ ॐ युगधारिण्यै नमः
८३४ ॐ यक्षिण्यै नमः
८३५ ॐ योगयुक्तायै नमः
८३६ ॐ यक्षराजप्रसूत्यै नमः
८३७ ॐ यात्रायै नमः
८३८ ॐ यानविधानज्ञायै नमः
८३९ ॐ यदुवंशसमुद्भवायै नमः
८४० ॐ यकारादिहकारान्तायै०
८४१ ॐ याजुष्यै नमः
८४२ ॐ यज्ञरूपिण्यै नमः
८४३ ॐ यामिन्यै नमः
८४४ ॐ योगनिरतायै नमः
८४५ ॐ यातुधानभयंकर्यै नमः
८४६ ॐ रुक्मिण्यै नमः
८४७ ॐ रमण्यै नमः
८४८ ॐ रामायै नमः
८४९ ॐ रेवत्यै नमः
८५० ॐ रेणुकायै नमः
८५१ ॐ रत्यै नमः
८५२ ॐ रौद्र्यै नमः
८५३ ॐ रौद्रप्रियाकारायै नमः
८५४ ॐ राममात्रे नमः

८५५ ॐ रतिप्रियायै नमः
८५६ ॐ रोहिण्यै नमः
८५७ ॐ राज्यदायै नमः
८५८ ॐ रेवायै नमः
८५९ ॐ रमायै नमः
८६० ॐ राजीवलोचनायै नमः
८६१ ॐ राकेश्यै नमः
८६२ ॐ रूपसम्पन्नायै नमः
८६३ ॐ रत्नसिंहासनस्थितायै०
८६४ ॐ रक्तमाल्याम्बरधरायै०
८६५ ॐ रक्तगन्धानुलेपनायैनमः
८६६ ॐ राजहंससमारूढायै नमः
८६७ ॐ रम्भायै नमः
८६८ ॐ रक्तवलिप्रियायै नमः
८६९ ॐ रमणीययुगाधारायै नमः
८७० ॐ राजिताखिलभूतलायै०
८७१ ॐ रुरुचर्मपरीधानायै नमः
८७२ ॐ रथिन्यै नमः
८७३ ॐ रत्नमालिकायै नमः
८७४ ॐ रोगेश्यै नमः
८७५ ॐ रोगशमन्यै नमः
८७६ ॐ राविण्यै नमः
८७७ ॐ रोमहर्षिण्यै नमः
८७८ ॐ रामचन्द्रपदाक्रान्तायै नमः
८७९ ॐ रावणच्छेदकारिण्यैनमः
८८० ॐरत्नवस्त्रपरिच्छन्नायैनमः
८८१ ॐ रथस्थायै नमः
८८२ ॐ रुक्मभूषणायै नमः
८८३ ॐ लज्जाधिदेवतायै नमः
८८४ ॐ लोलायै नमः
८८५ ॐ ललितायै नमः
८८६ ॐ लिङ्गधारिण्यै नमः
८८७ ॐ लक्ष्म्यै नमः
८८८ ॐ लोलायै नमः
८८९ ॐ लुप्तविषायै नमः
८९० ॐ लोकिन्यै नमः
८९१ ॐ लोकविश्रुतायै नमः
८९२ ॐ लज्जायै नमः
८९३ ॐ लम्बोदरीदेव्यै नमः
८९४ ॐ ललनायै नमः
८९५ ॐ लोकधारिण्यै नमः
८९६ ॐ वरदायै नमः
८९७ ॐ वन्दितायै नमः

८९८ ॐ विद्यायै नमः
८९९ ॐ वैष्णव्यै नमः
९०० ॐ विमलाकृत्यै नमः
९०१ ॐ वाराह्यै नमः
९०२ ॐ विरजायै नमः
९०३ ॐ वर्षायै नमः
९०४ ॐ वरलक्ष्म्यै नमः
९०५ ॐ विलासिन्यै नमः
९०६ ॐ विनतायै नमः
९०७ ॐ व्योममध्यस्थायै नमः
९०८ ॐवारिजासनसंस्थितायै०
९०९ ॐ वारुण्यै नमः
९१० ॐ वेणुसंभूतायै नमः
९११ ॐ वीतिहोत्रायै नमः
९१२ ॐ विरूपिण्यै नमः
९१३ ॐवायुमण्डलमध्यस्थायै०
९१४ ॐ विष्णुरूपायै नमः
९१५ ॐ विधिप्रियायै नमः
९१६ ॐ विष्णुपत्न्यै नमः
९१७ ॐ विष्णुमत्यै नमः
९१८ ॐ विशालाक्ष्यै नमः
९१९ ॐ वसुन्धरायै नमः

९२० ॐ वामदेवप्रियायै नमः
९२१ ॐ वेलायै नमः
९२२ ॐ वज्रिण्यै नमः
९२३ ॐ वसुदाहन्यै नमः
९२४ ॐ वेदाक्षरपरीताङ्ग्यै नमः
९२५ ॐ वाजपेयफलदायै नमः
९२६ ॐ वासव्यै नमः
९२७ ॐ वामजनन्यै नमः
९२८ ॐ वैकुण्ठनिलयायै नमः
९२९ ॐ वरायै नमः
९३० ॐ व्यासप्रियायै नमः
९३१ ॐ वर्मधरायै नमः
९३२ ॐ वाल्मीकिपरिसेवितायै नमः
९३३ ॐ शाकम्भर्यै नमः
९३४ ॐ शिवायै नमः
९३५ ॐ शान्तायै नमः
९३६ ॐ शारदायै नमः
९३७ ॐ शरणागतये नमः
९३८ ॐ शातोदर्यै नमः
९३९ ॐ शुभाचारायै नमः
९४० ॐ शुम्भासुरविमर्दिन्यैनमः

९४१ ॐ शोभावत्यै नमः
९४२ ॐ शिवाकारायै नमः
९४३ ॐ शङ्करार्धशरीरिण्यैनमः
९४४ ॐ शोणायै नमः
९४५ ॐ शुभाशयायै नमः
९४६ ॐ शुभ्रायै नमः
९४७ॐशिरःसंधानकारिण्यैनमः
९४८ ॐ शरावत्यै नमः
९४९ ॐ शरानन्दायै नमः
९५० ॐशरज्ज्योत्स्नायै नमः
९५१ ॐ शुभाननायै नमः
९५२ ॐ शरभायै नमः
९५३ ॐ शूलिन्यै नमः
९५४ ॐ शुद्धायै नमः
९५५ ॐ शबर्यै नमः
९५६ ॐ शुकवाहनायै नमः
९५७ ॐ श्रीमत्यै नमः
९५८ ॐ श्रीधरानन्दायै नमः
९५९ ॐ श्रवणानन्ददायिन्यैनमः
९६० ॐ शर्वाण्यै नमः
९६१ ॐ शर्वरीवन्द्यायै नमः
९६२ ॐ षड्भाषायै नमः
९६३ ॐ षड्तुप्रियायै नमः
९६४ॐषडाधारस्थितादेव्यैनमः
९६५ॐषण्मुखप्रियकारिण्यै नमः
९६६ ॐ षडङ्गरूपसुमतिसुरा-
ऽसुरनमस्कृतायै नमः
९६७ ॐ सरस्वत्यै नमः
९६८ ॐ सदाधारायै नमः
९६९ ॐ सर्वमङ्गलकारिण्यैनमः
९७० ॐ सामगानप्रियायैनमः
९७१ ॐ सूक्ष्मायै नमः
९७२ ॐ सावित्र्यै नमः
९७३ ॐ सामसम्भवायै नमः
९७४ ॐ सर्वावासायै नमः
९७५ ॐ सदानन्दायै नमः
९७६ ॐ सुस्तन्यै नमः
९७७ ॐ सागराम्बरायै नमः
९७८ ॐ सर्वैश्वर्यप्रियायै नमः
९७९ ॐ सिद्ध्यै नमः
९८० ॐसाधुबन्धुपराक्रमायैनमः
९८१ ॐ सप्तर्षिमण्डलगतायै०
९८२ ॐसोममंडलवासिन्यैनमः
९८३ ॐ सर्वज्ञायै नमः

९८४ ॐ मान्द्रकरुणायै नमः
९८५ ॐ समानाधिकवर्जितायै०
९८६ ॐ सर्वोत्तुङ्गायै नमः
९८७ ॐ सङ्गहीनायै नमः
९८८ ॐ सद्गुणायै नमः
९८९ ॐ सकलेष्टदायै नमः
९९० ॐ सरघायै नमः
९९१ ॐ सूर्यतनयायै नमः
९९२ ॐ सुकेश्यै नमः
९९३ ॐ सोमसंहत्यै नमः
९९४ ॐ हिरण्यवर्णायै नमः
९९५ ॐ हरिण्यै नमः
९९६ ॐ ह्रींकार्यै नमः
९९७ ॐ हंसवाहिन्यै नमः
९९८ ॐ क्षौमवस्त्रपरीताङ्ग्यै नमः
९९९ ॐ क्षीराब्धितनयायै नमः
१००० ॐ क्षमायै नमः
१००१ ॐ गायत्र्यै नमः
१००२ ॐ सावित्र्यै नमः
१००३ ॐ पार्वत्यै नमः
१००४ ॐ सरस्वत्यै नमः
१००५ ॐ वेदगर्भायै नमः
१००६ ॐ वरारोहायै नमः
१००७ ॐ श्रीगायत्र्यै नमः
१००८ ॐ पराम्बिकायै नमः

इति साहस्रकं नाम्ना गायत्र्याश्चैव नारद ! ।
पुण्यदं सर्वपापघ्नं महासम्पत्तिदायकम् ॥
एवं नामानि गायत्र्यास्तोषोत्पत्तिकराणि हि ।
अष्टम्यां च विशेषेण पठितव्यं द्विजैः सह ॥

हे नारद ! गायत्री के एक हजार आठ नाम महान् पुण्यदायक, सर्व-पापविनाशक और विपुल सम्पत्ति को देने वाले हैं। गायत्री को सन्तुष्ट करने वाले हैं। अर्थात् इनसे भगवती गायत्री प्रसन्न होती हैं। इसका पाठ विशेष रूप से ब्राह्मणों के साथ अष्टमी तिथि को करना

जपं कृत्वा होमपूजा ध्यानं कृत्वा विशेषतः ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं गायत्र्यास्तु विशेषतः ॥
सुभक्ताय सुशिष्याय वक्तव्यं भूसुराय च ।
भ्रष्टेभ्यः साधकेभ्यश्च बान्धवेभ्यो न दर्शयेत् ॥
यद्गृहे लिखितं शास्त्रं भयं तस्य न कस्यचित् ।
चञ्चलाऽपि स्थिरा भूत्वा कमला तत्र तिष्ठति ॥
इदं रहस्यं परमं गुह्याद् गुह्यतरं महत् ।
पुण्यप्रदं मनुष्याणां दरिद्राणां निधिप्रदम् ।
मोक्षप्रदं मुमुक्षूणां कामिनां सर्वकामदम् ॥
रोगाद् वै मुच्यते रोगी बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
ब्रह्महत्या-सुरापानं सुवर्णस्तेयिनो नराः ॥

चाहिए । और भली-भाँति जप, होम, पूजन और ध्यान करके भगवती की उपासना करनी चाहिए । इस गायत्री के मन्त्र का उपदेश सभी लोगों को न देना चाहिए । श्रेष्ठ भक्तों, उत्तम शिष्यों और ब्राह्मणों को ही इसका अधिकारी समझकर उपदेश देना चाहिए । जो लोग जातिच्युत हैं अथवा उत्तम साधक नहीं हैं उन लोगों को उपदेश नहीं करना चाहिए । जिसके घर में इस गायत्री-सम्बन्धी शास्त्र का लिखित ग्रन्थ होता है उसके यहाँ कुछ भी भय की सम्भावना नहीं रहती और उस घर में चंचला लक्ष्मी का स्थिर निवास होता है । इसका रहस्य गूढ़से भी गूढ़ है । यह मनुष्यों के लिए पुण्यदायक और निर्धनों के लिए निधि प्रदान करने वाला है । मोक्ष चाहने वालों के लिए मुक्तिदायक और कामाभिलाषियों के लिए सब कामों को देने वाला है । इससे रोगी मनुष्य रोगरहित और बन्धन आदि में पड़ा हुआ कैदी बन्धनमुक्त हो जाता है । इसके द्वारा ब्रह्महत्या, मदिरापान,

गुरुतल्पगतो वाऽपि पातकाद् मुच्यते सकृत् ।
असत्प्रतिग्रहाच्चैवाऽभक्ष्य-भक्षाद् विशेषतः ।।
पाखण्डानृतमुख्येभ्यः पठनादेव मुच्यते ।
इदं रहस्यममलं मयोक्तं पद्मजोद्भव ! ।
ब्रह्मसायुज्यदं नृणां सत्यं सत्यं न संशयः ।।

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-गायत्री-रहस्ये
देवीभागवतपुराणस्य द्वादशस्कन्धोक्तं
गायत्रीसहस्रनामस्तोत्रं समाप्तम् ।

सोने की चोरी और गुरु-पत्नी के साथ गमन करने के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं । जो अग्राह्य भोजन (लहसुन, प्याज या मांसादि) ग्रहण करते, पाखण्ड या ढोंग रचते और सत्यासत्य भाषण करते हैं, वे लोग इस गायत्री-सहस्र नाम पाठ से उपर्युक्त दोषों से रहित हो जाते हैं । इस रहस्य का ब्रह्माजी ने कथन किया है । जो इसका पाठ करते हैं वे निश्चय ही ब्रह्म-सायुज्य पद को प्राप्त होते हैं, यह बात सत्य है, सत्य है, इसमें कोई सशय नहीं है ।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्त मिश्र शास्त्रोक्त 'शिवदती' हिन्दी टीका-सहित गायत्री-रहस्य में देवीभागवत-महापुराण के बारहवें स्कन्ध में कहा गया गायत्री-सहस्रनाम स्तोत्र समाप्त ।

गायत्र्युपनिषद्

नमस्कृत्य भगवान् याज्ञवल्क्यः स्वयं परिपृच्छति त्वं ब्रूहि भगवन् ! गायत्र्या उत्पत्ति श्रोतुमिच्छामि ? ।

ब्रह्मोवाच--प्रणवेन व्याहृतयः प्रवर्तन्ते, तमसस्तु परं ज्योतिष्कः पुरुषः स्वयम् । भूर्विष्णुरिति ह ताः स्वाङ्गुल्या मथेत् । मध्यमात् फेनो भवति, फेनाद् बुद्बुदो भवति, बुद्बुदादण्डं भवति, अण्डवानात्मा भवति, आत्मन आकाशो भवति, आकाशाद् वायुर्भवति, वायोरग्निर्भवति, अग्नेरोङ्कारो भवति, ॐकाराद् व्याहृतिर्भवति, व्याहृत्या गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्र्याः सरस्वती भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो ब्रह्मा भवति, ब्रह्मणो लोका भवन्ति, तस्माल्लोकाः प्रवर्तन्ते, चत्वारो वेदाः साङ्गाः सोपनिषदः सेतिहासास्ते सर्वे गायत्र्याः प्रवर्तन्ते ।

यथा-अग्निर्देवानां ब्राह्मणो मनुष्याणां मेरुः शिखरिणां गङ्गा नदीनां वसन्त ऋतूनां ब्रह्मा प्रजापतीनामेवाऽसौ मुख्यः गायत्र्या गायत्रीच्छन्दो भवति ।

किं भूः किं भुवः किं स्वः किं महः किं जनः किं तपः किं सत्यं किं तत् किं सवितुः किं वरेण्यं किं भर्गः किं देवस्य किं धीमहि किं धियः किं यः किं नः किं प्रचोदयात् ?

भूरिति भूर्लोकः, भुव इत्यन्तरिक्षलोकः, स्वरिति स्वर्लोकः, मह इति महर्लोकः, जन इति जनो लोकः, तप इति तपो लोकः,

सत्यमिति सत्यलोकः । भूर्भुवः स्वरोमिति त्रैलोक्यम् । तदसौ तेजो यत्तेजसोऽग्निर्देवता सवितुरित्यादित्यस्य वरेण्यमित्यन्नम् । अन्नमेव प्रजापतिः । भर्ग इत्यापः । आपो वै भर्गः । एतावत् सर्वा देवताः । देवस्येन्द्रो वै देवयीद्देवं तदिन्द्रस्तस्मात् सर्वकृत् पुरुषो नाम विष्णुः । धीमहि किमध्यात्मं तत्परमं पदमित्यध्यात्मं यो न इति पृथिवी वै यो नः प्रचोदयात् काम इमाँल्लोकान् प्रच्यावयन् यो नृशंस्योऽस्तोऽध्वस्तत्परमो धमः । इत्येषा गायत्री किं गोत्रा, कत्यक्षरा, कति पदा, कति कुक्षिः, कति शीर्षाणि ? सांख्यायनसगोत्रा गायत्री, चतुर्विंशत्यक्षरा त्रिपदा षट् कुक्षिः सावित्री केशास्रयः पादा भवन्ति । काऽस्याः कुक्षिः, कानि पञ्च शीर्षाणि । ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति, यजुर्वेदो द्वितीयः, सामवेदस्तृतीयः, पूर्वा दिक्प्रथमा कुक्षिर्भवति, दक्षिणा द्वितीया, पश्चिमा तृतीया, उदीची चतुर्थी, ऊर्ध्वा पञ्चमी, अधरा षष्ठी कुक्षिः । व्याकरणमस्याः प्रथमं शीर्षं भवति, शिक्षा द्वितीयं कल्पस्तृतीयं निरुक्तं चतुर्थं ज्योतिषामयनं पञ्चमम् । किं लक्षणं किमु चेष्टितं किमुदाहृतं किमक्षरं दैवत्यम् । लक्षणं मीमांसा अथर्ववेदो विचेष्टितम्, छन्दो विधिरित्युदाहृतम् । को वर्णः ? कः स्वरः ? श्वेतो वर्णः, षट् स्वराणि । इमान्यक्षराणि दैवतानि भवन्ति । पूर्वा भवति गायत्री मध्यमा, सावित्री पश्चिमा, सन्ध्या सरस्वती ।

प्रातःसन्ध्या रक्ता रक्तपद्मासनस्था रक्ताम्बरधरा रक्तवर्णा

रक्तगन्धानुलेपना चतुर्मुखा अष्टभुजा द्विनेत्रा दण्डाऽक्षमाला-कमण्डलु-स्रुकस्रुवधारिणी सर्वाभरणभूषिता गायत्री कौमारी ब्राह्मी हंसवाहिनी ऋग्वेदसंहिता ब्रह्मदैवत्या त्रिपदा गायत्री षट्कुक्षिः पञ्चशीर्षा अग्निमुखा रुद्र-शिव-विष्णुहृदया ब्रह्मकवचा सांख्यायनसगोत्रा भूर्लोकव्यापिनी अग्निस्तत्त्वम्, उदात्ता-ऽनुदात्त-स्वरितस्वर-मकारः, आत्मज्ञाने विनियोगः। इत्येषा गायत्री।

मध्याह्नसन्ध्याश्वेता श्वेतपद्मासनस्था श्वेताम्बरधरा श्वेत-गन्धानुलेपना पञ्चमुखी दशभुजा त्रिनेत्रा शूलाऽक्षमाला-कमण्डलु-कपालधारिणी सर्वाभरणभूषिता सावित्री युवती माहेश्वरी वृषभवाहिनी यजुर्वेदसंहिता रुद्रदैवत्या त्रिपदा सावित्री षट्कुक्षिः पञ्चशीर्षा अग्निमुखा रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा भारद्वाजसगोत्रा भुवर्लोकव्यापिनी वायुस्तत्त्वम्, उदात्ता-ऽनुदात्त-स्वरितस्वरमकारः श्वेतवर्णा आत्मज्ञाने विनियोगः। इत्येषा सावित्री।

सायंसन्ध्या कृष्णा कृष्णपद्मासनस्था कृष्णाम्बरधरा कृष्णवर्णा कृष्णगन्धानुलेपना कृष्णमाल्याम्बरधरा एकमुखी चतुर्भुजा द्विनेत्रा शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारिणी सर्वाभरणभूषिता सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडवाहिनी सामवेदसंहिता विष्णु-दैवत्या त्रिपदा षट्कुक्षिः पञ्चशीर्षा अग्निमुखा विष्णुहृदया ब्रह्म-रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा काश्यपसगोत्रा स्वर्लोकव्यापिनी सूर्य-स्तत्त्वम् उदात्ता-ऽनुदात्त-स्वरितमकारः कृष्णवर्णो मोक्षज्ञाने :विनियोगः। इत्येषा सरस्वती।

रक्ता गायत्री श्वेता सावित्री कृष्णवर्णा सरस्वती ।
प्रणवो नित्ययुक्तश्च व्याहृतीषु च सप्तसु ॥
सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते ।
दशशतं समभ्यर्च्य गायत्री पावनी महत् ॥
प्रह्लादोऽत्रि-र्वशिष्ठश्च शकः कण्वः पराशरः ।
विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौनको महान् ॥
याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधिः ।
गौतमो मुद्‍गलः श्रेष्ठो वेदव्यासश्च लोमशः ॥
अगस्त्यः कौशिको वत्सः पुलस्त्यो माण्डुकस्तथा ।
दुर्वासास्तपसा श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा ॥
उक्तान्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठानासु पूर्विका ।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरेव च ॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथाऽतिजगती मता ।
शक्वरी सातिपूर्वा स्यादष्टयष्टी तथैव च ॥
धृतिश्चाऽतिधृतिश्चैव प्रकृतिः कृतिराकृतिः ।
विकृतिः संकृतिश्चैव तथातिकृतिरुत्कृतिः ॥
इत्येताश्छन्दसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि साम्प्रतम् ।

भूरिति छन्दो भुव इति छन्दः स्वरिति छन्दो भूर्भुवः स्वरोमिति देवी गायत्री इत्येतानि छन्दांसि प्रथममाग्नेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं सौम्यं चतुर्थमैशानं पञ्चममादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदेवत्यमष्टमं भगदेवत्यं नवममार्यमं दशमं सावित्रमेकादशं त्वाष्ट्रं द्वादशं पौष्णं त्रयोदशमैन्द्राग्न्यं चतुर्दशं

वायव्यं पञ्चदशं वामदैवत्यं षोडशं मैत्रावरुणं सप्तदशमाङ्गिरस-मष्टादशं वैश्वदेव्यमेकोनविंशं वैष्णवं विंशं वासवमेकाविंशं रौद्रं द्वाविंशमाश्विनं त्रयोविंशं ब्राह्मं विंशं सावित्रम् ।

दीर्घान् स्वरेण संयुक्तान् बिन्दु-नाद-समन्वितान् ।
व्यापकान् विन्यसेत् पश्चाद् दशपंक्त्यक्षराणि च ॥
द्रत्वपुंस इति प्रत्यक्षबीजानि ।
प्रह्लादिनी प्रभा सत्या विश्वा भद्रा विलासिनी ।
प्रभावती जया कान्ता शान्ता पद्मा सरस्वती ॥
विद्रुमस्फटिकाकारं पद्मरागसमप्रभम् ।
इन्द्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकं कुङ्कुमप्रभम् ॥
अञ्जनाभं च गाङ्गेयं वैडूर्यं चन्द्रसन्निभम् ।
हारिद्रं कृष्णदुग्धाभं रविकान्तिसमं भवम् ॥
शुकपिच्छसमाकारं क्रमेण परिकल्पयेत् ।
पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च ॥
गन्धो रसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च ।
घ्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक् श्रोत्रं च तथापरम् ॥
उपस्थपायुपादादि पाणिर्वागपि च क्रमात् ।
मनो बुद्धिरहङ्कारमव्यक्तं च यथाक्रमम् ॥
सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा ।
एकमुखं च द्विमुखं त्रिमुखं च चतुर्मुखम् ॥
पञ्चमुखं षण्मुखं चाऽधोमुखं चैव व्यापकम् ।
अञ्जलीकं ततः प्रोक्तं मुद्रितं तु त्रयोदशम् ॥

शकटं यमपाशं च ग्रथितं सम्मुखोन्मुखम् ।
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् ॥
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा ।
एता मुद्राश्चतुर्विंशद् गायत्र्याः सुप्रतिष्ठिताः ॥

ॐ मूर्ध्नि सञ्जाते ब्रह्मा विष्णुर्ललाटे रुद्रो भ्रूमध्ये चक्षुश्चन्द्रादित्यौ कर्णयोः शुक्र - बृहस्पती नासिके वायुर्दैवत्यं प्रभातं दोषा उभे सन्ध्ये मुखमग्निर्जिह्वा सरस्वती ग्रीवा स्वाध्यायाः स्तनयोर्वसवो बाह्वोर्मरुतः हृदयं पर्जन्यमाकाशमपरं नाभिरन्तरिक्षं कटिरिन्द्रियाणि जघनं प्राजापत्यं कैलासमलयौ ऊरू विश्वेदेवा जानुभ्यां जान्वोः कुशिकौ जङ्घयोरयनद्वयं सुराः पितरः पादौ पृथिवी वनस्पतिर्गुल्फौ रोमाणि मुहूर्तास्ते विग्रहाः केतुमासा ऋतवः सन्ध्याकालत्रयमाच्छादनं संवत्सरो निमिषः अहोरात्रावादित्यचन्द्रमसौ सहस्ररश्मीं देवीं शतमध्यां दशापराम् । सहस्रनेत्रीं देवीं गायत्रीं शरणमहं प्रपद्ये । तत्सवितुर्वरदाय नमः, तत्प्रातरादित्याय नमः ।

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । तत्सायंप्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति । य इदं गायत्रीहृदयं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत् । चत्वारो वेदा अधीता भवन्ति । सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति । सर्वै-र्देवैर्ज्ञातो भवति । सर्वप्रत्यूहात् पूतो भवति । अपेयपानात् पूतो भवति । अभक्ष्यभक्षणात् पूतो भवति । अलेह्यलेहनात् पूतो भवति । अचोष्यचोषणात् पूतो भवति । सुरापानात् पूतो

भवति । सुवर्णस्तेयात् पूतो भवति । पंक्तिभेदनात् पूतो भवति । पतितसम्भाषणात् पूतो भवति । अनृतवचनात् पूतो भवति । गुरुतल्पगमनात् पूतो भवति । अगम्यगमनात् पूतो भवति । वृषलीगमनात् पूतो भवति । ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति । भ्रूणहत्यायाः पूतो भवति । वीरहत्यायाः पूतो भवति । अब्रह्मचारी सुब्रह्मचारी भवति । हृदयेनाऽधीतेन अनेन क्रतुशतेनेष्टं भवति । षष्टिसहस्रं गायत्रीजप्यानि भवन्ति । अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयेदर्थसिद्धिर्भवति ।

य इदं गायत्रीहृदयं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत् ।
स सर्वपापैः प्रमुच्यते ब्रह्मलोके महीयते ॥

इति गायत्री-रहस्ये गायत्र्युपनिषद् समाप्ता ।

●

गायत्रीतत्त्वम्

ॐ श्रीगायत्रीतत्त्वमालामन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, परमात्मा देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकम्, मम समस्तपापक्षयार्थे गायत्रीतत्त्व-पाठे विनियोगः ।

चतुर्विंशतितत्त्वानां यदेकं तत्त्वमुत्तमम् ।
अनुपाधि परं ब्रह्म तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ १ ॥

या वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ।
तस्य प्रकृतिलीनस्य तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ २ ॥
तत्सदादिपदैर्वाच्यं परमं पदमव्ययम् ।
अभेदत्वं परार्थस्य तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ ३ ॥
यस्य मायांशभागेन जगदुत्पद्यतेऽखिलम् ।
तस्य सर्वोत्तमं रूपमरूपस्याभिधीमहि ॥ ४ ॥
यं न पश्यन्ति परमं पश्यन्तोऽपि दिवौकसः ।
तं भूतानिलदेवं तु सुपर्णमुपधावताम् ॥ ५ ॥
यदंशः प्रेरितो जन्तुः कर्मपाशनियन्त्रितः ।
आजन्मकृतपापानामपहन्तुं दिवौकसः ॥ ६ ॥
इदं महामुनिप्रोक्तं गायत्रीतत्त्वमुत्तमम् ।
यः पठेत् परया भक्त्या स याति परमां गतिम् ॥ ७ ॥
सर्ववेदपुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु यत्फलम् ।
सकृदस्य जपादेव तत्फलं प्राप्नुयान्नरः ॥ ८ ॥

अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति । अगम्यगमनात् पूतो भवति । सर्वपापेभ्यः पूतो भवति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । मध्यन्दिनमुपयुञ्जानोऽसत्प्रतिग्रहादिना मुक्तो भवति । अनुप्लवं पुरुषाः पुरुषमभिवन्दन्ति । यं यं काममभिध्यायति तं तमेवाप्नोति, पुत्र-पौत्रान् कीर्तिसौभाग्यांश्चोपलभते । सर्वभूतात्ममित्रो देहान्ते तद्विशिष्टो गायत्रीपरमं पदमवाप्नोति ।

इति गायत्री-रहस्ये वेदसारोक्तं गायत्रीतत्त्वं सम्पूर्णम् ।

●

गायत्री-हृदयम्

ॐ अस्य श्रीगायत्रीहृदयस्य नारायण-ऋषिः, गायत्री-छन्दः, परमेश्वरी गायत्री देवता, गायत्रीहृदयजपे विनियोगः।

द्यौर्मूर्ध्नि दैवतम्। दन्तपङ्क्तावश्विनौ। उभे सन्ध्ये चोष्ठौ। मुखमग्निः। जिह्वा सरस्वती। ग्रीवायां तु बृहस्पतिः। स्तनयोर्वसवोऽष्टौ। बाह्वोर्मरुतः। हृदये पर्जन्यः। आकाशमुदरम्। नाभावन्तरिक्षम्। कटयोरिन्द्राग्नी। जघने विज्ञानघनः प्रजापतिः। कैलाशमलये उरः। विश्वेदेवा जान्वोः। जङ्घायां कौशिकः। गुह्यमयने। ऊरू पितरः। पादौ पृथ्वी। वनस्पतयोऽङ्गुलिषु। ऋषयो रोमाणि। नखानि मुहूर्त्तानि। अस्थिषु ग्रहाः। असृङ् मांसम् ऋतवः। संवत्सरा वै निमिषम्। अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमाः। प्रवरां दिव्यां गायत्रीं सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः। ॐ तत्पूर्वा जयाय नमः। तत्प्रातरादित्याय नमः। तत्प्रातरादित्यप्रतिष्ठायै नमः।

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। सायं-प्रातरधीयानोऽपापो भवति। सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति। सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति। अवाच्य-वचनात् पूतो भवति। अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति। अभोज्य - भोजनात् पूतो भवति। अचोष्य - चोषणात् पूतो भवति। असाध्य-साधनात् पूतो भवति। दुष्प्रतिग्रह-शतसहस्रात्

पूतो भवति। सर्वप्रतिग्रहात् पूतो भवति। पंक्तिदूषणात् पूतो भवति। अनृतवचनात् पूतो भवति। अथाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति। अनेन हृदयेनाऽधीतेन क्रतुसहस्रेणेष्टं भवति। षष्टिशत-सहस्रगायत्र्या जप्यानि फलानि भवन्ति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयेत्। तस्य सिद्धिर्भवति।

य इदं नित्यमधीयानो ब्राह्मणः प्रातः शुचिः सर्वपापैः प्रमुच्यते, इति। ब्रह्मलोके महीयते। इत्याह भगवान् श्रीनारायणः।

इति गायत्री-रहस्ये श्रीमद्देवीभागवते महापुराणेऽथर्ववेदोक्तं गायत्रीहृदयं समाप्तम्।

•

गायत्रीस्तोत्रम्

श्रीनारद उवाच

भक्तानुकम्पिन्! सर्वज्ञ! हृदयं पापनाशनम्।
गायत्र्याः कथितं तस्माद् गायत्र्याः स्तोत्रमीरय ॥ १ ॥

श्रीनारायण उवाच

आदिशक्ते! जगन्मातर्भक्तानुग्रहकारिणि!।
सर्वत्र व्यापिकेऽनन्ते श्रीसन्ध्ये ते नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥
त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च सरस्वती।
ब्राह्मणी वैष्णवी रौद्री रक्तश्वेता सितेतरा ॥ ३ ॥
प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था भवेत् पुनः।
वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सह ॥ ४ ॥

हंसस्था गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी ।
ऋग्वेदाऽध्यायिनी भूमौ दृश्यते या तपस्विभिः ॥ ५ ॥
यजुर्वेदं पठन्ती च अन्तरिक्षे विराजते ।
या सामगाऽपि सर्वेषु भ्राम्यमाणा तथा भुवि ॥ ६ ॥
रुद्रलोकं गता त्वं हि विष्णुलोकनिवासिनी ।
त्वमेव ब्रह्मणो लोकेऽमर्त्यानुग्रहकारिणी ॥ ७ ॥
सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बहुवरप्रदा ।
शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्रुस्वेदसमुद्भवा ॥ ८ ॥
आनन्दजननी दुर्गा दशधा परिपठ्यते ।
वरेण्या वरदा चैव वारिष्ठा वरवर्णिनी ॥ ९ ॥
गरिष्ठा च वराही च वरारोहा च सप्तमी ।
नीलगङ्गा तथा सन्ध्या सर्वदा भोग-मोक्षदा ॥१०॥
भागीरथी मर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि ।
त्रैलोक्यवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी ॥११॥
भूर्लोकस्था त्वमेवाऽसि धरित्री लोकधारिणी ।
भुवर्लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः ॥१२॥
महर्लोके महासिद्धिर्जनलोकेऽजनेत्यपि ।
तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥१३॥
कमला विष्णुलोके च गायत्री ब्रह्मलोकगा ।
रुद्रलोके स्थिता गौरी हराऽर्धाङ्गनिवासिनी ॥१४॥
अहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि गीयसे ।
साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी ॥१५॥

ततः परा पराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे ।
इच्छाशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशक्तिदा ॥१६॥
गङ्गा च यमुना चैव विपाशा च सरस्वती ।
सरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा ॥१७॥
गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा ।
कौशिकी चन्द्रमा चैव वितस्ता च सरस्वती ॥१८॥
गण्डकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि ।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च तृतीयका ॥१९॥
गान्धारी हस्तजिह्वा च पूषाऽपूषा तथैव च ।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शङ्खिनी प्राणवाहिनी ॥२०॥
नाडी च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बुधैः ।
हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्ननायिका ॥२१॥
तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दुमालिनी ।
मूले तु कुण्डलीशक्तिर्व्यापिनी केशमूलगा ॥२२॥
शिखामध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी ।
किमन्यद् बहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जगतीत्रये ॥२३॥
तत्सर्वं त्वं महादेवि ! श्रिये सन्ध्ये ! नमोऽस्तु ते ।
इतीदं कीर्तिदं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ॥२४॥
महापापप्रशमनं महासिद्धिविधायकम् ।
य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं सन्ध्याकाले समाहितः ॥२५॥
अपुत्रः प्राप्नुयात् पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् ।
सर्वतीर्थ-तपो-दान-यज्ञ-योगफलं लभेत् ॥२६॥

भोगान् भुक्त्वा चिरं कालमन्ते मोक्षमवाप्नुयात् ।
तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले तु यः पठेत् ॥२७॥
यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्यामज्जनजं फलम् ।
लभते नाऽत्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारद ! ॥२८॥
शृणुयाद्योऽपि तद्भक्त्या स तु पापात् प्रमुच्यते ।
पीयूषसदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं नारदेरितम् ॥२९॥
इति गायत्री-रहस्ये भगवतोक्तं गायत्रीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

•

गायत्रीस्तवराजः

ॐ अस्य श्रीगायत्रीस्तवराजस्तोत्रमन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, सकलजननी चतुष्पदा गायत्री, परमात्मा देवता, सर्वोत्कृष्टं परं धाम प्रथमपादो बीजम्, द्वितीयः शक्तिः, तृतीयः कीलकम्, दशप्रणवसंयुक्ता सव्याहृतिका तुर्यपादसहिता व्यापकम्, मम धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्षार्थे जपे विनियोगः ।
न्यासं कृत्वा ध्यायेत् ।

ध्यानम्

गायत्रीं वेदधात्रीं शतमखफलदां वेदशास्त्रैकवेद्यां
चिच्छक्तिं ब्रह्मविद्यां परमशिवपदां श्रीपदं वै करोति ।
सर्वोत्कृष्टं पदं तत्सवितुरनुपदान्ते वरेण्यं शरण्यं
भर्गो देवस्य धीमह्यभिदधति धियो यो नः प्रचोदयादित्यौर्वतेजः ॥१॥
साम्राज्यबीजं प्रणवत्रिपादं सव्याऽपसव्यं प्रजपेत् सहस्रकम् ।
सम्पूर्णकामं प्रणवं विभूतिं तथा भवेद् वाक्यविचित्रवाणी ॥२॥

शुभं शिवं शोभनमस्तु मह्यं सौभाग्यभोगोत्सवमस्तु नित्यम् ।
प्रकाशविद्यात्रयशास्त्रसर्वं भजेन्महामन्त्रफलं प्रिये ! वै ।। ३ ।।
ब्रह्मास्त्रं ब्रह्मदण्डं शिरसि शिखिमहद् ब्रह्मशीर्षं नमोऽन्तं
सूक्तं पारायणोक्तं प्रणवमथ महावाक्यसिद्धान्तमूलम् ।
तूर्यं त्रीणि द्वितीयं प्रथममनुमहावेदवेदान्तसूक्तं
नित्यं स्मृत्यानुसारं नियमितचरितं मूलमन्त्रं नमोऽन्तम् ।। ४ ।।
अस्त्रं शास्त्रहतं त्वघोरसहितं दण्डेन वाजीहतम्
आदित्यादिहतं शिरोऽन्तसहितं पापक्षयार्थं परम् ।
तुर्यान्त्यादि-विलोम-मन्त्रपठनं बीजं शिखान्तोर्ध्वकं
नित्यं कालनियम्य विप्रविदुषां किं दुष्कृतं भूसुराद् ।। ५ ।।
नित्यं मुक्तिप्रदं नियम्य पवनं निर्घोषशक्तित्रयं
सम्यग्ज्ञान-गुरूपदेशविधिवद् देवीं शिखान्तामपि ।
षष्ट्यैकोत्तरसंख्यया - ऽनुमत - सौषुम्णादिमार्गत्रयीं
ध्यायेन्नित्य-समस्त-वेदजननीं देवीं त्रिसन्ध्यामयीम् ।। ६ ।।
गायत्रीं सकलागमार्थविदुषां सौरस्य बीजेश्वरी
सर्वाम्नाय - समस्तमन्त्र-जननीं सर्वज्ञधामेश्वरीम् ।
ब्रह्मादित्रयसम्पुटार्थकरणीं संसारपारायणीं
सन्ध्यां सर्वसमानतन्त्रपरया ब्रह्मानुसन्धायिनीम् ।। ७ ।।
एक - द्वि-त्रि - चतुःसमानगणना-वर्णाष्टकं पादयोः
पापादौ प्रणवादिमन्त्रपठने मन्त्रत्रयीसम्पुटाम् ।
सन्ध्यायां द्विपदं पठेत् परतरं सायं तुरीयं युतं
नित्याऽनित्यमनन्तकोटिफलदं प्राप्तं नमस्कुर्महे ।। ८ ।।

ओजोऽसीति सहोऽस्यहो बलमसि भ्राजोऽसि तेजस्विनी
वर्चस्वी सवितारिनसोमममृतं रूपं परं धीमहि ।
देवानां द्विजवर्यतां मुनिगणे मुक्त्यर्थिनां शान्तिना-
मोमित्येकमृचं पठन्ति यमिनो यं यं स्मरेत् प्राप्नुयात् ॥ ९ ॥
ओमित्येकमजस्वरूपममलं तत्सप्तधा भाजितं
तारं तन्त्रसमन्वितं परतरे पादत्रयं गर्भितम् ।
आपोज्योतिरसोऽमृतं जनमहः सत्यं तपः स्वर्भुव-
र्भूयोभूय नमामि भूर्भुवःस्वरोमेतैर्महामन्त्रकम् ॥१०॥
आदौ बिन्दुमनुस्मरन् परतले बाला त्रिवर्णोच्चरन्
व्याहृत्यादि-सबिन्दुयुक्त-त्रिपदातारत्रयं तुर्यकम् ।
आरोहादवरोहतः क्रमगता श्रीकुण्डलीत्थं स्थिता
देवी मानसपङ्कजे त्रिनयना पञ्चानना पातु माम् ॥११॥
सर्वे ! सर्ववशे ! समस्तसमये ! सत्यात्मिके सात्त्विके !
सावित्री सवितात्मके ! शशियुते ! सांख्यायनीगोत्रजे ! ।
सन्ध्यात्रीण्युपकल्प्य संग्रहविधिः सन्ध्याभिधानात्मके !
गायत्रीप्रणवादिमन्त्रगुरुणा सम्प्राप्य तस्मै नमः ॥१२॥
क्षेमं दिव्यमनोरथः परतरे चेतः समाधीयतां
ज्ञानं नित्यवरेण्यमेतदमलं देवस्य भर्गो धियम् ।
मोक्ष-श्री-विजयार्थिनोऽथ सवितुः श्रेष्ठं विधिस्तत्पदं
प्रज्ञा मेधप्रचोदयात् प्रतिदिनं यो नः पदं पातु माम् ॥१३॥
सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यविरलं विश्वादिमायात्मकं
सर्वाद्यं प्रतिपादपादरमया तारं तथा मन्मथम् ।

तुर्यान्यत् त्रितयं द्वितीयमपरं संयोग-सव्याहृतिं
सर्वाम्नायमनोमयीं मनसिजां ध्यायामि देवीं पराम् ॥१४॥
आदौ गायत्रिमन्त्रं गुरुकृत-नियमं धर्मकर्मानुकूलं
सर्वाद्यं सारभूतं सकलमनुमयं देवतानामगम्यम् ।
देवानां पूर्वदेवं द्विजकुलमुनिभिः सिद्धविद्याधराद्यैः
को वा वक्तुं समर्थस्तवमनुम हेमा-बीजराजादिमूलम् ॥१५॥
गायत्रीं त्रिपदां त्रिबीजसहितां द्विव्याहृतिं त्रैपदां
त्रिब्रह्मात्रिगुणां त्रिकालनियमां वेदत्रयीं तां पराम् ।
सांख्यादित्रयरूपिणीं त्रिनयनां मातृत्रयीं तत्परां
त्रैलोक्य-त्रिदश-त्रिकोटिसहितां सन्ध्यां त्रयीं तां नुमः ॥१६॥
ओमित्येतत् त्रिमात्रा-त्रिभुवनकरणं त्रिस्वरं वह्निरूपं
त्रीणि त्रीणि त्रिपादं त्रिगुणगुणमयं त्रैपुरान्तं त्रिसूक्तम् ।
तत्त्वानां पूर्वशक्ति द्वितयगुरुपदं पीठयन्त्रात्मक तं
तस्मादेतत् त्रिपादं त्रिपदमनुपरं त्राहि मां भो नमस्ते ॥१७॥
स्वस्ति श्रद्धातिमेधा मधुमतिमधुरः संशयः प्रज्ञकान्ति-
र्विद्या बुद्धिबलं श्रीरतनुधनपतिः सौम्यवाक्यानुवृत्तिः ।
मेधा प्रज्ञा प्रतिष्ठा मृदुमतिमधुरा पूर्णविद्याप्रपूर्णं
प्राप्तं प्रत्यूषचिन्त्यं प्रणवपरवशात् प्राणिनां नित्यकर्म ॥१८॥
पश्चाशद्वर्णमध्ये प्रणवपरयुतं मन्त्रमाद्यं नमोऽन्तं
सर्वं सव्याऽपसव्यं शतगुणमभितो वर्णमष्टोत्तरं ते ।
एवं नित्यं प्रजप्तं त्रिभुवनसहितं तूर्यमन्तं त्रिपादं
ज्ञातं विज्ञानगम्यं गगनसुसदृशं ध्यायते यः स मुक्तः ॥१९॥

आ - दिक्षान्त - सबिन्दुयुक्त-महितं मेरुः क्षकारात्मकं
व्यस्ताऽव्यस्त-समस्त-वर्गसहितं वर्णं शताष्टोत्तरम् ।
गायत्रीं जपतां त्रिकालमहितां नित्यं स-नैमित्तिकं
चैवं जाप्यफलं शिवेन कथितं सद्भोग्यमोक्षप्रदम् ॥२०॥
सप्तव्याहृति-सप्ततार-विकृतिः सत्यं वरेण्यं धृतिः
सर्वं तत्सवितुश्च धीमहि महाभर्गस्य देवं भजे ।
धाम्नो धाम धमाधिधारणमहान् धीमत्पदं ध्यायते
ॐ तत्सर्वमनुप्रपूर्णदशकं पादत्रयं केवलम् ॥२१॥
विज्ञाने विलसद्विवेकवचसः प्रज्ञानुसन्धारिणाम्
श्रद्धा-मेध्ययशःशिरः-सुमनसः स्वस्ति श्रियं त्वां सदा ।
आयुष्यं धन्य-धान्य-लक्ष्मिमतुलां देवीं कटाक्षं परं
तत्काले सकलार्थसाधनमहान् मुक्तिर्महत्त्वं पदम् ॥२२॥
पृथ्वीगन्धोऽर्चनायां नभसि कुसुमता वायु-धूपप्रकर्षो
वह्निर्दीपप्रकाशो जलममृतमयं नित्यसङ्कल्पपूजा ।
एतत्सर्वं निवेद्यं सुखयति हृदये सर्वदा दम्पतीनां
त्वं सर्वज्ञ शिवं कुरुष्व ममता नाऽहं त्वया श्रेयसि ॥२३॥
सौम्यं सौभाग्यहेतुं सकलशुभकरं सर्वसौख्यं समस्तं
सत्यं सद्भोगनित्यं सुखजनसुहृदं सुन्दरं श्रीसमस्तम् ।
सौमङ्गल्यं समग्रं सकलशुभकरं स्वस्तिवाचं समस्तं
सर्वाद्यं सद्विवेकं त्रिपदपदयुगं प्राप्तुमभ्यासमस्तम् ॥२४॥
गायत्रीपद - पञ्च - पञ्चप्रणव -द्वन्द्वं द्विधा सम्पुटं
सृष्ट्यादिक्रम - मन्त्रजाप्यदशकं देवीपदं क्षुत्त्रयम् ।

मन्त्रादिस्थितिकेषु सम्पुटमिदं श्रीमातृकावेष्टितं
वर्णान्त्यादि-विलोम-मन्त्रजपनं संहार-सम्मोहनम् ॥२५॥
भूराद्यं भूर्भुवस्त्रिपद - पदयुतं त्र्यक्षमाद्यन्तयोज्यं
सृष्टि-स्थित्यन्तकार्यं क्रमशिखिसकलं सर्वमन्त्रं प्रशस्तम् ।
सर्वाङ्गं मातृकाणां मनुमयवपुषं मन्त्रयोगं प्रयुक्तं
संहारं क्षादिवर्णं वसुशतगणनं मन्त्रराजं नमामि ॥२६॥
विश्वामित्रमुदाहृतं हितकरं सर्वार्थसिद्धिप्रदं
स्तोत्राणां परमं प्रभातसमये पारायणं नित्यशः ।
वेदानां विधिवादमन्त्रसफलं सिद्धिप्रदं सम्पदां
स सं प्राप्नोत्यपरत्र सर्वसुखदमायुष्यमारोग्यताम् ॥२७॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचिते गायत्री-रहस्ये
विश्वामित्रकृतो गायत्रीस्तवराजः समाप्तः ।

●

गायत्रीमन्त्रसङ्ग्रहः

१ हंसगायत्रीमन्त्रः

ॐ परमहंसाय विद्महे महातत्त्वाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

'ॐ सोऽहं सोऽहं परोरजसे सावदोम्' इति हंसमन्त्रः।

२ ब्रह्मगायत्रीमन्त्रः

ॐ वेदात्मने च विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्।

३ सरस्वतीगायत्रीमन्त्रः

ॐ ऐं वाग्देव्यै च विद्महे कामराजाय धीमहि। तन्नो देवी प्रचोदयात्।

४ विष्णुगायत्रीमन्त्रः

१. ॐ श्रीविष्णवे च विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

२. ॐ त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे आत्मारामाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

३. ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

५ लक्ष्मीगायत्रीमन्त्रः

ॐ महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।

'ॐ क्लीं श्रीं श्रीं लक्ष्मीदेव्यै नमः' इति लक्ष्मीमन्त्रः।

६ नारायणगायत्रीमन्त्रः

ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो नारायणः प्रचोदयात्।

'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीमन्नारायणाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

७ रामगायत्रीमन्त्रः

ॐ दाशरथये विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात्।

'ॐ ह्रां ह्रीं रां रामाय नमः' इति राममूलमन्त्रः।

'ॐ जानकीकान्त तारक रां रामाय नमः' इति रामतारकमन्त्रः।

८ जानकीगायत्रीमन्त्रः

ॐ जनकजायै विद्महे रामप्रियायै धीमहि। तन्नः सीता प्रचोदयात।

'ॐ सीं सीतायै नमः' इति मूलमन्त्रः।

९ लक्ष्मणगायत्रीमन्त्रः

ॐ दाशरथये विद्महे अलबेलाय धीमहि। तन्नो-लक्ष्मणः प्रचोदयात्।

'ॐ ह्रां ह्रीं रां रां लं लक्ष्मणाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

१० हनुमद्गायत्रीमन्त्रः

ॐ अञ्जनीजाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि। तन्नो हनुमान् प्रचोदयात्।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः' इति मूलमन्त्रः।

११. गरुडगायत्रीमन्त्रः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सुपर्णपर्णाय धीमहि। तन्नो गरुडः प्रचोदयात्।

'ॐ ग्रां ग्रीं ग्रूं ग्रैं ग्रौं ग्रः' इति मूलमन्त्रः।

१२. कृष्णगायत्रीमन्त्रः

ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नः कृष्णः प्रचोदयात्।

'ॐ क्लीं कृष्णाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

१३. गोपालगायत्रीमन्त्रः

ॐ गोपालाय विद्महे गोपीजनवल्लभाय धीमहि। तन्नो गोपालः प्रचोदयात्।

'ॐ गोपालाय गोचराय वंशशब्दाय नमो नमः' इति मूलमन्त्रः।

१४. राधिकागायत्रीमन्त्रः

ॐ वृषभानुजायै विद्महे कृष्णप्रियायै धीमहि। तन्नो राधिका प्रचोदयात्।

'ॐ रां राधिकायै नमः' इति मूलमन्त्रः।

१५. परशुरामगायत्रीमन्त्रः

'ॐ जामदग्न्याय विद्महे महावीराय धीमहि। तन्नः परशुरामः प्रचोदयात्।

'ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशुहस्ताय नमः' इति मूलमन्त्रः।

१६. नृसिंहगायत्रीमन्त्रः

१. उग्रनृसिंहाय विद्महे वज्रनखाय धीमहि। तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात्।

२. वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि। तन्नो नारसिंहः प्रचोदयात्।

'ॐ नृं नृं नृं नृसिंहाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

१७. हयग्रीवगायत्रीमन्त्रः

ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

१८. शिवगायत्रीमन्त्रः

ॐ महादेवाय विद्महे रुद्रमूर्तये धीमहि। तन्नः शिवः प्रचोदयात्।

'ॐ सं सं सं ह्रौं ह्रौं ह्रौं ॐ शिवाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

१९. रुद्रगायत्रीमन्त्रः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

२०. दक्षिणामूर्तिगायत्रीमन्त्रः

ॐ दक्षिणामूर्तये विद्महे ध्यानस्थाय धीमहि। तन्नो धीशः प्रचोदयात्।

२१. गौरीगायत्रीमन्त्रः

ॐ सुभगायै च विद्महे काममालायै धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्

'ॐ क्लीं ॐ गौं गौरीभ्यो नमः' इति मूलमन्त्रः।

२२. गणेशगायत्रीमन्त्रः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।

२३. षण्मुखगायत्रीमन्त्रः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महासेनाय धीमहि। तन्नः षण्मुखः प्रचोदयात्।

२४. नन्दीगायत्रीमन्त्रः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो नन्दिः प्रचोदयात्।

२५. सूर्यगायत्रीमन्त्रः

ॐ भास्कराय विद्महे महातेजाय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ विष्णुतेजसे ज्वालामणिकुण्डलाय स्वाहा' इति मूलमन्त्रः।

२६. चन्द्रगायत्रीमन्त्रः

ॐ क्षीरपुत्राय विद्महे अमृततत्त्वाय धीमहि। तन्नश्चन्द्रः प्रचोदयात्।

'ॐ चन्द्र स्वां चन्द्रेण क्रीणामि शुक्रेण मृतममृतेन गोरम्भोरते चान्द्राणि' इति मूलमन्त्रः।

२७. भौमगायत्रीमन्त्रः

ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि। तन्नो भौमः प्रचोदयात्।

'ॐ अङ्गारकाय नमः' इति मूलमन्त्रः।

२८. बुधगायत्रीमन्त्रः

ॐ सौम्यरूपाय विद्महे बाणेशाय धीमहि। तन्नो बुधः प्रचोदयात्।

२९. गुरुगायत्रीमन्त्रः

ॐ आङ्गिरसाय विद्महे दण्डायुधाय धीमहि । तन्नो जीवः प्रचोदयात् ।

अथवा

ॐ गुरुदेवाय विद्महे परब्रह्माय धीमहि । तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ।

'ॐ हुं सं क्रां सौः गुरुदेवपरमात्मने नमः' इति मूलमन्त्रः ।

३०. शुक्रगायत्रीमन्त्रः

ॐ भृगुसुताय विद्महे दिव्यदेहाय धीमहि । तन्नः शुक्रः प्रचोदयात् ।

३१. शनिगायत्रीमन्त्रः

ॐ सूर्यपुत्राय विद्महे मृत्युरूपाय धीमहि । तन्नः सौरिः प्रचोदयात् ।

३२. राहुगायत्रीमन्त्रः

ॐ शिरोरूपाय विद्महे अमृतेशाय धीमहि । तन्नः राहुः प्रचोदयात् ।

३३. केतुगायत्रीमन्त्रः

ॐ गदाहस्ताय विद्महे अमृतेशाय धीमहि । तन्नः केतुः प्रचोदयात् ।

३४. यन्त्रगायत्रीमन्त्रः

यन्त्रराजाय विद्महे वरप्रदाय धीमहि । तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात् ।

३५. पृथ्वीगायत्रीमन्त्रः

ॐ पृथ्वीदेव्यै च विद्महे सहस्रमूर्त्यै च धीमहि । तन्नो मही प्रचोदयात् ।

'ॐ भूरसि भूतादिरसि विश्वस्य धाया भुवनस्य माहिर्ठ-सीनमः' इति मूलमन्त्रः ।

३६. अग्निगायत्रीमन्त्रः

ॐ महाज्वालाय विद्महे अग्निमध्याय धीमहि । तन्नोऽग्निः प्रचोदयात् ।

'ॐ अं अं अग्नये नमः' इति मूलमन्त्रः ।

३७. जलगायत्रीमन्त्रः

ॐ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि । तन्नस्त्वम्बु प्रचोदयात् ।

'ॐ जं जं ॐ वं वं ॐ लं लं जलबिम्बाय नमः' इति मूलमन्त्रः ।

३८. आकाशगायत्रीमन्त्रः

ॐ आकाशाय च विद्महे नमोदेवाय धीमहि । तन्नो गगनं प्रचोदयात् ।

'ॐ गं गं ॐ नं नं ॐ आं आं ॐ गगनाय नमः' इति मूलमन्त्रः ।

३९. वायुगायत्रीमन्त्रः

ॐ पवनपुरुषाय विद्महे सहस्रमूर्तये च धीमहि । तन्नो वायुः प्रचोदयात् ।

'ॐ पं पं ॐ वां वां ॐ युं युं ॐ पवनपुरुषाय नमः' इति मूलमन्त्रः ।

४०. इन्द्रगायत्रीमन्त्रः

'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे सहस्राक्षाय धीमहि । तन्न इन्द्रः प्रचोदयात् ।

४१. कामगायत्रीमन्त्रः

ॐ मन्मथेशाय विद्महे कामदेवाय धीमहि । तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात् ।

४२. तुलसीगायत्रीमन्त्रः

ॐ श्रीत्रिपुराय विद्महे तुलसीपत्राय धीमहि । तन्नस्तुलसी प्रचोदयात् ।

४३. देवीगायत्रीमन्त्रः

ॐ देव्यै ब्रह्माण्यै विद्महे महाशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

'ॐ ह्रां श्रीं क्लीं नमः' इति मूलमन्त्रः ।

४४. शक्तिगायत्रीमन्त्रः

ॐ सर्वसम्मोहिन्यै विद्महे विश्वजनन्य धीमहि । तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ।

४५. दुर्गागायत्रीमन्त्रः

ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि । तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।

४६. जयदुर्गागायत्रीमन्त्रः

ॐ नारायण्यै च विद्महे दुर्गायै च धीमहि । तन्नो गौरी प्रचोदयात् ।

४७. अन्नपूर्णागायत्रीमन्त्रः

ॐ भगवत्यै च विद्महे माहेश्वर्यै च धीमहि । तन्नोऽन्नपूर्णा प्रचोदयात् ।

४८. कालीगायत्रीमन्त्रः

ॐ कालिकायै च विद्महे श्मशानवासिन्यै धीमहि । तन्नोऽघोरा प्रचोदयात् ।

४९. तारागायत्रीमन्त्रः

ॐ तारायै च विद्महे महोग्रायै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५०. षोडशी (त्रिपुरसुन्दरी) गायत्रीमन्त्रः

ॐ ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि । सौस्तन्नः क्लिन्ने प्रचोदयात् ।

५१. बालागायत्रीमन्त्रः

ॐ ऐं वागीश्वर्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ।

५२. भुवनेश्वरीगायत्रीमन्त्रः

ॐ नारायण्यै च विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५३. भैरवीगायत्रीमन्त्रः

ॐ त्रिपुरायै च विद्महे भैरव्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५४. छिन्नमस्तागायत्रीमन्त्रः

ॐ वैरोचन्यै च विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५५. धूमावतीगायत्रीमन्त्रः

ॐ धूमावत्यै च विद्महे संहारिण्यै च धीमहि । तन्नो धूमा प्रचोदयात् ।

५६. बगलामुखीगायत्रीमन्त्रः

ॐ बगलामुख्यै च विद्महे स्तम्भिन्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५७. मातङ्गीगायत्रीमन्त्रः

ॐ मातङ्ग्यै च विद्महे उच्छिष्टचाण्डाल्यै च धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५८. महिषमर्दिनीगायत्रीमन्त्रः

ॐ महिषमर्दिन्यै विद्महे दुर्गायै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

५९. त्वरितागायत्रीमन्त्रः

ॐ त्वरितादेव्यै विद्महे महानित्यायै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

६०. गङ्गागायत्रीमन्त्रः

ॐ भगीरथ्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि । तन्नो गङ्गा प्रचोदयात् ।

६१. वेदाधिकाररहितानां गायत्रीमन्त्रः

ह्रीं यो देवः सविताऽस्माकं मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।
प्रचोदयति तत् भर्गो वरेण्यं समुपास्महे ॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते गायत्री-रहस्ये एकषष्टि-देवी-देवतानां गायत्रीमन्त्रसंग्रहः समाप्तः ।

गायत्रीतन्त्रम्

गायत्रीध्यानम्

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवल-च्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थ-वर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदा-भयाङ्कुश-कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दुयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ।
श्वेतवर्णा समुद्दिष्टा कौशेय-वसना तथा ।
श्वेतैर्विलेपनैः पुष्पैरलङ्कारैश्च भूषिता ॥
आदित्य-मण्डलस्था च ब्रह्मलोकगताऽथवा ।
अक्षसूत्रधरा देवी पद्मासनगता शुभा ॥

प्रातःकाले ब्रह्मरूपा-गायत्रीध्यानम्

ब्रह्माणी चतुराननाऽक्षवलया कुम्भस्तनी स्रुक्स्रुवौ
बिभ्राणाऽरुण-कान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका ।
हंसारोहण-केलिरम्बरमणीबिम्बाश्रिता भूतिदा
गायत्री हृदि भाविता भवतु नः सम्पत्समृद्ध्यै सदा ॥

मध्याह्नकाले विष्णुरूपा-गायत्रीध्यानम्

ध्येया सा च सरस्वती भगवती पीताम्बराऽलंकृता
श्यामातन्विजयादिभिः परिलसद्गात्राञ्चिता वैष्णवी ।
तार्क्ष्यस्था मणि-नूपुराङ्ग-दशत-ग्रैवेय-भूषोज्ज्वला
हस्तालम्बित-शङ्ख-चक्र-सुगदा भूत्यै श्रियै चाऽस्तु नः ॥

सायंकाले शिवरूपा-गायत्रीध्यानम्

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा
खट्वाङ्ग-त्रिशिखाक्ष-सूत्र-वलया ध्येया यजूरूपिणी ।

विद्युद्दाम-जटा-कलाप-विलसद्-बालेन्दु-मौलिर्मुदा
सावित्री वृषवाहना शिततनूर्भूत्यै श्रियै चाऽस्तु नः ॥

मन्त्रोद्धारः

प्रणवं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवःस्वस्तथा परम् ।
गायत्रीं प्रणवं चाऽन्ते जप एष उदाहृतः ॥

गायत्रीमन्त्रः

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।

मन्त्रोद्धारः

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य षट्कोणं तद् बहिर्न्यसेत् ।
वृत्तं चाऽष्टदलं पद्मं तद्बहिश्चतुरस्रकम् ॥
चतुर्द्वारं समायुक्तं गायत्री-यन्त्रमीरितम् ॥

पुरश्चरणम्

उक्तलक्ष-विधानेन कृत्वा विप्रा जितेन्द्रियाः ।
क्षीरौदनं तिलं दूर्वां क्षीरद्रुम-समिद्-द्रुमान् ॥
अष्टद्रव्येण च पृथक् सहस्रत्रितयं हुनेत् ॥

माला-प्रार्थना

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ! ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥१॥
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥२॥

जपादौ चतुर्विंशतिमुद्राः

सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा ।
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पञ्चमुखं तथा ॥१॥

षण्मुखाऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा।
शकटं यम-पाशं च ग्रथितं चोन्मुखोन्मुखम् ॥ २ ॥
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम्।
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा।
एता मुद्राश्चतुर्विंशज्जपादौ परिकीर्तिताः ॥ ३ ॥

जपान्तेऽष्टौ मुद्राः

सुरभिर्ज्ञान-वैराग्ये योनिः कूर्मोऽथ पङ्कजम्।
लिङ्गं निर्वाणकं चैव जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत् ॥

इति गायत्री-रहस्ये गायत्रीतन्त्र समाप्तम्

●

'देवरिया'ऽभिध-मण्डले सुविदिते विद्वज्जने सेविते।
राज्ये क्षत्रियपालिते 'मझवली' नाम्नि स्वधर्मादृते।
श्री-श्रीकान्तमहामतेः स्वतनुजो मिश्रान्वयाऽलङ्कृति-
र्जातो मज्जनकस्तु सन्तशरणो योऽन्वर्थनामा बुधः ॥१॥
सोऽहं तत्तनयस्तदीय-वचसां सङ्गृह्य सारं पुरो
गायत्रीं सरहस्य-चारु-विवृतिं वेदार्थ-सर्वात्मिकाम्।
बाण-द्व्यभ्र-कराब्द-वर्ष-ससिते वह्नौ तिथौ माधवे
संक्षिप्तां कृतवान् सुसाधकजनाय तुष्यतु वैष्णवी ॥२॥
शिवदत्तस्य मिश्रस्य सावित्रीपदपङ्कजे।
प्रार्थना सर्वलोकानां भूयात् कल्याणहेतवे ॥३॥

इति 'देवरिया'-मण्डलान्तर्गत-'मझवली राज्य'-वास्तव्य-पण्डित-श्रीकान्तमिश्र-शर्म्मणां पौत्रेण सुप्रसिद्ध-कोविदकुलप्रसूत-पण्डितश्रीसन्तशरणमिश्रशर्म्मणां पुत्रेण व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-आचार्य-पण्डितश्रीशिवदत्त-मिश्रशास्त्रिणा विरचितं गायत्री-रहस्यं समाप्तम्।

●

गायत्री(आरती)नीराजनम्

जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम्
त्वञ्चाऽस्मान् संसारात् [२] ह्युद्धर सावित्रि ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥१॥

जननि त्वं गायत्र्याः, सावित्र्या रूपम् [२]
त्वं च सरस्वतिरूपं [२] धत्से बहुरूपम् ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥२॥

त्रिपदां त्रिदशैः सर्वैर्नित्यार्चितचरणाम् [२]
त्रिगुणातीतां वन्दे [२] भवसागरपोताम्
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥३॥

नित्यं द्विजकुलवृन्दैः प्रातर्मध्याह्ने [२]
सायं ध्यानासक्तै [२] रर्घ्यैः कृतपूजाम् ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥४॥

मुक्ता - विद्रुम - हाटक-नील-श्वेतमुखाम् [२]
आसन-सित-पद्मस्थां [२] पद्मासनबद्धाम् ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥५॥

पञ्चमुखीं त्वां वन्दे देवीं गायत्रीम् [२]
शशधर-शेखरबद्धां [२] नयनत्रययुक्ताम् ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥६॥

व्याहृत्यादिर्मातर् ह्यास्ते तव मन्त्रः [२]
पूर्वचतुष्पदयुक्तः [२] विंशतिवर्णयुक्तः ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥ ७ ॥

स्तवनं ते प्रतिमन्त्रं विहितं वेदार्थे [२]
यो यद् ध्यायति मनसा [२] तत्पूर्णं कुरुषे ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥ ८ ॥

वरदं ह्यभयं धत्से जननि ह्यङ्कुशकम् [२]
कशां कपालं रज्जुं [२] कमलद्वयमपि शम् ।
जय देवि जय देवि वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥ ९ ॥

भगवति ते सौन्दर्यं ह्युपमासमतीतम् [२]
त्वच्चरणाम्बुजयुग्मं [२] नमामि बहुबारम् ।
जय देवि, जय देवि, वन्दे गायत्री वन्दे गायत्रीम् ॥१०॥

घृतपूर्णैरेतैस्ते ज्योतिर्मयदीपैः [२]
आरार्तिक्यं कुर्वे [२] शिरसस्त्वाचरणम् ।
जय देवि जय देवि, वन्दे गायत्रीं वन्दे गायत्रीम् ॥११॥

इति गायत्री-रहस्ये गायत्रीनीराजनं समाप्तम् ।

ॐ

गायत्रीबीजसंयुतं

गायत्री-रामायणम्

ध्यानम्—

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे
मध्ये पुष्पकमासने मणिमये वीरासने सुस्थितम् ।
अग्रे वाचयति प्रभञ्जनसुते तत्त्वं मुनिभ्यः परं
व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे श्यामलम् ॥

ॐ तपःस्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम् ।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम् ॥ १ ॥

ध्यान—कल्पवृक्ष के नीचे, बड़े मण्डपवाले, मणिमय सुवर्ण निर्मित, पुष्पक विमान के मध्य, रामचन्द्र के चरणों में वीरासन से स्थित, प्रभंजन सुत हनुमान् जी के आगे समस्त ऋषिवृन्दों के परमतत्त्व भूत इष्ट का व्याख्यान रूप से वाल्मीकि मुनि कर रहे हैं। ऐसे लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न से घिरे हुए, वैदेही सहित, नील कमल के समान श्याममूर्ति वाले, राम का मैं गुणगान करता हूँ।

तपस्वी, ज्ञानियों में श्रेष्ठ, सर्वदा तप एवं वेद स्वाध्याय में रत नारजी से मुनियों में श्रेष्ठ वाल्मीकि मुनि ने प्रश्न किया ॥ १ ॥

सह त्वां राक्षसान् सर्वान् यज्ञघ्नान् रघुनन्दन ।
ऋषिभिः पूजितस्तत्र यथेन्द्रो विजये पुरा ॥ २ ॥
विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा श्रुत्वा जनकभाषितम् ।
वत्स राम ! धनुः पश्य इति राघवमब्रवीत् ॥ ३ ॥
तुष्टावास्य तदा वशं प्रविश्य स विशाम्पतेः ।
शयनीयं नरेन्द्रस्य तदासाद्य व्यतिष्ठत ॥ ४ ॥
वनवासं हि सङ्ख्याय वासांस्याभरणानि च ।
भर्तारमनुगच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरो ददौ ॥ ५ ॥

हे नारद ! यज्ञ को नष्ट करनेवाले, सम्पूर्ण राक्षसों के विनाशक, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम ने समस्त ऋषियों के साथ आपका उसी प्रकार पूजन किया जिस प्रकार पूर्व समय में इन्द्र ने अपने विजय काल में आपका पूजन किया था ॥ २ ॥

जिस समय धर्मात्मा राजर्षि विश्वामित्र ने परम ब्रह्मज्ञानी राजा विदेह (जनक) से इस वृत्तान्त को सुना । उस समय विश्वामित्र ने राम से इस प्रकार कहा कि हे वत्स राम ! इस धनुष की ओर देखो ॥ ३ ॥

जिस समय मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम अपने गृह वैदेही (सीता) सहित पधारे । उस समय कैकेयी द्वारा चौदह वर्ष के वन-वास की आज्ञा प्राप्त कर अपने पिता दशरथ के प्रिय शयन कक्ष में गये । तब अपने पुत्र को देखकर राजा दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुए । तथा चौदह वर्ष की वनवास संख्या युक्त चौदह रत्न एवं वस्त्र सीता को उनके श्वसुर दशरथ ने प्रदान किया ॥ ४-५ ॥

राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतां कुलम् ।
राजा माता पिता चैव राजा हितकरो नृणाम् ॥ ६ ॥
निरीक्ष्य स मुहूर्तं तु ददर्श भरतो गुरुम् ।
उटजे राममासीनं जटामण्डलधारिणम् ॥ ७ ॥
यदि बुद्धिः कृता द्रष्टुमगस्त्यं तं महामुनिम् ।
अद्यैव गमने बुद्धिं रोचयस्व महायशः ॥ ८ ॥
भरतस्याऽऽर्यपुत्रस्य श्वश्रूणां मम च प्रभो ! ।
मृगरूपमिदं व्यक्तं विस्मयं जनयिष्यति ॥ ९ ॥

क्योंकि, शास्त्र विचार से राजा ही सत्य एवं सभी धर्मों के धर्म-रूप है। उसी प्रकार राजा ही समस्त कुलीनों के कुलरूप तथा सभी प्रजाओं के माता-पिता रूप भी वही हैं। और अपनी प्रजा के कल्याण करनेवाले भी वही हैं ॥ ६ ॥

जिस समय भरत ने राम के वनवास का समाचार सुना, उस समय क्षणभर रुककर भरत ने अपने गुरु विश्वामित्र की ओर देखा। तब विश्वामित्र ने भरत से इस प्रकार कहा कि यदि तुम्हें घनघोर जंगल में जटा-जूट युक्त राम को, ॥७॥ देखने की इच्छा हो तो महामुनि यशस्वी अगस्त्य मुनि के आश्रम में इसी समय जाने की तैयारी करो ॥ ८ ॥

राम की आज्ञा से जब भरत अपनी राजधानी अयोध्या लौट आये। तब अगस्त्य मुनि ने भविष्यवाणी के रूप में राम से इस प्रकार कहा कि हे प्रभो ! आर्य-पुत्र भरत आपके श्वसुर राजा जनक तथा मुझे भी यह सुवर्ण मृग अत्यधिक आश्चर्यकारी मालूम पड़ेगा। क्योंकि सुवर्ण का मृग ही आश्चर्यकारक है ॥ ९ ॥

गच्छ शीघ्रमितो राम ! सुग्रीवं तं महाबलम् ।
वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाऽद्य राघव ! ॥१०॥
देशकालौ भजस्वाऽद्य क्षममाणः प्रियाऽप्रिये ।
सुख-दुःखसहः काले सुग्रीववशगो भव ॥११॥
वन्द्यास्ते तु तपःसिद्धास्तपसा वीतकल्मषाः ।
प्रष्टव्या चाऽपि सीतायाः प्रवृत्तिर्विनयान्वितैः ॥१२॥

जब राम ने मायामृग मारीच का वध किया तब मरते-मरते भी उस दुष्ट मारीच ने 'हा लक्ष्मण ! हा लक्ष्मण !' इस प्रकार राम की आवाज में लक्ष्मण ने जब सुना, उसी समय लक्ष्मण सीता को पर्णकुटी में अकेली छोड़ राम की सहायता के लिए दौड़े। तब दुष्ट रावण के सीता-हरण कर लेने पर अपनी पर्णकुटी में लौट आये। सीता को वहाँ न देखकर विलाप करने लगे। उस समय महामुनि ने कहा— हे राम ! आप यहाँ से शीघ्र किष्किन्धा की ओर जाइए। और अतिशीघ्र वहाँ जाकर महाबलशाली सुग्रीव से मित्रता कीजिए ॥१०॥

पुनः अगस्त्यमुनि ने राम से इस प्रकार कहा कि हे राम ! आप यद्यपि सर्वान्तर्यामी हैं तथापि इस समय देश-काल के अनुसार सुख-दुःखों को सहन करते हुए सुग्रीव के साथ मित्रता करें। कारण कि, समय के अनुसार सुख-दुःखों का सहन करना ही पड़ता है ॥११॥

अहह ! वे वीतरागी सिद्ध तपस्वी जो कि निरन्तर आपका ही मानसिक ध्यान किया करते हैं फिर भी आपका दर्शन योग-दृष्टि से भी नहीं कर पाते हैं। परन्तु इस समय वे तपस्वीगण आपको साक्षात् अपने समक्ष देखकर कृतकृत्य हो जाते हैं। हे राम ! ऐसे तपस्वी लोग समस्त प्राणिमात्र के लिए वन्दनीय हैं। अतः उनसे भी आप नम्र होकर सीता का समाचार पूछें ॥१२॥

स निर्जित्य पुरीं श्रेष्ठां लङ्कां तां कामरूपिणीम् ।
विक्रमेण महातेजा हनूमान् कपिसत्तमः ॥१३॥
धन्या देवाः स-गन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।
मम पश्यन्ति ये नाथं रामं राजीवलोचनम् ॥१४॥
मङ्गलाभिमुखी तस्य सा तदासीन्महाकपेः ।
उपतस्थे विशालाक्षी प्रयता हव्यवाहनम् ॥१५॥
हितं महार्थं मृदुहेत संहितं
व्यतीत कालायति सम्प्रति क्षमम् ।

तदनन्तर सुग्रीव के आदेशानुसार कपियों (वानरों) में सर्वश्रेष्ठ महातेजस्वी पवनसुत हनुमान् अपने अतुल पराक्रम से माया रूप उस श्रेष्ठ लंका नगरी पर निश्चय ही विजय प्राप्त करेंगे । क्योंकि, आपके चरण-कमल के सेवन से वानर होते हुए भी लंकाधिपति रावण का मान मर्दन करें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ॥१३॥

हे राम ! वे देवगण, अप्सराओं सहित गन्धर्व समूह, समस्त सिद्ध, ऋषि-महर्षि कमल नेत्रवाले ध्यानैकगम्य मेरे इष्टदेव मर्यादा पुरुषोत्तम राम का साक्षात् इन्हीं नेत्रों से दर्शन करते हैं। अतः वे सभी अपने पूर्व संचित पुण्य-प्रताप से आपके दर्शन के कारण धन्य हैं ॥१४॥

वीर-श्रेष्ठ हनुमान् ने लंका में जाकर जिस समय एक मात्र परम धार्मिक लंकेश्वरानुज विभीषण का घर छोड़कर समस्त लंका दहन कर दिया अर्थात् अग्निदेव को प्रसन्न किया, उस समय महाकपि हनुमान् के सम्मुख पतिव्रता सती साध्वी सीता उपस्थित हुई ॥१५॥

तत्पश्चात् हनुमान् ने सीताजी से कहा कि माँ ! मुझे बड़ी भूख लगी है। सीता जी की आज्ञा से अशोक वन के समस्त फल खाकर कुछ समय विश्राम करने के बाद अग्निदाहरूपी ज्वर से सन्तप्त

विश्रम्य तद्वाक्यमुपस्थितज्वरः
प्रसङ्गवानुत्तरमेतदब्रवीत् ॥१६॥
धर्मात्मा रक्षसां श्रेष्ठः सम्प्राप्तोऽयं विभीषणः ।
लङ्कैश्वर्यं ध्रुवं श्रीमानयं प्राप्नोत्यकण्टकम् ॥१७॥
यो वज्रपाताशनि - सन्निपातात्
न चुक्षुभे नाऽपि चचाल राजा ।
स रामबाणाभिहतो भृशार्तः
चचाल चापं च मुमोच वीरः ॥१८॥

हितकारी अत्यन्त गुरुतर होते हुए भी मृदु (कोमल) रूप से प्रसंगवश सीता से इस प्रकार कहा कि हे माता, समर्थ रूप आपके पति के लिए तो इस लंका का क्षण मात्र में नष्ट करना असम्भव नहीं है परन्तु आप कुछ समय प्रतीक्षा करें। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम स्वयं लङ्का को विजय कर निश्चित ही आपको ले जायेंगे। इस प्रकार कह कर माता जानकी की चूड़ामणि लेकर समुद्र उल्लंघन करते हुए पुनः राम के पास आकर उनसे माता सीता का समस्त वृत्तान्त सुनाया ॥१६॥

उसके बाद अपने परम धार्मिक चार मन्त्रियों के साथ राक्षसों में श्रेष्ठ धर्मात्मा विभीषण रावण से प्रताड़ित होकर राम की शरण में आये। उस समय समस्त कपियों ने राम से कहा कि हे नाथ, वे विभीषण ही लंकाधिपति रावण की मृत्यु के अनन्तर लङ्का के स्वामी होंगे ॥१७॥

जो लङ्काधिपति रावण दधीचिमुनि के हड्डी द्वारा निर्मित वज्र के प्रहार से भी न तो विचलित होता था और न उक्त वज्र उसका कुछ अनिष्ट ही कर सकता था। राम के सफल बाणों से युद्धस्थल में विभीषण द्वारा निर्दिष्ट रावणोदरस्थ अमृत कुण्ड के शोषण होने पर अत्यन्त तड़पता हुआ रावण ने राम के सामने ही अपने प्राणों का परित्याग किया ॥१८॥

यस्य विक्रममासाद्य राक्षसा निधनं गताः ।
तं मन्ये राघवं वीरं नारायणमनामयम् ॥१९॥
न ते ददृशिरे रामं दहन्तमरिवाहिनीम् ।
मोहिताः परमास्त्रेण गान्धर्वेण महात्मना ॥२०॥
प्रणम्य देवताभ्यश्च ब्राह्मणेभ्यश्च मैथिली ।
बद्धाञ्जलिपुटा चेदं उवाचाऽग्निसमीपतः । २१॥
चालनात् पर्वतस्यैव गणा देवस्य कम्पिताः ।
चचाल पार्वती चाऽपि तदाश्लिष्टा महेश्वरम् ॥२२॥
दाराः पुत्राः पुरं राष्ट्रं भोगाच्छादनभोजनम्
सर्वमेवाविभक्तं नौ भविष्यति हरीश्वर ! ॥२३॥

रावण की मृत्यु के बाद भगवान् राम अदृष्ट होकर गान्धर्वास्त्र द्वारा समस्त सेना को मोहित करते हुए शेष राक्षणगण राम के अतुल पराक्रम को जानकर यम के अतिथि हुए अर्थात् परम लोक को प्राप्त हुए। उसी समय कुछ बचे हुए राक्षसों ने राम को सुख दुःखादि रहित नारायण भगवान् स्वरूप मानने लगे ॥१९-२०॥

पुन: मैथिली (सीता) ने समस्त देवगण, ब्राह्मणों के समक्ष प्रणाम करती हुई अग्नि को साक्षिभूत कर अर्थात् अग्नि में प्रविष्ट होकर उस प्रज्वलित अग्नि में से हाथ जोड़ती हुई प्रकट होकर अपनी पवित्रता का परिचय समस्त प्राणिमात्र के सम्मुख दिया ॥२१॥

उस समय समस्त कैलाशादि पर्वत डगमगाने लगे और शिव के नन्दी, भृङ्गी आदि गण विचलित हुए, साथ ही साथ पार्वती भी अत्यन्त शोक से व्याकुल होकर एकाएक शङ्कर का आलिंगन करने लगीं ॥२२॥

शङ्करजीने कहा—हे हरीश्वर राम ! स्त्री, पुत्र, नगर, राष्ट्र भोग, आच्छादन, भोजन ये सभी हमारे और आपके मध्य एक ही होंगे।

यामेव रात्रिं शत्रुघ्नः पर्णशालामुपाविशत् ।
तामेव रात्रिं सीताऽपि प्रसूता दारकद्वयम् ॥२४॥
इदं रामायणं कृत्स्नं गायत्रीबीजसंयुतम् ।
सकृत् पठनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥२५॥

इति गायत्रीरहस्ये गायत्री-रामायणं सम्पूर्णम् ।

क्योंकि कहा है कि 'शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णुश्च हृदयः शिवः' अर्थात् हम दोनों एक ही स्वरूप हैं ॥२३॥ इस प्रकार लंका में विजय प्राप्त कर भगवान् राम सकुशल अपनी अयोध्या नगरी लौट आये। जिस दिन अपने ननिहाल में स्थित शत्रुघ्न अपनी पर्णशाला में आये। उसी दिन लोकापवाद के भय से निष्कासित जानकी ने महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में लव-कुश नाम के जुड़वा पुत्रों को उत्पन्न किया ॥२४॥

फल-श्रुति—गायत्री बीज नामक इस पचीस-श्लोकी रामायण का जो भक्तगण पाठ करते हैं, उनके पाठ मात्र से ही समस्त पाप स्वतः समूल नष्ट हो जाते हैं ॥२५॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र शास्त्री कृत गायत्री-रामायण को
'शिवदत्ती' हिन्दी टीका समाप्त ।

●

शिव-पंचदशी

जनपद देवरिया मण्डलान्तर्गत 'मझौली' ग्राम है,
जो विश्व-विश्रुत मल्लजन का चिर पुरातन धाम है।
इतिहास बतलाता यहाँ के नृपति ब्राह्मण भक्त थे,
यज्ञादि द्वारा ईश-चरणों में सदा अनुरक्त थे॥ १॥

पुर के अनेकों भाग थे जिनमें सवर्ण स्ववर्ग के,
सुविधा सहित नित लूटते आनन्द मानो स्वर्ग के।
उन विविध वर्णों में विशिष्ट पुनीत कश्यप वंश के,
सद्-विप्र सम्पूजित रहे चिर काल से हरि अंश के॥ २॥

भगवान् पुरुषोत्तम अदिति के गर्भ से संभूत हो,
गौरव दिया अपने पिता कश्यप अदिति के पूत हो।
बलि को मिला पाताल देवों को मिला सुरलोक था,
भगवान् वामन ने मिटाया इन्द्र का चिर शोक था॥ ३॥

ले जन्म प्रभु ने स्वयं कश्यप गोत्र को सम्मान दे,
वरवंश को उज्ज्वल किया था परम पावन मान दे।
कालान्तरों से विज्ञ, गरिमाशील, विद्या के धनी,
इस गोत्र के गौरव-शिरोमणि विप्रजन हैं अग्रणी॥ ४॥

अपनी अखण्ड सुकीर्ति से प्रख्यात जगती में सदा,
सम्पूज्य होते आ रहे सब काल में वे सर्वदा।
उनमें अलौकिक ज्ञान-गरिमा और बुद्धि-विवेक से,
सम्मान्य जो उस राजवंश सभासदों में एक थे॥ ५॥

मेरे पितामह पूज्यवर 'श्रीकान्त मिश्र' उदार थे,
आस्तिक-जनों में अग्रणी उत्कृष्ट विमल विचार थे।
दो तनय उनके 'सन्तशरण' व 'सत्यनारायण' रहे,
विद्या, विवेक, विनीत-अतिशय शील पारायण रहे॥ ६॥

अग्रज सुहृद् 'श्री सन्तशरण' विशिष्ट सद्-व्यवहार से,
सम्पूज्य थे वे सर्व-प्रियता के सुलभ सत्कार से।
आत्मज उन्हीं के हम हुए दो सौम्य सुन्दर वेश के,
जननी 'जयन्ती' की कृपा के पात्र स्नेह विशेष के ॥ ७ ॥

अग्रज हमारे सदय पण्डित 'जगन्नाथ' प्रसिद्ध थे,
जो चार पुत्रों के सहित सुविचार उत्कट सिद्ध थे।
'रामावतार' समेत शिष्टाचार चारु चरित्र से,
सम्मान्य लोकोत्तर गुणों से मान पा सद्मित्र से ॥ ८ ॥

'शिवदत्त' मैं उनका अनुज चिर भारती का दास हूँ,
रखता निरन्तर प्रेरणा-वश धर्म में विश्वास हूँ।
सद्ग्रन्थ लेखन ही व्यसन जीवन परिधि के बीच है,
सम्प्राप्त कर मातेश्वरी के चरण-रज का कीच है ॥ ९ ॥

रुचि-रंजनी, श्रुति धर्म-सम्मत, लोकहित की दृष्टि से,
स्वान्तः सुखों के साथ माँ के करुण कोमल वृष्टि से।
सद्-प्रेरणा पाकर निरन्तर लेखनी चलती सदा,
जो भूरि भावों से भरी आनन्द वर्द्धति सर्वदा ॥१०॥

अबतक शताधिक ग्रन्थ-रत्नों से स्व पाठक वृन्द को,
कृतकार्य हूँ रुचि धर्म-पथ में भी बढ़ा आनन्द को।
समवाय सेवा-व्रत विमल सद्ग्रन्थ सम्मत धर्म के,
व्यवसाय अपना बन गया है एकमात्र सुकर्म के ॥११॥

दो पुत्रियाँ सौभाग्य शीला, स्नेह की प्रति मूर्ति हैं,
जो उभय कुल की लाज-मर्यादा प्रतिष्ठा पूर्ति हैं।
इनमें परम विदुषी सुशीला, शान्त 'सावित्री' भली,
सद्वर विवेकी 'सत्यव्रत जी' को समर्पित निश्छली ॥१२॥

'पुष्पा' कनिष्ठा कलित कर्मों सहित गेह उजागरी,
श्री वर 'रमेश' दिनेश की परिपालिका गुण आगरी।

स्वजनों सहित सन्तान सेवा साधना सद्धर्म में-
रहतीं निरत सब काल वे गृहिणी सुलभ सत्कर्म में ॥१३॥
विश्वेश की अनुपम कृपा, माँ अन्नपूर्णा की दया,
पाकर अबाधित रूप से सद्ग्रन्थ लिखता हूँ नया।
है देन उनकी ही उन्हीं को यह समर्पित आज है,
अच्छा-बुरा जो कुछ बना है यह उन्हीं की लाज है ॥१४॥
सहृदय जनों के हाथ यह 'शिवदत्त' शुभप्रद फूल है,
अघराशि-नाशक उर-प्रकाशक दिव्य गुण का मूल है।
विश्वास है, समुदार पाठक-वृन्द के सद्भाव से,
होगा समादृत ग्रन्थ यह उनके मनन से चाव से ॥१५॥

इति शिव-पंचदशी समाप्त।

आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्री रचित

गायत्री-चालीसा

दोहा

मातु चरण में नाइ सिर, कथा कहउँ चालीस।
पढ़े सुने पूजन किये, होवे सब अघ खीस॥

चौपाई

जय जय मातेश्वरि गायत्री। सकल विश्व पालन लय कर्त्री॥
श्वेत पद्म सम नेत्र तुम्हारा। अस्तुति करहिं देव-मुनि सारा॥
कोटि सूर सम कान्ति तुम्हारा। तव महिमा है अपरम्पारा॥
शंख चक्र कर में तुम धारा। शोभे गल बिच मुक्ताहारा॥
तीन नेत्र तव त्रिपद सुवेशा। रूप न कहि सक शारद शेषा॥
प्रातः सायं अरु मध्याना। मन में लावै तुम्हरो ध्याना॥
प्रातः ब्रह्मस्वरूपिणि बाला। रुद्राक्षहिं की है गल माला॥
हाथ कमण्डलु हंस सवारी। देखि रूप मोहै नर-नारी॥
मध्यानहि में विष्णु-स्वरूपा। सब जग पालक सृष्टि अनूपा॥
ताही समय गरुड़ को वाहन। अभय करहु सुर-नर मुनि देवन॥
युवती रूप तुम्हारो तबहीं। वेद पुराण कहत हैं सबहीं॥
शिवरूपहिं तुम सायंकाला। कर त्रिशूल अरु उन्नत भाला॥
वृद्धा वयस तुम्हारो जानै। शिवरूपिणी तुम्हें तब मानै॥
वाहन है तव वृषभ तुम्हारा। संतत पालहु सब संसारा॥
पंचानन दश भुज अवतारा। वर्णन करत सकल संसारा॥
जो यह रूप त्रिकालहिं ध्यावै। करि पूजा नित सीस नवावै॥
जाप करै मन नितही नेमा। उर में लावै तव पद प्रेमा॥
तेहिकर होय परम कल्याना। सत्य वचन यह मृषा न आना॥

पूजन जाप विविध बहु रूपा । तदपि कहउँ मैं मति अनुरूपा ॥
ध्यान कर आवाहन कीजै । आसन पाद्य अर्घ्य तब दीजै ॥
पंचामृत अस्नान करावै । गन्ध लगाइ वस्त्र पहिरावै ॥
कुंकुम अक्षत फूल चढ़ावै । धूप दीप नैवेद्य दिखावै ॥
ऋतुफल पान सुपारी देवै । प्रेम-सहित तव चरणन सेवै ॥
करै आरती तव मन लाई । जासों सब विधि कष्ट नसाई ॥
हवन करै चौबीस हजारा । मन्त्र उचारै तिल घृत डारा ॥
वाको सकल पाप कट जावै । विद्या बल ऐश्वर्य बढ़ावै ॥
घृत मजीठ मधु फूल पलाशा । हवन किये पूरन हो आशा ॥
हवन करै द्विज कहैं जो कोई । कृपा तुम्हारि अवशि सिध होई ॥
तीन सहस्र बार तव जापा । हरत सकल संसृत परितापा ॥
बार हजार हवन नित कीजै । लोध पुष्प संग गोघृत लीजै ॥
ईति-भीति ताकर सब नाशै । बल बुधि विद्या तेज प्रकाशै ॥
खैर काष्ठ घृत लालहिं चन्दन । चन्द्रग्रहण महँ होमहिं जो जन ॥
रत्नादिक धन पावै सोई । अल्पकाल महँ दुख क्षय होई ॥
घृत युत चम्पक अरु मन्दारा । हवन करै तव बार हजारा ॥
वस्त्रादिक सुख भोगै नाना । कृपा तुम्हारि मिटहिं अज्ञाना ॥
मधु संग सैंधव लवण मिलावै । दश सहस्र तब हवन करावै ॥
ताके वश सब नर अरु नारी । जो होवै तव मातु पुजारी ॥
पुष्प कनेर हवन कर जोई । तन महँ ताके ताप न होई ॥
लक्षहिं एक हवन कर जोई । इच्छित फल पावै नर सोई ॥
कहँ लगि महिमा कहौं तुम्हारी । क्षमहु मातु सब चूक हमारी ॥

दोहा

सन्तशरण को तनय हूँ, शिवदत्त मिश्र सुनाम।
देवरिया मण्डल बसूँ, धाम मझौली ग्राम॥
उन्नीस सौ इकहत्तर सन की, आश्विन शुक्ला मास।
रचित भयउ दशमी तिथी, पूरन हो मम आस॥
इति गायत्री-चालीसा समाप्त।

गायत्री देवी की आरती

जय जय श्री गायत्री माता, शरण तुम्हारी मैं आया॥टेक॥
पालत हरत सृजत सब जगहीं, नहि कोउ भेद तिहारो पाया।श०।
आदि शक्ति सब जग की जननी, सब जीवन्हको तुम उपजाया।श०।
सुर-नर मुनि सब ध्यान लगावैं, श्रुति पुराण सब महिमा गाया।श०।
जो नर तेरी शरण में आवै, लगे कभी नहिं दुःखकी छाया।श०।
प्रेम-सहित जो करैं आरती, ब्यापै नहिं तन में माया॥श०॥

दोहा

गायत्री की आरती पढ़ै, सुनै जो कोय।
विनय है शिवदत्त मिश्र की, सुख-सम्पति सब होय॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र शास्त्री रचित
गायत्री-रहस्य समाप्त।

देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति-कथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥
विधेरज्ञानेन द्रविण - विरहेणा - ऽलसतया
विधेयाऽशक्यत्वात् तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ २ ॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ३ ॥
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि ! द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ४ ॥
परित्यक्ता देवा विविध - विधि - सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर-जननि कं यामि शरणम् ॥ ५ ॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली - भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणि-ग्रहण-परिपाटी-फलमिदम् ॥ ७ ॥
न मोक्षस्याऽऽकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥
नाऽऽराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्ष - चिन्तन - परैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब ! परं तवैव ॥ ९ ॥
आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥
जगदम्ब ! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।
अपराध-परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥
मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि ! यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रं समाप्तम् ।

देव्यपराधक्षमापनम्

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ! ॥ १ ॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ! ॥ २ ॥
यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्प फलं जलम् ।
निवेदितं च नैवेद्यं तद् गृहाणाऽनुकम्पया ॥ ३ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ! ।
यत्पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ४ ॥
अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् ।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ५ ॥
अज्ञानाद् विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ६ ॥
कामेश्वरि ! जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे ।
गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ७ ॥
गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्रयमेव च ।
आगता सुखसम्पत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥ ८ ॥

यदत्र पाठे जगदम्बिके ! मया
विसर्ग - बिन्द्वक्षर-हीनमीरितम् ।
तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः
सङ्कल्पसिद्धिश्च सदैव जायताम् ॥ ९ ॥

मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं
साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन् ।
तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे !
त्वत्प्रसादात् प्रसीद ॥१०॥

यस्याऽर्थं पठितं स्तोत्रं तवेदं शङ्करप्रिये ! ।
तस्य देहस्य गेहस्य शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥११॥

इति देव्यपराधक्षमापनं समाप्तम् ।

आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री कृत

हमारे अनुपम प्रकाशन

दुर्गार्चन-पद्धति—(दुर्गा-रहस्य)—प्रस्तावना, हिन्दी अनुवाद, दुर्गापूजा-पद्धति एवं उपासना सहित।

इसमें : गणेशाम्बिका पूजन, कलश-पूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, नान्दी श्राद्ध, षोडशोपचार दुर्गापूजन से लेकर उत्तर पूजन पर्यन्त, आरती, मन्त्र-पुष्पांजलि, पंचभू-संस्कार आदि हवनान्त सभी विषय प्रामाणिक एवं महत्त्वपूर्ण दिये गये हैं। इसमें दुर्गा-सप्तशती, शतचण्डी-सहस्र-चण्डी-लक्षचण्डी प्रयोग, हवन-विधान, सम्पुट-विधान तथा दुर्गा-सप्तशती पाठ-विधि आदि विषय भी दे देने से ग्रन्थ की उपयोगिता अत्यधिक बढ़ गयी है। ऐसी पुस्तक आज तक अन्यत्र कहीं से नहीं छपी थी। मूल्य : ३२.००

बृहत्स्तोत्ररत्नाकर—संशोधित संस्करण। स्तोत्र सं० ४४२।

इसमें स्तोत्र-पाठ-विधि तथा आधुनिक शैली में संशोधन-सम्पादन पूर्वक सभी देवी-देवताओं के प्राचीन एवं नवीन ४४२ स्तोत्र दिये गये हैं। स्तोत्र-संग्रह की ऐसी क्रमबद्ध पुस्तक आज तक अन्यत्र कहीं से नहीं प्रकाशित हुई थी। मूल्य २०.००

दुर्गासप्तशती—१६ पेजी, किताबी, भा. टी. सहित।

आधुनिक शैली में विशुद्ध संशोधन-सम्पादन, पाठक वर्ग के पाठ-सुविधाओं को ध्यान में रखकर, मोटे अक्षर में, प्रत्येक श्लोकों को पृथक्-पृथक् रूप में, परिमार्जित हिन्दी टीका सहित, सांगोपांग अनेक विषयों के साथ प्रस्तुत पुस्तक तैयार की गयी है। इसमें सप्तशती द्वारा प्रश्नोत्तर ज्ञान, षोडशोपचार से दुर्गा-पूजा-पद्धति; दुर्गा काम्यप्रयोग-विधि, शतचण्डी प्रयोग, दुर्गा हवन-प्रयोग एवं सिद्ध-सम्पुटित मन्त्र विधान आदि अनेक विषय दिये गये हैं। मूल्य १२.००

दुर्गासप्तशती—३२ पेजी, सजिल्द, मूलमात्र, गुटका।

इसमें दुर्गा-काम्य प्रयोग विधि, शतचण्डी विधि, दुर्गा द्वात्रिंशन्नाम-माला, सप्तश्लोकी दुर्गा, दुर्गाष्टोत्तर शतनाम एवं सरस्वती कवच आदि विषय भी दिये गये हैं। दुर्गासप्तशती के नित्य पाठ करने वालों के लिए यह संस्करण बहुत ही उपयोगी है। मूल्य ६.००

हनुमद्-रहस्य

हनुमत्पंचांग-हनुमदुपासना सहित

रचयिता

आचार्य पं० श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री

इसमें 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका के साथ हनुमत् जीवन-चरित, हनुमत्पंचांग, हनुमत्सहस्रनामावली, शत्रुंजय हनुमत्स्तोत्र, हनुमदष्टक स्तोत्र, हनुमत्पंचरत्न स्तोत्र, संकष्टमोचन स्तोत्र, हनुमदुपनिषद्, हनुमत्कल्प, हनुमत्पूजापद्धति, हनुमद्-व्रतोद्यापन विधि, व्रत-कथा, लक्षप्रदक्षिणा विधान, दीपदानविधि, अनुष्ठान-विधान, हनुमत्तन्त्र, चालीसा, आरती आदि हनुमत्साहित्य-सम्बन्धी सभी विषय दिये गये हैं। आरम्भ में विस्तृत भूमिका, हनुमत्पूजा विधि, हनुमद्यन्त्र तथा हनुमान् जी का भव्य रंगीन चित्र है। मूल्य : ६.००

•